वेदोक्त कर्मकाण्ड दर्पण

(HANDBOOK OF VEDIC CEREMONIES)

वेदोक्त
पञ्च महायज्ञ
बृहद यज्ञ/सत्संग
पर्वों एवं अनेकानेक
सामाजिक पद्धतियों
का अपूर्व संकलन

आदित्य प्रकाशन

गुड़गाँव/नई दिल्ली

मातुश्री धनदेवी केशवराम धर्मार्थ वैदिक ट्रस्ट
धन कुटीर, (१००)/१३० भूड़, बरेली-२४३००३ (उ०प्र०)
दूरभाष : ०५८१-५४७४०८
द्वारा प्रकाशित

वितरक : **विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द**
४४०८, नई सड़क, दिल्ली-११० ००६
दूरभाष : ३९१४९४५, ३९७७२१६
E-mail: ajayarya@ndb.vsnl.net.in
Web. : www.vedicbooks.com

प्रकाशन सहयोग: **आदित्य प्रकाशन**
१. २३/१२३ (ऊपरी तल) गुड़गाँव (हरयाणा)-१२२०१५
दूरभाष : ९८१०५-५६५१६
२. बी-१२८/१, ईस्ट ऑफ कैलाश, नई दिल्ली-११० ०६५
दूरभाष : ०११-६३९१०७७

सम्पादन : **म० गोपाल स्वामी सरस्वती**
सहयोग **आर्य वानप्रस्थाश्रम,**
बी-६९, सेक्टर ३३, आर्यसमाज, नोएडा,
गौतमबुद्ध नगर-२०१३०१ (उ०प्र०)
दूरभाष : ९८१०३-२९२५५

सहयोग राशि : INR 80/- U.S.$ 4/-
ISBN : 81-7077-047-5
प्रथम संस्करण : अप्रैल, २००२ ई० विक्रमी सं० २०५९ (१००० प्रतियाँ)

शब्द संयोजन एवं मुद्रण : **भगवती लेज़र प्रिंट्स,**
४६/५, कम्युनिटी सेण्टर, ईस्ट ऑफ कैलाश,
नई दिल्ली-११००६५
दूरभाष : ०११-६४१४३५९

ओ३म्

वेदोक्त कर्मकाण्ड दर्पण

ओ३म्

प्रेमोपहार

प्राक्कथन

मातुश्री धनदेवी केशवराम धर्मार्थ वैदिक ट्रस्ट (पंजीकृत) की स्थापना हमारे आदरणीय श्री गोपाल शरण जी [सेवा निवृत्त महाप्रबन्धक, आई०एफ०सी०आई०लि० (IFCI Ltd.) तथा भूतपूर्व संस्थापक-कार्यपालक निदेशक, श्रम विकास संस्थान, भारत (ILD-India) जयपुर] ने अपनी माता स्व० श्रीमती धनदेवी (१९०५-१९९०) तथा पिता स्व० श्री केशवराम जी (१८९६-१९५४) की पुण्य स्मृति में एक ट्रस्ट डीड के अधीन महर्षि दयानन्द सरस्वती के १७५वें जन्मदिवस पर ११.२.१९९९ को की थी। इस पुस्तक के आरम्भ में स्व० श्री केशवराम जी तथा स्व० माताश्री धनदेवी जी, दोनों का संक्षिप्त जीवन-वृत्त भी ट्रस्ट ने देने का परिश्रम किया है। अपने शैशवकाल से ही ट्रस्ट, अपने सीमित साधनों के बावजूद, वेदविद्याओं, वैदिक जीवन दर्शन, वैदिक उपासना पद्धति और वैदिक संस्कृति को जन-जन में प्रतिष्ठित करने तथा वेद-सेवकों को सम्मानित करने का प्रयास करता रहा है।

अपने उद्देश्यों के अनुरूप ही ट्रस्ट ने इस पुस्तक 'वेदोक्त कर्मकाण्ड दर्पण' को तैयार करवाया है, जिससे नित्यकर्मों, संस्कारों, युक्तियुक्त लोकाचारों तथा पर्वों को करने और करवाने में आर्य स्त्री-पुरुषों, यजमानों, परिवारों और समाजों, आदि सब को सुविधा हो। समस्त मनुष्यों की दिनचर्या और सारा जीवन वेदोमय हो, प्रत्येक कार्य का शुभारम्भ और प्रत्येक अवसर पर वेद मन्त्रों से वातावरण गुंजायमान हो, यही ट्रस्ट की कामना है, और यही इस संकलन का मुख्य उद्देश्य है। वेदों को, जन-जन के दैनिक जीवन से जोड़ने का यह एक छोटा-सा प्रयास इस छोटे से ट्रस्ट का है।

ट्रस्ट, पुस्तक के सम्पादन में सहयोग और परामर्श के लिए **महात्मा गोपाल स्वामी जी सरस्वती** (जिनको पूर्व आश्रम में इस वेदोक्त कर्मकाण्ड को स्वयं करने वा करवाने का अनुभव है) तथा सुन्दर प्रकाशन के लिए **'आदित्य प्रकाशन'** का अत्यन्त आभारी है, जिन्होंने काफ़ी श्रम एवं तप इस पुस्तक के लिए किया है। वैसे इस पुस्तक में जो कुछ भी प्रस्तुत किया गया है, वह सब वेद एवं प्रचलित वैदिक

पद्धतियों पर आधारित और अनुभूत है। फिर भी इस संकलन में जिन पुस्तकों से मुख्यत: सहायता ली गई है, उनके नाम इस प्रकार हैं—

१. **सन्ध्या पद्धति** (संस्करण १९५६ ई०)—सम्पादन स्व० आचार्य विश्वश्रवा: (बरेली) तत्कालीन मन्त्री, सार्वदेशिक धर्मार्य सभा, प्रकाशक, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली।
२. **यज्ञ पद्धति प्रकाश** (संस्करण १९६१ ई०)—सम्पादन स्व० आचार्य विश्वश्रवा (बरेली) तत्कालीन मन्त्री, सार्वदेशिक धर्मार्य सभा, प्रकाशक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली।
३. **आर्य पर्व पद्धति** (संस्करण १९२४ ई०)—सम्पादन स्व० पं० भवानी प्रसाद (हल्दौर) प्रकाशक, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली।
४. **संस्कारों की सरलविधि** (महर्षि दयानन्द कृत संस्कारविधि पर आधारित—संस्करण २००१ ई०)—सम्पादन यशपाल आर्य (देहरादून), प्रकाशक, वैदिक साधनाश्रम, तपोवन, देहरादून।
५. **वैदिक साधना तथा वेदालोक**—स्व० स्वामी विद्यानन्दजी 'विदेह' वेद संस्थान, नई दिल्ली-११० ०२७।
६. **स्वाध्याय सन्दीप** (संस्करण १९६९ ई०)—स्व० स्वामी वेदानन्द तीर्थ सरस्वती, प्रकाशक, विरजानन्द वैदिक संस्थान, गाजियाबाद (उ०प्र०)।
७. **वैदिक यज्ञानुष्ठान विधि** (संस्करण १९८९ ई०)—रमेश मुनि वानप्रस्थी, प्रकाशक, वैदिक शोध संस्थान, भरतपुर (राजस्थान)।
९. **संस्कार समुच्चय** (संस्करण १९९८ ई०)—पं० मदनमोहन विद्यासागर जी (हैदराबाद), प्रकाशक, विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली।

ट्रस्ट सुधी धर्माचार्यों और विद्वानों से यह अपेक्षा रखता है कि वे अपने बहुमूल्य सुझावों से ट्रस्ट को उपकृत करेंगे, और अशुद्धियों, त्रुटियों तथा मुद्रण की भूलों की ओर ध्यान दिलाकर पुस्तक की उपयोगिता बढ़ाने में ट्रस्ट को प्रोत्साहित करते रहेंगे।

श्रद्धा विनत—

ट्रस्टीगण—**मातुश्री धनदेवी केशवराम धर्मार्थ वैदिक ट्रस्ट**

बरेली (उ०प्र०)

॥ ओ३म् ॥

द्वे वचसी

कुछ ऐसा देखने में आ रहा है कि पौराणिक पाखण्ड को छोड़कर जब कोई व्यक्ति आर्यसमाज से जुड़ता है तो समझता है अब किसी कर्मकाण्ड की आवश्यकता नहीं रह गई। रविवार वा नियत दिन आर्यसमाज के सत्संग में हवन कर लिया, अब कुछ घर पर करने की आवश्यकता नहीं। जब परिवार में कुछ भी कर्मकाण्ड नहीं होता, तो बच्चे वैदिक विचारधारा और वेदोक्त कर्मकाण्ड से अनभिज्ञ रह जाते हैं, और अन्ततः वे आर्यसमाज से भी अलग-थलग जा पड़ते हैं। उधर के तो रहे नहीं, इधर के भी वे नहीं रहते।

आर्यसमाज से जुड़ने का अर्थ होना चाहिए—**ईश्वर में पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ जीवन में वेद और योग को प्रतिष्ठित करना, अपनी सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा करना, तथा, जीवन को वेदमय और योगमय बनाना। जब तक हर घर में पञ्चमहायज्ञ, पर्व और संस्कार नहीं होंगे, तब तक मानव जीवन का समुचित और सर्वांगीण विकास होना असम्भव है।** पर्व तो होते ही हैं घर में मनाने के लिए, जबकि उत्सव और मेले होते हैं संस्थागत सामूहिक रूप से मनाने के लिए। पञ्चमहायज्ञ नित्यकर्म में आते हैं, और नित्यकर्मों का विधिवत् पालन करना प्रत्येक की व्यक्तिगत ज़िम्मेवारी तथा कर्त्तव्य है। पर्वों और संस्कारों को करना, प्रत्येक परिवार की पारिवारिक ज़िम्मेवारी और कर्त्तव्य हैं। समाज की अपनी ज़िम्मेवारियाँ अलग हैं।

व्यक्ति-व्यक्ति और परिवार-परिवार अपनी-अपनी ज़िम्मेवारी और कर्त्तव्य बिना किसी की सहायता के निभा सकें, उसी के लिए मातुश्री धनदेवी केशवराम धर्मार्थ वैदिक ट्रस्ट ने यह प्रयास किया है। इसके लिए ट्रस्ट को मैं हृदय से अपना आशीर्वाद प्रदान करता हूँ। परमेश्वर की कृपा सदैव इस ट्रस्ट और ट्रस्टियों पर बनी रहे, यही मेरी परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना है।

वैसे भी, मैं यह आवश्यक समझता हूँ कि परिवार के प्रत्येक वयस्क सदस्य, चाहे स्त्री हो या पुरुष, हरेक का इतना अभ्यास होना चाहिए कि वह पर्वों को स्वयं विधिपूर्वक मना सकें, आरम्भ के चार संस्कार स्वयं सम्पादित कर सकें और विशेष मांगलिक अवसरों पर

स्वयं यज्ञ आदि कर सकें। इस विषय में वरिष्ठ (बुज़ुर्ग) स्त्री-पुरुषों की ज़िम्मेवारी और बढ़ जाती है। वयस्वी होने के साथ-साथ वे इतने निष्णात, दक्ष और अनुभवी हो जाने चाहिएँ कि वे अपने-अपने पुत्र-पुत्रियों-पुत्रवधुओं तथा पौत्र-पौत्रियों आदि के संस्कारों विषयक पौरोहित्य कार्य, पर्व तथा अन्य यज्ञानुष्ठान स्वयं कर, वा, करवा सकें, तथा नई पीढ़ी का अवसरोचित मार्ग-दर्शन कर सकें। इस लक्ष्य को ध्यान में रखकर, यदि विचार करें, तो इस पुस्तक की उपयोगिता बहुत बढ़ जाती है।

वेदों को जन-जन के दैनिक जीवन से जोड़ने का प्रयास भी स्तुत्य है। सृष्टि की उत्पत्ति ही इस धरा पर 'मानव-जीवन' और जीवन को जीने की विधा, अर्थात् 'वेद-ज्ञान' के साथ ही हुई। समस्त मानवीय आकांक्षाओं की पूर्ति का युक्ति-युक्त विधान और समस्त मानवीय समस्याओं का सत्य-सत्य समाधान 'वेद' में है। वेद ही सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। यास्काचार्य ने भी कहा है—**''पुरुष विद्याऽनित्यत्वात् कर्मसंपत्तिर्मन्त्रो वेदे।''** (निरुक्त १।२) अर्थात् पुरुष की विद्या अनित्य होने से वेद ही सम्पूर्ण कर्मों का बोधक है। मनुष्य अपने समस्त कर्मों का शुभारम्भ वेद की ऋचाओं से करे, ट्रस्ट की इस भावना का मैं पूर्णतया स्वागत और सम्मान करता हूँ। वैसे भी यह बात निश्चित है, कि अवसरोचित समय पर सही विनियोगयुक्त मन्त्र-पाठ तथा मन्त्रों का भावार्थ समझ कर प्रार्थना करने से प्रार्थी व्यक्ति का मनोबल और आत्म-विश्वास बढ़ जाता है, जो उसे अपने निर्धारित ध्येय में पुरुषार्थ और साधना के द्वारा सफ़लता दिलाने में काफी सहायक सिद्ध होता है।

'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की मंगलकामनाओं के साथ—

नव संवत्सरेष्टि
चैत्र शु० प्रतिपदा एवं मेष संक्रान्ति (बैसाखी)
(१३ अप्रैल, २००२)

विदुषामनुचरः

आर्य वानप्रस्थाश्रम **महात्मा गोपाल स्वामी सरस्वती**
आर्यसमाज, नोएडा, बी-६९, सेक्टर ३३,
गौतमबुद्धनगर (उ०प्र०)-२०१ ३०१

ओ३म्

विषय सूची

॥ ओ३म् सच्चिदानन्दायेश्वराय नमो नमः ॥

I. श्रद्धास्पद माताश्री स्व० श्रीमती धनदेवी तथा स्व० श्री केशवराम जी का संक्षिप्त जीवन परिचय

स्व० श्रीमती धनदेवी
(१९०५-१९९०)

स्व० श्री केशवराम जी
(१८९६-१९५४)

जिनकी पुण्य स्मृति में
मातुश्री धन देवी केशवराम धर्मार्थ वैदिक ट्रस्ट
की स्थापना महर्षि दयानन्द सरस्वती के १७५वें
जन्म दिवस पर श्री गोपालशरण जी ने
बरेली (उ०प्र०) में की।

स्वनामधन्य श्री केशवराम जी का जन्म सितम्बर १८९६ में एक सम्भ्रान्त सूर्यवंशी क्षत्रिय, कश्यप ऋषि के गोत्र में सक्सेना कायस्थ परिवार में हुआ था। इनका संक्षिप्त वंश विवरण इस प्रकार है।
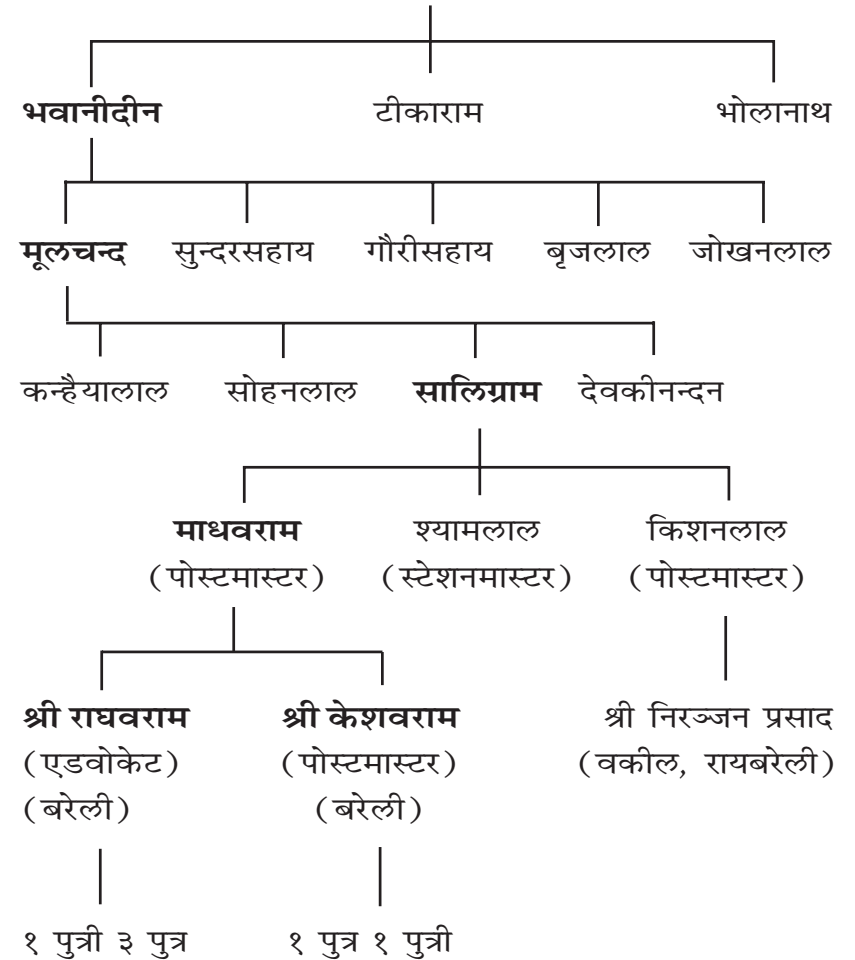
श्री केशवराम जी ने विक्टोरिया कालिजियेट हाई स्कूल, लश्कर (ग्वालियर राज्य) से मार्च १९१४ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की मैट्रिक परीक्षा पास की। १९१४-१५ में एक वर्ष आपने बरेली कालेज बरेली में इन्टरमीडियेट परीक्षा पास करने हेतु अध्ययन किया किन्तु पारिवारिक कारणों से पढ़ाई जारी न रख सके। आपके बड़े भ्राता श्री राघवराम जी ने बी०ए०, एल०एल०बी० किया, और

अपने समय में बरेली नगर के प्रसिद्ध एडवोकेट रहे। उस समय डा० श्याम स्वरूप जी सत्यव्रत बरेली के प्रसिद्ध आर्य समाजी नेता थे। श्री राघवराम जी के पारिवारिक चिकित्सक होने के नाते दोनों में काफ़ी घनिष्ठता थी। उनके प्रभाव से श्री राघवराम जी ने अपने कनिष्ठ भ्राता श्री केशवराम जी को गुरुकुल अहरोला (आर्योला) में उपाचार्य के पद पर लगवा दिया। परन्तु अपने पिता के आग्रह पर आपने वह गुरुकुल छोड़, जिला न्यायालय बदायूँ (उ०प्र०) में सहायक रिकार्ड क्लर्क की नौकरी कर तो ली; किन्तु अपने आपको न्यायालय के माहौल में ढालने में असमर्थ रहे। अत: वहाँ से त्यागपत्र दे दिया। सौभाग्य से आपका चयन भारत सरकार के डाक-तार विभाग में हो गया, जहाँ आप २५.६.१९१९ से लग गये। इसी विभाग में विभिन्न स्थानों पर कार्य करते हुये ३२ वर्ष सेवारत रहने के पश्चात्, आयु के पचपनवें वर्ष, अर्थात् १९५१ में आप बरेली मुख्य डाकघर से सेवा निवृत्त हुये। सेवा निवृत्ति के पश्चात् भी आपने डाक विभाग की सेवा स्वेच्छा से ले ली, और लगभग ३ वर्ष तक कोहाड़ापीर पोस्ट आफ़िस, बरेली, में पोस्टमास्टर रहे।

१४.८.१९५४ की रात्रि में आपको उदर में कुछ पीड़ा हुई। १५.८.१९५४ को स्वतन्त्रता दिवस के कारण पूरे नगर में अवकाश था। १६.८.१९५४ को प्रात: ज़िला अस्पताल में भर्ती कराया गया, किन्तु सायं तक कोई उपचार उपलब्ध न हुआ। इसी स्थिति में निमोनियाँ से भी वे ग्रस्त हो गये। अंतत: १६.८.१९५४ को रात्रि ११ बजे 'ओ३म्' 'ओ३म्' कहते हुये आप ५८ वर्ष की अल्प आयु में इस संसार से विदा हो गये।

बरेली के कायस्थ परिवारों का कुछ चित्रण स्वामी श्रद्धानन्द ने अपनी आत्मकथा 'कल्याण मार्ग का पथिक' में किया है। ऐसा लगता है कि अतीत में कायस्थों की प्रसिद्धि उनकी शराबी, कबाबी (मांसाहारी), और ऐय्याशी प्रवृत्ति के कारण कुछ ज़्यादा ही थी। परन्तु वास्तविकता यह है कि कुछ परिवार अपवाद में भी थे। स्व० श्री केशवराम जी का इन व्यसनों से दूर का भी सम्बन्ध न था। मांसाहार और मदिरा से वे पूरी आयु दूर रहे। स्वभाव के भी अत्यन्त सरल और सीधे-सादे थे। यद्यपि घर में तो वे वैदिक वातावरण न ला सके थे, किन्तु आर्य समाज के सार्वजनिक जल्सों में बराबर जाते

थे। स्वभाविक है, कि आर्य समाज की विचारधारा से उनका मन और मष्तिष्क प्रभावित था। एक वर्ष गुरुकुल में रह जाने के कारण सन्ध्या और ईश्वर स्तुति प्रार्थना और उपासना के मन्त्र उनको कण्ठस्थ थे, जिनका पाठ उन्होंने स्वयं ही सायं बेला में मृत्यु से कुछ घण्टे पूर्व कर लिया था। वे स्वयं तो आर्यसमाजी न बन सके थे, परन्तु अपने एकमात्र पुत्र पर आर्य समाज और आस्तिकता की अटूट छाप ज़रूर छोड़ कर गये। उनकी अन्त्येष्टि तथा अन्य रस्में सभी वैदिक रीत्यानुसार उनके पुत्र ने सम्पन्न कीं।

ग्रामीण अंचल में पैदा हुई, पली, बढ़ीं **श्रीमती धनदेवी** श्री केशवराम जी की तीसरी पत्नी थीं। इससे पूर्व श्री केशवराम जी के दो विवाह हो चुके थे, परन्तु दोनों ही पत्नियों का देहान्त एक-एक वर्ष में हो चुका था। विवाह के समय श्रीमती धनदेवी की आयु उन्नीस वर्ष (जन्म: श्रावण शुक्ल १२, संवत १९६२) [तदनुसार जुलाई १९०५] और श्री केशवराम जी की आयु २८ वर्ष की थी।

श्रीमती धनदेवी के पिता का नाम श्री छदम्मीलाल था, जो ग्राम बीजामऊ (तहसील नवाबगंज, बरेली, उ०प्र०) के निवासी थे और बीजामऊ से लगते कुछ ग्रामों के पटवारी थे। श्रीमती धनदेवी के दो सहोदर भाई थे—श्री चिरौंजी लाल और श्री विश्वम्भर सहाय। चचेरे भाई श्री प्रेम नारायण सक्सेना, और फुफेरे भाई श्री गुलज़ारी लाल ही ऐसे थे, जिनका प्रश्रय और सहयोग इनको उनके जीवन पर्यन्त मिलता रहा। अपने जीवन काल में श्री गुलज़ारी लाल जी आर्य समाज बिहारीपुर, बरेली के एक समर्पित कार्यकर्ता और स्वतन्त्रता सेनानी भी रहे।

मामूली हिन्दी पढ़ी-लिखी होने के बावजूद भी श्रीमती धन देवी उन सब गुणों से भरपूर थीं जिनको किसी भी स्त्री के लिये एक अच्छी पत्नी और एक उत्तम माता का गौरव कहा जा सकता है। अपने जेठ-जेठानी तथा समस्त सम्बन्धियों व रिश्तेदारों के पुत्रों और पुत्र-वधुओं को जो प्यार और सम्मान उन्होंने दिया, उससे उनकी प्रतिष्ठा और कीर्ति आज भी जीवित है। दोनों भाईयों अर्थात् श्री राघवराम जी और श्री केशवराम जी के परिवारों को एकजुट रखने में उनका बहुत बड़ा योगदान रहा, जिसकी सुगन्धि आज भी विद्यमान है। अपने जीवन में उन्होंने विपत्तियाँ और दु:ख भी बहुत झेले,

परन्तु हिम्मत और साहस का दामन कभी न छोड़ा। अपूर्व सूझबूझ, साहस और प्रज्ञा की वे धनी थीं। उनकी अपनी सन्तानों में केवल छठी **(पुत्र-गोपाल शरण; वर्तमान ट्रस्ट के संस्थापक और बाद में आर्य संन्यासी)** और सातवीं (पुत्री प्रेम कुमारी) ही जीवित रहीं, बाक़ी सब-की-सब शिशु-अवस्था में ही काल का ग्रास हो गईं।

प्रायः देखा यह जाता है कि पुत्र यदि इकलौता हो और बड़ी मन्नतों और मुरादों के बाद मिला हो तो वह अधिक लाड़-प्यार मिलने के कारण बिगड़ जाता है। पर जहाँ—**प्रशस्ता धार्मिकी माता विद्यते यस्य स मातृमान**—गर्भाधान से लेकर जब तक पूरी विद्या बालक की न हो जावे तब तक बराबर सुशीलता का उपदेश करती रहे, वह माता धन्य है। ऐसी ही थीं मातृश्री धनदेवी। बालक बड़ा होकर क्या बनेगा, यह निर्भर करता है माता के ऊपर। माता ही संस्कारदात्री होती है। माताश्री धनदेवी ने कभी भी अपने पुत्र के बारे में ऊँचे सपने नहीं सँजोये। यदि चाहा तो यही कि ख़ूब पढ़े, और एक अच्छा इंसान बने, जिसको सब चाहें। और वैसा ही उन्होंने बनाने का प्रयास किया। अपनी पीढ़ी के समस्त भाई-बहनों में इन्हीं के पुत्र सबसे अधिक शिक्षित, उत्कृष्ट विद्वान, वेद-भक्त, वेद प्रवक्ता और लेखक सिद्ध हुए।

आर्यसमाज के सम्पर्क में आने के पश्चात् युवा पुत्र ने जब पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही पौराणिकता, देवी-देवताओं की पार्थिव पूजा, सत्यनारायण व्रत कथा, फलित ज्योतिष, धार्मिक अन्धविश्वासों और रूढ़ियों को घर से खदेड़ने का पुरुषार्थ किया, तो कभी भी माँ को अप्रसन्न या रुष्ट नहीं पाया। **कारण यह कि पुत्र ने भी वेदोक्त कर्मकाण्ड द्वारा किसी भी प्रकार की धार्मिक पूजन, अर्चन, वंदन की रिक्तता घर में नहीं रहने दी। तथा जो होम आदि पहले पण्डितों को बुलाकर होते थे, उनसे कहीं अधिक विधि एवं श्रद्धापूर्वक पुत्र स्वयं करने और करवाने लग गये। यही स्थिति उनके परम सन्तोष का कारण आजीवन रही।** उसी कर्मकाण्ड की दर्पण है यह पुस्तक।

कहते हैं कि हर अच्छे व्यक्ति को जीवन में दुःख ज़्यादा झेलने पड़ते हैं। कारण दुःख में ही इन्सान की परीक्षा होती है। जीवन के ५०वें वर्ष के आरम्भ में माताश्री धनदेवी को वैधव्य देखना पड़ा।

इससे पूर्व पति और पुत्र दोनों की बीमारियों से जब तब उनको बहुत जूझना पड़ता रहता था। पुत्र की केवल शिक्षा ही हो पायी थी, आजीविका का कोई निश्चित स्वरूप अभी नहीं बन पाया था, कि उनके पति श्री केशवराम जी की मृत्यु हो गई। उस समय के नियमों के अनुसार फ़ेमिली पेन्शन १७.८.१९५४ से १५.५.१९५६ तक की अवधि के लिये जो बनी थी, वह थी बत्तीस रुपये बारह आने प्रतिमास। परन्तु माताश्री ने धैर्य तथा धीरज कभी नहीं खोया। ईश्वर की कृपा से नवम्बर १९५६ ई० में पुत्र की सर्विस दिल्ली में लग गई और धीरे-धीरे स्थिति सुधरती गई। जीवन के ७०वें वर्ष में उनको अपनी पुत्री का वैधव्य भी सहना पड़ा। पुत्री को उन्होंने वह साहस प्रदान किया कि वह स्वयं अपने पैरों पर बिना किसी की सहायता और आश्रय के खड़ी हो सकी, और अपने पुत्र का भी पालन कर सकी।

सोमवार २५ जून १९९० को नई दिल्ली में स्थित अपने पुत्र के निवास स्थान पर प्रातः उठकर और अपने समस्त नित्य कर्मों को निष्पादित कर बिना किसी की सहायता या सेवा लिये ८५ वर्ष की आयु में उत्तरायण काल में उन्होंने धरती पर अपने प्राण इतनी सहजता, सरलता और शीघ्रता से त्याग दिये कि जिसके लिये कभी-कभी बड़े-बड़े सिद्ध योगीजन भी तृषित रह जाते हैं। उनकी इच्छानुसार संयोग भी प्रभु ने उनको वह दिया जब उनके पुत्र के अतिरिक्त और कोई भी प्राणी घर पर न था। पुत्र जब तक उनके लिए प्रातःराश बनाकर लाये, उससे पूर्व वे प्रभु के पास पहुँच चुकी थीं। मृत्यु नाम है दुःखों का। यदि बिना दुःख पाये वा दुःख दिये परमेश प्रभु की शरण मिल जाय तो यह निःश्रेयस् नहीं, तो और क्या है? जाते हुये भी शायद यह मौन उपदेश वे अपने पुत्र को दे गईं—''जा मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द। मरने ते ही पाइये पूर्ण परमानन्द।''

किसी कवि ने ठीक ही कहा है—

जब तुम आये जग में, जग हँसा, तुम रोये।
करनी ऐसी कर चलो, तुम हँसो, जग रोये।

यह पुस्तक श्रद्धापूर्वक इन्हीं माताश्री को समर्पित है।

श्रद्धा विनत—

ट्रस्टीगण—**मातुश्री धनदेवी केशवराम धर्मार्थ वैदिक ट्रस्ट**

बरेली (उ०प्र०)

नित्यकर्म वन्दन
प्रभात वन्दन
सन्ध्या वन्दन
देवयज्ञ
श्रीसूक्त वन्दन
पितृ, बलिवैश्वदेव एवं अतिथि यज्ञ
विविध प्रार्थनाएँ

* प्रार्थना/PRAYER *

पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा॥

—यजुर्वेद १९/३९

punantu mŒ devajanŒ¬ punantu manasŒ dhiya¬,
punantu viÜvŒ bhµutŒni jŒtaveda¬ pun¶hi mŒ.

—Yajurveda 19/39

''हे जातवेद परमेश्वर! आप सब प्रकार से मुझे पवित्र कीजिए, और जो आपके उपासक आपकी आज्ञा पालते हैं, अथवा जो विद्वान्, ज्ञानी पुरुष कहाते हैं, वे मुझको विद्यादान से पवित्र करें। और आपके दिये विशेष ज्ञान वा आपके ध्यान से हमारी बुद्धियाँ पवित्र हों। तथा सब संसारी जीव आपकी कृपा से पवित्र होकर आनन्द में रहें।''

—स्वामी दयानन्द सरस्वती
ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (पञ्चमहायज्ञ विषयः) में

"O God! Purify me in every way absolutely. May the learned, who are devoted to Thee and obey Thy will, who are good and wise, purify me by imparting me the knowledge. May our intellects become pure by meditating upon Thee and by the knowledge given by Thee, may all living beings on the earth be full of happiness and purity by Thy Grace."

—Swami Dayanand Saraswati
in Introduction to Vedic Commentary
(Five Great Duties) *

* English translation by Pt. Ghasi Ram, M.A., LL.B.

II. नित्यकर्म वन्दन

जागरण मन्त्राः

॥ ओ३म्॥ उद्‌ु तिष्ठ स्वध्वरावा नो देव्या धिया।
दृशे च भासा बृहता सुशुक्वनिराग्ने याहि सुशस्तिभिः॥१॥

—यजुर्वेद ११।४१

हे **(अग्ने)** आत्माग्ने! **(उदुतिष्ठ)** उठ जाग। रात्रि बीत चुकी। अब उठकर स्व-पुरुषार्थ और **(स्वध्वर)** उत्तम अहिंसक व्यवहार से उन्नति को प्राप्त हो। **(देव्या)** दिव्य गुणों और **(धिया)** प्रकृष्ट बुद्धि से युक्त होकर **(बृहता)** बड़े भारी **(भासा)** तेज, **(सुशुक्वनि)** उत्तम पवित्र आचारों, तथा **(सुशस्तिभिः)** प्रशंसित गुणों के साथ **(याहि)** यहाँ कार्यक्षेत्र में आ तथा **(दृशे)** दर्शनीय बन **(च)** और **(नः)** हमारी **(अव)** रक्षा कर॥ १ ॥

ओं यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति।
यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः॥ २ ॥

—ऋग्वेद ५।४४।१४; साम १८२६

देख! **(यो जागार)** जो जाग गया है **(तमृचः कामयन्ते)** वेद की ऋचायें उसी की कामना करती हैं। चाहती हैं कि कोई जागा हुआ व्यक्ति उनका पाठ कर स्वयं भी लाभान्वित हो और अन्यों को भी लाभान्वित करे। **(यो जागार)** जो जाग गया है **(तमु सामानि यन्ति)** उसे ही समतायें प्राप्त होती हैं। समत्व ही का नाम योग है। **(यो जागार)** जो जागा हुआ है, **(तम)** उसी को **(अयम्)** यह **(सोम)** प्रिय परमेश्वर **(आह)** कहता है, **(तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः)** मैं तेरी सख्यता में नियुक्त तेरे साथ हूँ। उठ, जाग, और अपने कर्त्तव्य मार्ग पर चल पड़॥ २ ॥

शौच से पूर्व पठनीय मन्त्रः

॥ ओ३म्॥ इदमापः प्र वहत यत्किं च दुरितं मयि।
यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम्॥

—ऋग्वेद १।२३।२२; १०।९।८

हे प्रभु! **(यत् किं च)** जो कुछ भी **(मयि)** मेरे अन्दर **(इदम)** यह **(दुरितम्)** मल आदि है, और **(यद् वा)** जो कुछ भी **(अभिदुद्रोह)** दाह-पीड़ा से **(अहम्)** मैं ग्रस्त हूँ, तथा **(यद् वा)** जो कुछ भी **(शेप)** मल-विक्षेप आदि है, और **(उत)** जो **(अनृतम्)** अशान्ति बेचैनी मेरे अन्दर है, उसको यह **(आपः)** जल **(प्रवहत)** अच्छे प्रकार से बहा दे।

नोट—*शौच से पूर्व यथेष्ठ जल-पान से शौच-क्रिया में निश्चित रूप से सुगमता होती है।*

हाथ, पैर और मुख धोते समय पठनीय मन्त्राः

ओं वाङ् म् आसन्नसोः प्राणश्चक्षुरक्ष्णोः श्रोत्रं कर्णयोः।
अपलिताः केशा अशोणा दन्ता बहु बाह्वोर्बलम्॥ १ ॥

—अथर्ववेद १९।६०।१

ओम् ऊर्वोरोजो जङ्घयोर्जवः पादयोः प्रतिष्ठा।
अरिष्टानि मे सर्वात्मानिभृष्टः॥ २ ॥

—अथर्ववेद १९।६०।२

हे परमात्मन्! **(मे आसन)** मेरे मुख में **(वाक्)** बोलने की शक्ति बनी रहे। **(नसोः प्राणः)** नासिकाओं में प्राण चलते रहें। **(अक्षणोः)** दोनों आखों में **(चक्षुः)** देखने की शक्ति विद्यमान रहे। **(कर्णयोः)** दोनों कानों में **(श्रोत्रम्)** श्रवण शक्ति बनी रहे। **(केशाः)** बाल **(अपलिताः)** झड़े नहीं। **(दन्ता अशोणाः)** दाँत हिलें नहीं **(बाह्वोः बहु बलम्)** दोनों भुजाओं में बहुत बल बना रहे। **(ऊर्वाः ओजः)** टाँगों में ओज व बल बना रहे। **(जंघयोः**

जवः) जाँघों में लोच व वेग बना रहे **(पादयोः प्रतिष्ठा)** पैर प्रतिष्ठा दिलाने वाले बने रहें। **(मे)** मेरे समस्त अंग **(अरिष्टानि)** पीड़ा से रहित रहें। **(सर्वात्मा)** मेरी समस्त देह तथा आत्मा **(अनिभृष्टः)** नीचे गिर कर भृष्ट न हो; संताप से रहित हो।

प्रातः भ्रमणार्थ पठनीय मन्त्राः

॥ ओ३म्॥ स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि॥

—ऋग्वेद ५।५१।१५

॥ ओ३म्॥ अपि पन्थामगन्महि स्वस्तिगामनेहसम्।
येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु॥

—ऋग्वेद ६।५१।१६

हे प्रभो! **(सूर्याचन्द्रमसौ इव)** सूर्य और चन्द्रमा के समान हम **(स्वस्ति)** कल्याणकारी **(पन्थाम्)** पथ पर **(अनुचरेम)** एक दूसरे का अनुसरण करते हुये चलें हर दिशा में हमारी **(सं गमेमहि)** भेंट ऐसे लोगों से **(पुनः)** बारम्बार हो, जो **(ददता)** दाता हैं, **(अघ्नता)** अहिंसक हैं किसी का अनिष्ट नहीं चाहते और **(जानता)** ज्ञान विज्ञान के वेत्ता हैं॥ १॥

हे मार्गदर्शक प्रभो! **(अपि)** जिस **(पन्थाम्)** भी मार्ग पर हम **(अगन्महि)** चलें वह **(अनेहसम्)** पाप-रहित निर्दोष, निरापद और **(स्वस्ति)** कल्याण का **(गाम्)** मार्ग हो। ऐसा मार्ग **(येन)** जिस पर **(विश्वाः)** समस्त **(द्विषः)** द्वेष और दुर्भावनाओं **(परि वृणक्ति)** को हम परे फेंक सके, और सबमें **(वसु)** बसे परम-ब्रह्म का दर्शन **(विन्दते)** हम सबमें कर सकें।

व्यायाम में प्रवृत्त होते समय पठनीय मन्त्राः

॥ ओ३म्॥ वर्च आ धेहि मे तन्वां३ सह ओजो वयो बलम्।
इन्द्रियाय त्वा कर्मणे वीर्याय प्रति गृह्णामि शतशारदाय॥

—अथर्ववेद १९।३७।२

॥ ओ३म्॥ तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाह्यायुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मे देहि वर्चोदाऽअग्नेऽसि वर्चो मे देहि। अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण॥

—यजुर्वेद ३।१७

हे सर्वशक्तिमान परमेश्वर! **(मे)** मेरे **(तन्वाम्)** शरीर में **(वर्चः)** दीप्ति **(सहः)** उत्साह, **(ओजः)** तेज, **(वयः)** शारीरिक शुद्धता **(बलम्)** बल, व्यायाम द्वारा **(आ धेहि)** भली-भाँति धारण हो। **(इन्द्रियाय)** इन्द्रियों की शक्ति के लिए, **(कर्मणे)** कार्यों को करने के लिए, **(वीर्याय)** जीवनी-शक्ति के लिए **(शत-शारदाय)** शतायु होने के लिए **(त्वा)** तुमको मैं **(प्रति गृह्णामि)** अंगीकार करता हूँ॥ १॥

हे **(अग्ने)** अग्निस्वरूप प्रकाशमान परमेश्वर! आप **(तनूपा असि)** शरीरों के पालनहार हो। **(मे तन्वं पाहि)** मेरे शरीर की रक्षा करो। आप **(आयुर्दा असि)** उत्तम आयु को प्रदान करने वाले हो **(मे आयुः देहि)** मुझे अच्छी आयु प्रदान करो। आप **(वर्चः दा असि)** वर्चस्व के देने वाले हो। **(मे वर्चः देहि)** मुझे वर्चस्विता प्रदान करो। हे **(अग्ने)** परमात्मन्! **(मे)** मेरे **(तन्वाः)** शरीर में **(यत्)** जो कुछ भी **(ऊनं)** न्यूनतायें वा कमियाँ हैं **(मे)** मेरी **(तत्)** उन सब न्यूनताओं/कमियों को **(आ पृण)** पूर्णतया भर दीजिये॥ २॥

नोट—*शारीरिक उन्नति के लिये ऋतु एवं सामर्थ्य अनुकूल व्यायाम, आसन तथा प्राणायाम का करना अत्यन्त हितकारी है।*

सूर्य-दर्शन/नमस्कार मन्त्राः

॥ ओ३म्॥ विश्वदानीं सुमनसः स्याम पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम्।
तथा करद्वसुपतिर्वसूनां देवाँ ओहानोऽवसागमिष्ठः॥

—ऋग्वेद ६।५२।५

॥ ओ३म्॥ उद्यते नम उदायते नम उदिताय नमः।
विराजे नमः स्वराजे नमः सम्राजे नमः॥

—अथर्ववेद १७।१।२२

हे **(वसूनाम् वसुपति)** प्राणों में बसे हुये प्राणों के प्राणपति।

आप **(तथा करत्)** वैसी कृपा करें, जिससे **(विश्वदानीम्)** सदा ही हम सब लोग **(देवान् ओहानः)** दिव्य गुणों को धारण करते हुये **(अवसागमिष्ठः)** तथा आपकी सुरक्षा में विचरते हुये **(सुमनसः स्याम)** फूलों के समान, सुप्रसन्न, सुमधुर और सुगन्धित रहें। **(उच्चरन्तं सूर्यं नु पश्येम)** उदय होते हुये सूर्य का दर्शन करके उदीयमान, तेजस्वी और प्रकाशमान हों॥ १॥

हे सर्वप्रेरक, प्राणत्मन् सूर्यदेव! **(उद्यते नमः)** उदय होते हुये आपको नमस्कार। **(उदायते नमः)** ऊपर जाते हुये आपको नमस्कार। **(उदिताय नमः)** पूर्णरुपेण उदित, आपको हमारा नमन। **(विराजे नमः)** विविधि रूप से प्रकाशित आपके विराट स्वरूप को नमस्कार। **(स्वराजे नमः)** स्वप्रकाशित आपके तेजस्वी स्वरूप को सादर नमस्कार। **(सम्राजे नमः)** सौरमंडल में आपके अविच्छिन्न साम्राज्य को सादर नमस्कार।

नोट : उदय होते हुए सूर्यदर्शन से भाग्योदय होता है, तथा तेजस्विता प्राप्त होती है।

स्नान करते समय पठनीय मन्त्राः

ओम् आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥ १
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः॥ २
तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः॥ ३
ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो याचामि भेषजम्॥ ४

—ऋ० १०।९।१-३, ५; य० ११।५०-५२; अ० १।५।१-४

हे प्रभु! यह **(आपः)** जल **(हि)** निश्चय से **(मयोभुवः)** सुखकारक **(स्थ)** है। स्नान द्वारा **(ता)** यह **(नः)** हमें **(ऊर्जे)** ऊर्जा-शक्ति **(महे रणाय)** महान रमणीयता तथा **(चक्षसे)** दर्शनीयता **(दधातन)** प्रदान करे॥ १॥

(वः) इस जल में **(यः)** जो **(शिवतम)** अति उत्तम कल्याणकारी **(रसः)** तत्व हैं, **(तस्य)** उनको **(नः)** हम **(इह)** यहाँ स्नान से **(भाजयतः)** प्राप्त करें; **(इव)** जैसे **(उशतीः मातरः)** मातृत्व सुख को प्राप्त कर मातायें आनन्दित होती हैं॥ २॥

(वः) वह **(आपः)** जल, **(यस्य क्षयाय)** जिसका गुण ही

(जिन्वथ) तृप्ति प्रदान करना है, स्नान द्वारा हम **(तस्मै अरं गमाम)** उस तृप्ति को शीघ्र प्राप्त हों। **(च)** और यह जल **(नः)** हमें **(जनयथा)** हर प्रकार से बढ़ावें, समर्थ करे, व स्वस्थ रखे॥ ३॥

इस **(अपो याचामि भेषजम्)** जल से मैं इसी प्रकार नीरोगता तथा स्वस्थता की याचना करता हूँ, जिस प्रकार **(वार्याणां)** वृक्ष-वनस्पति तथा **(चर्षणीनाम्)** जल-चर प्राणी अपने **(क्षयन्तीः)** जीवन-रक्षा हेतु, इसकी **(ईशाना)** कामना व इच्छा सतत् रखते हैं॥ ४॥

स्नानोत्तर वस्त्र धारण मन्त्राः

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा॥ १॥
ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा॥ २॥ —तै०आ० १०।३२।३५
ओं वेदिषदे प्रियधामाय सुद्युते धासिमिव प्र भरा योनिमग्नये।
वस्त्रेणेव वासया मन्मना शुचिं ज्योतीरथं शुक्रवर्णं तमोहनम्॥ ३॥

—ऋग्वेद १।१४०।१

ओं परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि।
शतं च जीवामि शरदः पुरुची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये॥ ४॥

—पारस्कर गृह्य सूत्र २।६।२१, २३

हे प्रभो! यह **(उपस्तरणम् असि)** नीचे का वस्त्र मेरे लिए **(अमृतः)** अमृत के समान हो। यह मेरी सत्य याचना है॥ १॥

यह **(अपिधानम् असि)** यह ऊपर का आच्छादक वस्त्र मेरे लिये **(अमृतः)** अमृत के तुल्य हो, यह मेरा सत्य वचन सार्थक हो॥ २॥

(इव) जैसे **(वेदिषदे)** वेदी पर बैठनेवाले होता जन **(योनिमग्नये)** अग्नि में डाले जाने वाले **(धासिम्)** पदार्थ को **(सुद्युते प्रियधामाय)** शुद्ध कर ढाँक कर **(प्रभरः)** उपस्थित करते हैं, **(इव)** वैसे ही हम **(ज्योति रथम्)** अपने पवित्र शरीर को **(शुचिं शुक्रवर्णम्)** उत्तम शुक्र वर्ण के **(तमोहनम्)** शोक दूर करनेवाले **(वस्त्रेण)** वस्त्रों से **(मन्मना)** पूर्ण मन=रुचि से **(वासव)** आच्छादित करें॥ ३॥

(परिधास्यै) परिधान अर्थात् वस्त्रों से अपने शरीर को आच्छादित करने के लिये **(यशोधास्यै)** यश को धारण करने के

लिये **(दीर्घायुत्वाय)** दीर्घ जीवन के लिये मैं इन वस्त्रों को **(जरदष्टि अस्मि)** वृद्धावस्थापर्यन्त धारण करने वाला रहूँ, **(च)** और **(पुरुची शतम)** सब प्रकार के सुखों की पूर्त्ति करने वाली सौ **(शरदः)** शरद ऋतुओं तक मैं **(जीवामि)** जीता रहूँ। **(रायस्पोषम्)** ज्ञान और धन से पुष्ट **(अभि संव्ययिष्ये)** मैं सब ओर से आच्छादित रहूँ॥ ४॥

स्नानोत्तर सँवरने हेतु पठनीय मन्त्रः

ओ३म्॥ अभ्यञ्जनं सुरभि सा समृद्धिर्हिरण्यं वर्चस्तदु पूत्रिममेव।
सर्वा पवित्रा वितताध्यस्मत्तन्मा तारीन्निर्ऋतिर्मो अरातिः॥

—अथर्ववेद ६।१२४।३

हे दर्शनीय, परम सुन्दर परमेश्वर!

स्नानोत्तर **(अभ्यञ्जनम्)** शरीर पर सुगन्धित पुष्टिकारक तैलीय पदार्थों की मालिश, आखों में अंजन, **(सुरभिः)** महकते हुये पदार्थों का लेपन **(हिरण्यम्)** सुवर्ण आभूषण एवं सुअलंकृत वस्त्रों का धारण, सब आपकी कृपा से हमारा **(वर्चः)** वर्चस्व बढ़ायें, **(उ)** और **(तदु)** वही **(पूत्रिमम्)** शारीरिक पवित्रता, जो हमने प्राप्त की है **(सा समृद्धिः एव)** वह समृद्धि ही लाये। **(सर्वा पवित्रा)** समस्त पवित्रताएँ **(अस्मत् अधि)** हमारे ऊपर **(वितता)** फैली रहें। **(तत्)** वह समृद्धि हमारी **(मा निर्ऋति)** न तो ऋतहीनता **(उ)** और **(मा अरातिः)** न अदानशीलता का कारण बने, और न हमें **(तारीत्)** दबाये। शारीरिक पवित्रता और सुन्दरता हमारे व्यक्तित्व का अटूट अंग हो।

प्रभात वन्दन

प्रातःकाल की सुन्दर वेला में सर्वप्रथम परमेश्वर का स्मरण, गुणगान और उससे प्रार्थना करनी चाहिये कि हमारा दिन अच्छा व्यतीत हो। सत्य, तप और पुरुषार्थ से हम सुयश कमावें। प्रातःकालीन प्रार्थना मन्त्र इस प्रकार हैं—

ओ३म् प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम॥ १॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह॥ २॥
भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम॥ ३॥
उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम॥ ४॥
भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह॥ ५॥

—ऋ० ७।४१।१-५; य० ३४।३४-३८; अ० ३।१६।१-५

पद्यमय भावार्थ

हे प्रकाश के पुञ्ज, सृष्टिकर्त्ता, ऐश्वर्य प्रदाता।
मित्र, वरुण, रुद्र, देव, हे सूर्य चन्द्र निर्माता॥
हे ब्रह्म, ब्रह्माण्ड के नियामक, वेद ज्ञान प्रदाता।
प्रातः की पावन बेला में, मैं तेरे ही गुण गाता॥ १॥
हे विजयशील, ऐश्वर्य प्रदाता, तेजस्वी, तपधारी।
द्यौ, अन्तरिक्ष, सूर्य सम, सब लोकों के आधारी।
हे सर्वज्ञ, सुपालक, रक्षक, दुर्जन जन भयकारी।
आज्ञा में तेरी चलने को, करता स्तुति तुम्हारी॥ २॥
हे भजनीय, सत्यपथ प्रेरक, सद् ऐश्वर्य बढ़ाओ।
सदाचार, प्रज्ञा प्रदान कर, ईश मुझे अपनाओ।
हृदय, मन, ऐसे हो प्रेरित, दिन को सुदिन बनावे।
सब होवे नृभि नृवन्त, उत्तम कर्म कमावें॥ ३॥
भगवन्, आज कृपा हो तेरी, और परिश्रम मेरा।
उत्तम बल वैभव विद्या का, मुझ में होय बसेरा।
सूर्योदय से सूर्यास्त तक, सुकीर्ति सुयश कमावें।
सुमति और सुदान से हम, पुण्य सफ़लता पावें॥ ४॥
हे भगवन्, हे जगदीश्वर, हे सकल ऐश्वर्यप्रदाता।
सारा संसार तुझसे ही, इच्छित तेज बल है पाता।
पुरएता, पथप्रदर्शक तू ही, तू ही सुमति प्रदाता।
सत्य, धर्म पर चलने हेतु, शरण तेरी मैं आता॥ ५॥

योगाभ्यास में प्रवृत्त होते समय पठनीय मन्त्राः

ओं युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेक इन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः॥ १॥

—ऋ० ५।८१।१; यजु:० ५।१४; ११।४; ३७।२

ओम् अष्टाविंशानि शिवानि शग्मानि सह योगं भजन्तु मे।
योगं प्र पद्ये क्षेमं च क्षेमं प्र पद्ये योगं च नमोऽ होरात्राभ्यामस्तु॥ २॥

—अथर्व० १९।८।२

हे सर्वान्तर्यामी सर्व व्यापक परमेश्वर! मैं आपके पास आपकी अमृतमयी गोद में बैठने को व्याकुल हूँ। कैसे बैठूँ? आप सर्वज्ञ, मैं अल्पज्ञ। आप **(बृहतः)** महान, मैं अत्यन्त क्षुद्र। आप **(विप्रस्य)** विप्रों के ज्ञाता, और मैं अपने आप से ही अनभिज्ञ। आप **(विपश्चितः)** सब विद्याओं से युक्त और मैं निपट अज्ञानी। आप **(वयुनाविद्)** सब वयुनों को जानने वाले, और मैं अपने ही जगत से अपरिचित। आप **(एकः इत)** अकेले ही **(वि होत्रा)** विविध लोक-लोकान्तरों को धारण किये, और मैं स्वयं अपने ही को सम्भालने में असमर्थ। इतने पर भी **(विप्राः)** बड़े-बड़े प्रतिष्ठित योगियों से प्रेरित होकर, मैं अपने **(मन)** मन को आपसे **(युञ्जते)** युक्त करता हूँ। **(उत युञ्जते धियः)** और अपनी बुद्धि को भी ध्यान धारणा द्वारा आप में स्थिर करता हूँ। आप **(देवस्य)** देव की और **(सवितुः)** प्रेरक शक्ति की **(परिष्टुति)** महिमा **(मही)** महान है। आपके प्राणिधान से ही आत्मा अपने स्वरूप में अवस्थित होकर आपकी ज्योति को **(दधे)** धारण करता तथा आपका दर्शन करता है॥ १॥

हे परमऐश्वर्य युक्त परमेश्वर! आपकी कृपा से मैं **(योगं प्रपद्ये)** उपासना योग को प्राप्त होऊँ, **(च)** और उससे **(क्षेमं प्रपद्ये)** क्षेम को प्राप्त होऊँ। इस प्रकार **(योगम्)** योग **(च)** और **(क्षेमम्)** क्षेम, अर्थात् आपकी सानिध्य और सुरक्षा दोनो मुझे प्राप्त हों। मेरे जीवन रूपी नग में यह जो **(अष्टाविंशानि)** अट्ठाईस नक्षत्र समान दश इन्द्रियाँ, दश प्राण, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, विद्या, स्वभाव, बल तथा सूक्ष्म शरीर हैं, यह सब आपकी कृपा से **(शिवानि शग्मानि)** कल्याणकारी होकर स्थिरता से **(मे)** मेरे योगाभ्यास **(सह)** के साथ **(योगं भजन्तु)** परम योग अर्थात् मोक्षानन्द को प्राप्त हों। **(अहोरात्राभ्यां नमः अस्तु)** रात दिन सतत मेरा विनम्र नमन आपको अर्पित है॥ २॥

III. अथ ब्रह्म यज्ञ (सन्ध्या वन्दन)

आवश्यक निर्देश—

— रात और दिन के संयोग समय दोनों सन्ध्याओं में सब मनुष्यों को परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिए।

— एकान्त स्थान में अपने आत्मा, मन और शरीर को शुद्ध और शान्तचित्त हो करके सन्ध्या करनी चाहिए। इससे पूर्व प्रतिदिन के व्यवहार में 'यम'[१], 'नियमों'[२] का पालन अत्यन्त आवश्यक है। अष्टाङ्ग योग के शेष अङ्ग सन्ध्या में समाविष्ट हैं।

— शुद्ध स्थान, पवित्रासन, जिधर की ओर का वायु हो उधर मुख करके नाभि के नीचे से मूलेन्द्रिय को ऊपर संकोच करके हृदय के वायु को बल से बाहर निकाल के यथाशक्ति रोके। जब न रोक सके तब धीरे-धीरे नासिका से प्राणवायु भीतर ले फिर उसको यथाशक्ति रोके। यह एक प्राणायाम हुआ। प्राण बाहर या अन्दर रोकते समय मन में मौन मन्त्र पाठ करता जावे।

(प्रारम्भ में—सिद्धासन में सीधे बैठकर ओ३म् का उच्चारण तीन बार पूरे श्वास के साथ करें)

ओं......म्........! ओं......म्........!! ओं......म्........!!!

१. यम = अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह।
२. नियम = शौच (पवित्रता), संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्राणिधान।

(उद्बोधन) गायत्री मन्त्रः

ओ३म्। भूर्भुवः स्वः।
तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ —यजुः० ३६।३

संकटत्राता, सुखप्रदाता, प्राणप्रिय जो ईश है।
सृष्टिकर्त्ता सर्व-व्यापक, दिव्य जो जगदीश है॥
उसके महान तेज से हम, शुद्ध हों सद्बुद्ध हों।
प्रेरणा से उस प्रभु की, हम कर्मरत उद्बुद्ध हों॥

आचमन मन्त्रः

विधि—*दाहिने हाथ की हथेली में जल लेकर निम्नलिखित मंत्र को प्रथमतः बोल कर तीन आचमन, अर्थात हथेली से जलपान करें। यदि जल न हो तो न करें। मंत्रोच्चारण अवश्य करें।*

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शँयोरभि स्रवन्तु नः॥ १ ॥ —यजुः० ३६।१२

हे दयामय! आप हम सब को सदा कल्याण दें।
शान्ति, शुचिकर, स्वास्थ्यकर हों, दिव्य बल दें, प्राण दें॥
रोग से, भय-संकटों से, दुःख से, सन्ताप से।
मुक्त हों, पावें सदा, सुख-शान्ति-वर्षा आपसे॥

अङ्गस्पर्श मन्त्राः

विधि—*जल के पात्र में से बायें हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अङ्गुलियों से स्पर्श करके, प्रथम दायीं ओर, और पश्चात बायीं ओर जल से स्पर्श निम्न मन्त्रों से करें—*

ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षु चक्षुः। ओं श्रोत्रं श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्। ओं कण्ठः। ओं शिरः। ओं बाहुभ्यां यशोबलम्। ओं करतलकरपृष्ठे।

माधुर्य से भरी हो, प्रभु हमारी वाणी।
बलवान प्राण होवें, आखें हों ज्योतिवाली।
हों कान ज्ञान-भूषित, नाभि बृहद् सुखारी।
पावन उदार हृदय, कण्ठ हो मधुर सुभाषी।
मेधावी स्वस्थ शिर हो, भुजायें बल-ओज-तेज धारी।
हाथों के दो तले भी, दानी सुयश भण्डारी॥

मार्जन मन्त्राः

विधि—*अब बाएँ हाथ में जल लेकर मध्यमा और अनामिका अङ्गुली के अग्रभाग से नेत्रादि अङ्गों पर जल छिड़कें। जो आलस्य न हो और जल प्राप्त न हो, तो न छिड़कें।*

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये। ओं जनः पुनातु नाभ्याम्। ओं तपः पुनातु पादयोः। ओं सत्यं पुनातु पुनशिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।

प्राणों के प्राण प्रभुवर! मस्तक पवित्र कर दो।
ज्योतिस्वरूप भगवन! आँखों में ज्योति भर दो॥
पावन हो कण्ठ सबका, हृदय महान् स्वामिन्।
नाभि हो निर्विकारी, और पैर सुपथ-गामिन॥
पुनि-पुनि पवित्र शिर हो, हे सत्यरूप स्वामी।
सर्वांग शुद्ध होवे, व्यापक विभो नमामी॥

प्राणायाम मन्त्राः

पुनः शास्त्रोक्त रीति से प्राणायाम[1] की क्रिया करें, और नीचे लिखे मन्त्रों का जप भी करते जावें। इस रीति से कम-से-कम तीन और अधिक-से-अधिक २१ प्राणायाम करें।

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः।
ओं तपः। ओं सत्यम्॥ —तैत्ति० प्र० १०।२७

नमो ओ३म् आनन्द शान्ति-प्रदाता, नमो भूः प्राणों के भी प्राणदाता।
नमो भुवः दुःखों को हर लेनेवाले, नमो स्वः आनन्द सुख देनेवाले॥
नमो हे महः ब्रह्म आदित्यरूपम्, नमो हे जनः सृष्टिकर्त्ता अनूपम्।
नमो हे तपः पूर्ण-पवित्रम्, नमो हे सर्वज्ञ सत्यं स्वरूपम्॥

(प्रत्याहार) अघमर्षण मन्त्राः

विधि—*तत्पश्चात् सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर और सृष्टिक्रम का विचार नीचे लिखे मन्त्रों से करें और जगदीश्वर को सर्वव्यापक, न्यायकारी, सर्वत्र, सर्वदा सब जीवों के कर्मों के दृष्टा को निश्चित मान के पाप की ओर अपने आत्मा और मन को कभी न जाने दें, किन्तु सदा धर्मयुक्त कर्मों में वर्त्तमान रखें।*

---

१. प्राणायाम की सही विधि के लिए पृष्ठ ३० देखें।

ओ३म् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोऽअर्णवः॥ १॥
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरोऽअजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी॥ २॥
सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः॥ ३॥

—ऋ० १०।१९०।१-३

प्रलयोपरान्त सृष्टि की रचना, तप और बल से करे तूही।
प्रकृति तत्त्वों को गति देकर, रचता सारा ब्रह्माण्ड तूही॥
सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि को, तूने ही प्रगटाया है।
तेरे ही ऋत औ सत ने, सबका साज सजाया है॥
दिन रात, पक्ष संवत में, काल का नियामक एक तूही।
पूर्व की भाँति इस सृष्टि का, कर्ता-धर्ता एक तूही॥
तेरे आगे नत-मस्तक हो, माँगे हम यही वरदान।
कुटिल पाप से हमें बचाते, रहना हरदम दयानिधान॥

पुनः आचमन

इस मन्त्र से एक बार बोल कर पुनः तीन आचमन करें। तदनन्तर गायत्र्यादि मन्त्रों के अर्थविचारपूर्वक परमेश्वर की स्तुति अर्थात् परमेश्वर के गुणों, और उपकारों का ध्यान कर पश्चात् ईश्वर का चिन्तन करें।

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शँयोरभिस्रवन्तु नः॥ —यजुः० ३६।१२

साधना के पथ पर, पूरण अभीष्ट कीजे।
यह नीर हो सुधामय, कल्याण दान दीजे॥

ईश चिन्तन (निर्गुण)—

तू है निरूपम निराकार, नित्य, शाश्वत, निर्लेप।
अनादि, अनुपम, निर्विकार, अनन्त, अजन्मा एक॥
अजर, अमर, अभय, बन्धन-रहित, अरूप।
तेरा निर्गुण रूप है, अविचल, अखण्ड, अनूप॥

ईश चिन्तन (सगुण)—

सगुण रूप तेरा मन भाता, मात-पिता, तूही मम भ्राता।
आत्मज्ञान और बल का दाता, पोषक, रक्षक, तूही कहाता॥
दया और करुणा का सागर, बुद्धि ज्ञान विवेक का आगर।
तेज, बल, साहस की खान, सत, चित, आनन्दरूप महान॥

(धारणा) मनसापरिक्रमा-मन्त्राः

निम्न मन्त्रों को पढ़ते जावें और अपने मन से चारों ओर बाहर-भीतर परमात्मा को पूर्ण जानकर निर्भय, निश्शङ्क, उत्साही, आनन्दित तथा पुरुषार्थी रहें—

ओ३म्। प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ १॥

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ २॥

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ३॥

उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ४॥

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ५॥

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ६॥

—अथर्व० ३।२७।१-६

भटकता मन हमारा, जिस भी दिशा में जाता।
पाता तुम्हीं को अधिपति, उसी दिशा में त्राता॥

प्राची में तू है अग्नि, अज्ञान को मिटाता।
रवि-रश्मियों के द्वारा, जीवन-प्रभा दिखाता॥
दक्षिण में इन्द्र तू है, कुमार्ग से बचाता।
पितरों के द्वारा तू ही, सद्-पथ हमें दिखाता॥
पश्चिम में तू वरुण है, शत्रुओं से हमें बचाता।
अन्नादि साधनों से, सम्पन्न तू बनाता॥
उत्तर में सोम है तू, आनन्द-रस पिलाता।
सद्भावों को हमारे, विद्युत सदृश जगाता॥
भूतल में तू है विष्णु, पर्यावरण का रक्षक।
पेड़ों के द्वारा हमको, देता है वायु-पोषक॥
आकाश में बृहस्पति, तू ही गुरू हमारा।
बरसाता तू ही निरन्तर, मस्तिष्क में ज्ञान-धारा॥
भौतिक विभूतियाँ हैं, तेरी प्रकट निशानी।
कैसे कहे यह वाणी, तेरी अकथ कहानी॥
दुःख में तू ही है साथी, सुख में तू ही सहारा।
तुझ से लगन लगी अब, सर्वस्व तू हमारा॥
बार-बार तुझको, स्वामी नमन हैं करते।
तेरी ही शक्तियों को, करते हैं हम नमस्ते॥
जो जन अथवा जिनसे, द्वेष हम हैं करते।
उस द्वेष को परस्पर, तेरे न्याय-जम्भे धरते॥
तेरी कृपा से भगवन, निर्मल हो मन हमारा।
एकाग्र-चित्त होकर, दर्शन करें तुम्हारा॥

(ध्यान) उपस्थानमन्त्राः

अब परमात्मा का उपस्थान अर्थात् परमेश्वर के निकट मैं और मेरे निकट परमात्मा है, ऐसी बुद्धि करके तथा धारणा बना के ध्यान करें—

ओ३म्। उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥ १ ॥

—यजुः० ३५।१४

प्रकृति से ऊपर उठे जब, अज्ञान-तम से दूर हो गये।
आत्म-दर्शन प्राप्त करके, साधना में लीन हो गये॥
देवों में देव, तेजपुञ्ज जो, है ज्योतिर्मय, ज्योतिष्मान्॥
ध्यान धरा उस ज्योतिपुञ्ज का, पाया ज्योति प्रकाश महान्॥ १ ॥

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः।
दृशे विश्वाय सूर्यम्॥ २ ॥ —यजुः० ३३।३१

ज्योतियुक्त होकर के जाना, जीवन में प्रकाश वही है।
सद्विवेक औ ज्ञान-ध्यान का, मूल आधार बस एक वही है॥
उसी देव के शाश्वत नियम, बन पताका फहराते हैं।
ज्योतिस्वरूप के पास स्वयं हम, ज्योतिर्मय हो जाते हैं॥ २ ॥

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳ सूर्यऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा॥ ३ ॥ —यजुः० ७।४२

जो है छाया हुआ चराचर, द्यौ पृथिवी और गगन में।
कैसा अचरज, वही समाया, मेरे दिल के एक कोने में॥
मित्र, वरुण और प्रगतिशील का, सच्चा साथी एक वही है।
रम रहा आत्मवत वही सभी में, कथन हमारा सदा सही है॥ ३ ॥

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ ४॥ —यजुः० ३६।२४

वह है चक्षु, सब का दृष्टा, कुछ भी उससे छुपा नहीं है।
देवों के हित में पहले से, दे रखा उसने क्या नहीं है॥
देखें, जीवें, सुनें, सुनावें, पूरी आयु, कृपानिधान।
जीवें सौ या उससे ऊपर, रहें अदीन, हे भगवान॥ ४॥

पुनः आचमन

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शँयोरभिस्रवन्तु नः॥ —यजुः० ३६।१२

सुख-शान्ति की वर्षा, सब ओर हो रही है।
आनन्द ही आनन्द है, कुछ भी कमी नहीं है॥

(समाधि) गायत्री अनुष्ठान

ओ३म्। भूर्भुवः स्वः।
तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ —यजुः० ३६। ३

प्राण-प्रदाता, संकट-त्राता, हे सुखदाता, ओ३म् ओ३म्।
सविता माता-पिता वरेण्यम्, जीवन दाता, ओ३म् ओ३म्॥
धारित रहें भर्ग में तेरे, रहें सुप्रेरित, ओ३म् ओ३म्।
होते रहें आनन्द-मगन हम, आनन्द-दाता, ओ३म् ओ३म्॥

समर्पण वाक्य

हे ईश्वर दयानिधे!
भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि कर्मणा
धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।

धर्म के हों हम धनी, अर्थ के दानी बनें।
कामनायें पूर्ण होवें, मोक्ष के मानी बनें॥
हे दयासागर प्रभो! समृद्ध हमको कीजिये।
जप-उपासना कर्म से, प्रभु सिद्धि तत्पर दीजिये॥

नमस्कार मन्त्रः

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयोभवाय च, नमः शङ्कराय च मयस्कराय च, नमः शिवाय च शिवतराय च॥ —यजुः० १६। ४१

जगदीश सौख्यदाता, तुमको नमन करें हम।
कल्याणकारी त्राता, तुमको नमन करें हम॥
हे विश्व के विधाता, शंकर तुम्हें नमस्ते।
हे शान्ति के प्रदाता, शिवतर तुम्हें नमस्ते॥

ओ३म् शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः॥

इति ब्रह्मयज्ञ *

* ब्रह्मयज्ञ के दो अङ्ग हैं—(१) सन्ध्योपासना, और (२) स्वाध्याय। दैनिक अग्निहोत्र के पश्चात् वेदादि सद्ग्रन्थों का नियमित रूप से स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए।
''**स्वाध्यायादिष्ट देवता सम्प्रयोगः**'' (योगदर्शन २.४४) स्वाध्याय से ही इष्ट देवता=ध्येय (आत्मा, परमात्मा, वेद, योगादि) के साथ सम्बन्ध हो जाता है, और उनकी प्राप्ति हो जाती है।

IV. अथ देवयज्ञ (दैनिक अग्निहोत्र) *

अथ आचमनमन्त्राः

निम्न मन्त्रों से अर्थ-विचार-पूर्वक तीन आचमन करें—

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा॥ १॥ इससे एक
ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा॥ २॥ इससे दूसरा
ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा॥ ३॥ इससे तीसरा

—तैत्तिरीय आरण्यक प्र० १०। अनु० ३२, ३५
—आश्वलायन गृ०सू० १। २४। १२-२१-२२

तत्पश्चात् बायीं हथेली में जल लेकर नीचे लिखे मन्त्रों से अर्थ-विचार-पूर्वक पहले दाहिनी ओर, पश्चात् बायीं ओर के अंगों को दाएं हाथ की अनामिका एवं मध्यमा अंगुलियों से स्पर्श करें।

अथ अङ्गस्पर्शमन्त्राः

ओं वाङ्मऽआस्येऽस्तु। इस मन्त्र से मुख,
ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु। इस मन्त्र से नासिका के दोनों छिद्र,
ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु। इस मन्त्र से दोनों आँखें,
ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु। इस मन्त्र से दोनों कान,
ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु। इस मन्त्र से दोनों बाहु,
ओम् ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु। इस मन्त्र से दोनों जंघा,
ओम् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु।
इस मन्त्र से सारे शरीर का मार्जन करें व जल के छींटे दें।

—पारस्करगृ० कण्डिका ३। सू० २५॥

अग्निहोत्र करते समय प्रत्येक अग्निहोत्री को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिये कि उसने यज्ञोपवीत धारण किया हुआ है। यदि यज्ञोपवीत नहीं पहने हैं, तो पृष्ठ ७२ पर दिये यज्ञोपवीत, मन्त्रों से यज्ञोपवीत स्त्री-पुरुष धारण करें। तदुपरान्त ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना एवं उपासना करें।

* इसका समय सूर्योदय के पश्चात् और सूर्यास्त से पूर्व किन्तु सन्ध्योपासना के पश्चात् है।

अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनामन्त्राः

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ १॥ —यजुः० ३०।३

अर्थ—हे **(सवितः)** सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त **(देव)** शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके हमको इस प्रकार सुप्रेरित करें, जिससे **(नः)** हमारे **(विश्वानि)** सम्पूर्ण **(दुरितानि)** दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःख **(परा सुव)** दूर हो जावें और **(यत्)** जो **(भद्रम्)** कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ है **(तत्)** वह सब **(नः)** हम को **(आ सुव)** प्राप्त होते रहें।

तू सर्वेश, सकल, सुखदाता, शुद्धस्वरूप विधाता है।
उसके कष्ट नष्ट हो जाते, जो तेरे ढिंग आता है।
सारे दुर्गुण दुर्व्यसनों से, हमको नाथ बचा लीजे।
मंगलमय गुण-कर्म-पदारथ, प्रेम सिन्धु हमको दीजे॥ १॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ २॥
—यजुः० १३।४

अर्थ—जो **(हिरण्यगर्भः)** स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करने हारे सूर्य-चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो **(भूतस्य)** उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का **(जातः)** प्रसिद्ध **(पतिः)** स्वामी **(एकः)** एक ही चेतनस्वरूप **(आसीत्)** था, जो **(अग्रे)** सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व **(समवर्तत्)** वर्तमान था, **(सः)** वह **(इमाम्)** इस **(पृथिवीम्)** भूमि **(उत्)** और **(द्याम्)** सूर्यादि को **(दाधार)** धारण कर रहा है। हम लोग उस **(कस्मै)** सुखस्वरूप **(देवाय)** शुद्ध परमात्मा के लिए **(हविषा)** ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अतिप्रेम से **(विधेम)** विशेष भक्ति किया करें॥ २॥

तू ही स्वयं प्रकाश, सुचेतन, सुख स्वरूप शुभ त्राता है।
सूर्य चन्द्र लोकादिक को तू, रचता और टिकाता है।
पहले था, अब भी तू ही है, घट-घट में व्यापक स्वामी।
योग, भक्ति, तप द्वारा तुझको, पावें हम अन्तर्यामी॥ २॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ३॥
—यजुः० २५।१३

अर्थ—**(यः)** जो **(आत्मदाः)** आत्मज्ञान का दाता, **(बलदाः)** शरीर, आत्मा और समाज के बल का देनेहारा, **(यस्य)** जिसकी **(विश्व)** सब **(देवाः)** विद्वान् लोग **(उपासते)** उपासना करते हैं और **(यस्य)** जिसका **(प्रशिषम्)** प्रत्यक्ष, सत्यस्वरूप शासन और न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं, **(यस्य)** जिसका **(छाया)** आश्रय ही **(अमृतम्)** मोक्षसुखदायक है, **(यस्य)** जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही **(मृत्युः)** मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस **(कस्मै)** सुखस्वरूप **(देवाय)** सकल ज्ञान के देनेहारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए **(हविषा)** आत्मा और अन्तःकरण से **(विधेम)** भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा-पालन करने में तत्पर रहें॥ ३॥

तू ही आत्मज्ञान बलदाता, सुयश विज्ञ जन गाते हैं।
तेरी चरण-शरण में आकर भवसागर तर जाते हैं।
तुझको ही पाना जीवन है, मरण तुझे बिसराने में।
सारी शक्ति लगा दें प्रभु हम, तुझ से लगन लगाने में॥ ३॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैकऽइद्राजा जगतो बभूव।
य ईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ४॥
—यजुः० २३।३

अर्थ—**(यः)** जो **(प्राणतः)** प्राणवाले और **(निमिषतः)** अप्राणि-रूप **(जगतः)** जगत् का **(महित्वा)** अपने अनन्त महिमा से **(एक इत्)** एक ही **(राजा)** विराजमान राजा **(बभूव)** है, **(यः)** जो **(अस्य)** इस **(द्विपदः)** मनुष्यादि और **(चतुष्पदः)** गौ आदि प्राणियों के शरीर की **(ईशे)** रचना करता है, हम लोग उस **(कस्मै)** सुखस्वरूप **(देवाय)** सकलैश्वर्य के देनेहारे परमात्मा के लिए **(हविषा)** अपनी सकल उत्तम सामग्री से **(विधेम)** विशेष भक्ति करें॥ ४॥

तूने अपनी अनुपम शक्ति से, जग-ज्योति जगाई है।
मनुज और पशुओं को रच कर, निज महिमा प्रगटाई है।
अपने हिय सिंहासन पर, श्रद्धा से तुझे बिठाते हैं।
भक्ति भाव से भेंटें लेकर, तव चरणों में आते हैं॥ ४॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ५॥

—यजुः० ३२।६

अर्थ—**(येन)** जिस परमात्मा ने **(उग्रा)** तीक्ष्ण स्वभाववाले **(द्यौः)** सूर्य आदि **(च)** और **(पृथिवी)** भूमि को **(दृढ़ा)** धारण किया है, **(येन)** जिस जगदीश्वर ने **(स्वः)** सुख को **(स्तभितम्)** धारण किया है और **(येन)** जिस ईश्वर ने **(नाकः)** दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है। **(यः)** जो **(अन्तरिक्षे)** आकाश में **(रजसः)** सब लोक-लोकान्तरों को **(विमानः)** विशेषमानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस **(कस्मै)** सुखदायक **(देवाय)** कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए **(हविषा)** सब सामर्थ्य से **(विधेम)** विशेष भक्ति करें॥ ५॥

तारे, रवि चन्द्रादिक रच कर निज प्रकाश चमकाया है।
धरणी को धारण कर तूने कौशल अलख लखाया है।
तू ही विश्व विधाता पोषक, तेरा ही हम ध्यान धरें।
शुद्ध भाव से भगवन्, तेरे भजनामृत का पान करें॥ ५॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥ ६॥

—ऋ० १०।१२१।१०

अर्थ—हे **(प्रजापते)** सब प्रजा के स्वामी परमात्मन्! **(त्वत्)** आपसे **(अन्यः)** भिन्न दूसरा कोई **(ता)** उन **(एतानि)** इन **(विश्वा)** सब **(जातानि)** उत्पन्न हुए जड़-चेतनादिकों को **(न)** नहीं **(परि बभूव)** तिरस्कार करता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। **(यत्कामाः)** जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग **(ते)** आपका **(जुहुमः)** आश्रय लेवें और वाञ्छा करें, **(तत)** उस-उसकी कामना **(नः)** हमारी सिद्ध **(अस्तु)** होवे, जिस से **(वयम्)** हम लोग **(रयीणाम्)** धनैश्वर्यों के **(पतयः)** स्वामी **(स्याम)** होवें॥ ६॥

तुझ से भिन्न न कोई जग में, सब में तू ही समाया है।
जड़, चेतन सब तेरी रचना, तुझ में आश्रय पाया है।

हे सर्वोपरि विभो! विश्व का, तूने साज सजाया है।
विद्या, बल, धन, ऐश्वर्य दीजिये, यही भक्त को भाया है॥ ६॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त॥ ७॥

—यजुः० ३२।१०

अर्थ—हे मनुष्यो! **(सः)** वह परमात्मा **(नः)** अपने लोगों का **(बन्धुः)** भ्राता के समान सुखदायक, **(जनिता)** सकल जगत् का उत्पादक, **(सः)** वह **(विधाता)** सब कामों का पूर्ण करनेहारा, **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(भुवनानि)** लोकमात्र और **(धामानि)** नाम, स्थान, जन्मों को **(वेद)** जानता है और **(यत्र)** जिस **(तृतीये)** सांसारिक सुख-दुःख से रहित, नित्यानन्दयुक्त **(धामन्)** मोक्षस्वरूप धारण करनेहारे परमात्मा में **(अमृतम्)** मोक्ष को **(आनशानाः)** प्राप्त हो के **(देवाः)** विद्वान् लोग **(अध्यैरयन्त)** स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य राजा और न्यायाधीश है। अपने लोग मिल के सदा उसकी भक्ति किया करें॥ ७॥

तू गुरु है, प्रजेश भी तू है, पाप-पुण्य फल दाता है।
तू ही सखा बन्धु मम तू ही, तुझ से ही सब नाता है।
भक्तों को इस भव बन्धन से तू ही मुक्त कराता है।
तू है अज अद्वैत महाप्रभु, सर्व काल का ज्ञाता है॥ ७॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम॥ ८॥

—यजुः० ४०।१६

अर्थ—हे **(अग्ने)** स्वप्रकाशक, ज्ञानस्वरूप, सब जगत् के प्रकाश करनेहारे **(देव)** सकल सुखदाता परमेश्वर! आप जिससे **(विद्वान्)** सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, कृपा करके **(अस्मान्)** हम लोगों को **(राये)** विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए **(सुपथा)** अच्छे, धर्मयुक्त, आप्त लोगों के मार्ग से **(विश्वानि)** सम्पूर्ण **(वयुनानि)** प्रज्ञान और उत्तम कर्म **(नय)** प्राप्त कराइए और **(अस्मत्)** हम से **(जुहुराणम्)** कुटिलतायुक्त **(एनः)** पापरूप कर्म को **(युयोधि)** दूर कीजिए। इस कारण हम लोग **(ते)** आपकी **(भूयिष्ठाम्)** बहुत प्रकार की स्तुतिरूप **(नम उक्तिम्)** नम्रतापूर्वक प्रशंसा **(विधेम)** सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें॥ ८॥

तू है स्वयं प्रकाश रूप प्रभु, सब का सृजनहार तूही।
रसना निश दिन रटे तुम्हीं को, मन में बसना सदा तूही
अघ-अनर्थ से हमें बचाते रहना, हर दम दयानिधान
अपने भक्त जनों को भगवन, दीजे यही विशद वरदान॥ ८॥

अब यज्ञवेदि में समिधा * चयन करें, तत्पश्चात्—

अथ अग्न्याधानम्

ओं भूर्भुवः स्वः। —गोभिल गृह्य० प्र० १, खं० १, सू० ११॥

इस मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मण, क्षत्रिय वा वैश्य के घर से अग्नि ला, **अथवा** *घृत का दीपक जला, उससे कपूर या घृत लगी समिधा को प्रज्वलित कर किसी एक पात्र में धरकर उसमें छोटी-छोटी समिधा लगाके यजमान वा पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों से उठा, यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड़कर, निम्न मन्त्र से अग्न्याधान करे—*

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे॥

—यजुः० ३।५

इस मन्त्र से वेदी के बीच में अग्नि को धर, उस पर छोटी-छोटी समिधा और थोड़ा कपूर[१] धर, निम्न मन्त्र पढ़के अग्नि को प्रदीप्त करे—

अग्नि प्रदीपन

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳ सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥

—यजुः० १५।५४

त्रि समिदाधानम्

जब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे, तब चन्दन की अथवा ऊपर-लिखित पलाशादि की तीन समिधा आठ-आठ अंगुल की घृत में डुबो, उनमें से एक-एक निकाल नीचे लिखे एक-एक मन्त्र से

* समिधा पलाश, शमी, पीपल, बड़, गूलर, आम, विल्व वा चन्दन के वृक्षों की सूखी टहनियों की हो, किन्तु यह कीड़ा लगी, मलिन और अपवित्र न हो। समिधा अंगूठे से अधिक मोटी नहीं होनी चाहिए। ऐसा कात्यायन का मत है।

१. अग्नि प्रदीपन के लिए कपूर का विधान है। माचिस की तीली, रुई, बत्ती, गोले की गिरी, गन्ने की खोई का नहीं।

एक-एक समिधा को (चार मन्त्रों से तीन समिधाओं को-सं०) अग्नि को अर्पित करें—

ओ३म् अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदं न मम॥ १॥

इससे पहली समिधा— —आ०गृह्य० १।१०।१२

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्।
आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा॥ इदमग्नये—इदं न मम॥ २॥

और —यजुः० ३।१

ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे—इदं न मम॥ ३॥

इन दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा। —यजुः० ३।२

ओं तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे—इदं न मम॥ ४॥

—यजुः० ३।३

इस मन्त्र से तीसरी समिधा की आहुति देवें।

इन मन्त्रों से समिदाधान करके नीचे लिखे मन्त्र से एक-एक करके पाँच वार घृत की आहुति देनी।

पञ्च घृताहुतयः *

ओ३म् अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदं न मम॥ १॥ —आ० गृह्य० १।१०।१२

जल-सिञ्चनम्

तत्पश्चात् निम्नलिखित तीन मन्त्रों से, अञ्जलि में जल लेकर क्रमशः पूर्व (उत्तर से दक्षिण) पश्चिम दिशा में (दक्षिण से उत्तर की ओर) और उत्तर दिशा में (पश्चिम से पूर्व की ओर) जल छिड़कावें—

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व॥ —इससे पूर्व दिशा में
ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व॥ —इससे पश्चिम दिशा में

* प्रत्येक घृताहुति का परिमाण न्यूनतम ६ मासा का है; अधिक हो, तो बहुत अच्छा है।

ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व॥ —इससे उत्तर दिशा में

—गोभि० गृह्य० १।३।१-३

इस मन्त्र से वेदी या कुण्ड के चारों ओर पूर्व दक्षिण कोण से आरम्भ करके दक्षिण-पश्चिम, उत्तर-पूर्व, उत्तर-दक्षिण, इस क्रम में जल छिड़कें—

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु॥

—यजुः० ३०।१

इसके पश्चात् मुख्य होम के **आदि** *और* **अन्त** *में जो आहुतियाँ दी जाती हैं उनमें से यज्ञ-कुण्ड के उत्तर-भाग में जो एक आहुति और यज्ञ-कुण्ड के दक्षिण-भाग में दूसरी आहुति देनी होती है, उन्हें* **'आघारावाज्याहुति'** *कहते हैं, और जो कुण्ड के मध्य में दो आहुतियाँ दी जाती हैं उनका नाम* **'आज्यभागाहुति'** *है। घृतपात्र में से स्रुवा को भर, अँगूठा, मध्यमा और अनामिका से स्रुवा को पकड़ के—*

आघारावाज्याहुति मन्त्राः

ओम् अग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये—इदं न मम॥ १॥

इस मन्त्र से वेदी के उत्तर-भाग अग्नि में आहुति दें।

ओम् सोमाय स्वाहा॥ इदं सोमाय—इदं न मम॥ २॥

—गोभिल० गृह्य० १।८।२४

इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण-भाग अग्नि में आहुति दें—

आज्यभागाहुतिमन्त्राः

ओम् प्रजापतये स्वाहा॥ इदं प्रजापतये—इदं न मम॥ ३॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा॥ इदमिन्द्राय—इदं न मम॥ ४॥

इन दो मन्त्रों से वेदी के मध्य भाग में आहुति दें।

नोट—होम का शाकल्य सुगन्धित पदार्थ (जैसे गुगुलु, चन्दन, अगर, तगर, केशर, कस्तूरी, इलायची, जावित्री, जायफल आदि), मिष्ट (जैसे शहद, गुड़, खांड, बूरा आदि), पुष्टिकारक (जैसे मेवा, तिलहन, अन्न आदि), कीटाणुनाशक (जैसे गिलोय, सोमलता, जटामासी, शतावर, आँवला, गोखरु आदि) से यथाविधि बनाया जाय। उसे सुवर्ण, चांदी, कांसा आदि धातु वा काष्ठ के पात्र में वेदी के पास सुरक्षित धरें। घृत को उष्णकर, छान, सुगन्ध्यादि पदार्थ (जैसे केशर, कस्तूरी आदि) मिलाकर पात्रों में रख लें।

उपरोक्त आहुतियाँ देकर नीचे लिखे हुए मन्त्रों से प्रातःकाल अग्निहोत्र करें।[१]

प्रातःकाल आहुति के मन्त्र

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा॥ ५॥

ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ ६॥

ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा॥ ७॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या।
जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा॥ ८॥ —यजुः० ३।९-१०

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा॥
इदमग्नये प्राणाय—इदं न मम॥ ९॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा॥
इदं वायवेऽपानाय—इदं न मम॥ १०॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा॥
इदमादित्याय व्यानाय—इदं न मम॥ ११॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा॥ इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः—इदं न मम॥ १२॥

ओं आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा॥ १३॥

—तै०आ० १०।१५

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥ १४॥ —यजुः० ३२।१४

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा॥ १५॥ —यजुः० ३०।३

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा॥ १६॥ —यजुः० ४०।१६

१. सामग्री की आहुतियाँ केवल प्रातः और सायंकालीन मन्त्रों से देनी हैं। शेष सब घृत आहुतियाँ हैं। हाँ, यदि गायत्री अथवा 'विशेष' मन्त्रों से अधिक आहुतियाँ देनी हों तो घृत के साथ सामग्री की आहुतियाँ भी दी जा सकती हैं।

२. अग्निहोत्र वा यज्ञ में स्वाहा से पूर्व 'ओम्' लगाना उचित नहीं। इसी प्रकार स्वाहा-स्वाहा दो बार बोलना ठीक नहीं।

यदि घृत या सामग्री शेष रहे तो गायत्री मन्त्र अथवा वैदिक श्री सूक्त के मन्त्रों से या अन्य विशेष वेद मन्त्रों से श्रद्धापूर्वक आहुतियाँ देवें, अथवा अधिक होम करने की इच्छा जहाँ तक हो, वहाँ तक स्वाहा अन्त में पढ़कर गायत्री मन्त्र से होम करें।

पुनः आघारावाज्याहुति वा आज्याभागाहुति देकर इस मन्त्र को तीन बार बोल के एक-एक करके ३ पूर्णाहुति करें।

ओं सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा॥

(सायंकाल पृथक् यज्ञ करना हो वा प्रातःकाल के साथ ही करना हो तो निम्न मन्त्रों से आहुति दें।)

सायंकाल के होम की पूर्ण विधि

आघारावाज्यभागाहुति की ४ निम्न आहुतियाँ

ओम् अग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये—इदं न मम॥१॥

इससे उत्तर भाग अग्नि में

ओं सोमाय स्वाहा॥ इदं सोमाय—इदं न मम॥ २॥

इसके दक्षिण भाग अग्नि में

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये—इदं न मम॥ ३॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय—इदं न मम॥ ४॥

इनसे वेदी के बीच अग्नि में

सायंकालीन आहुति के मन्त्र

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा॥ ५॥

ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ ६॥

तीसरे मन्त्र को मन में उच्चारण करके मौन आहुति दें।

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा॥ ७॥

ओम् सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या।

जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा॥ ८॥ —यजुः० ३।९-१०

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा॥ इदमग्नये प्राणाय—इदं न मम॥ ९॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा॥

इदं वायवेऽपानाय—इदं न मम॥ १०॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा॥

इदमादित्याय व्यानाय—इदं न मम॥ ११॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा॥

इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः—इदं न मम॥ १२॥

ओं आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा॥ १३॥

—तै०आ० १०।१५

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।

तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥ १४॥

—यजुः० ३२।१४

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।

यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा॥ १५॥ —यजुः० ३०।३

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा॥ १६॥ —यजुः० ४०।१६

इस प्रकार प्रत्येक मनुष्य को प्रातः १६ तथा सायं १६ आहुति देनी ही चाहिएँ। जो इससे अधिक होम करने की जहाँ तक इच्छा हो, वहाँ तक स्वाहा अन्त में पढ़कर गायत्री मन्त्र अथवा वैदिक श्री सूक्त के मन्त्रों से या अन्य विशेष वेद मन्त्रों से श्रद्धापूर्वक आहुतियाँ देवें। यदि एक समय ही अग्निहोत्र करें तो दोनों काल के सब मन्त्रों से सब आहुति दें।

पुनः आघारावाज्याहुति वा आज्याभागाहुति देकर निम्नलिखित मन्त्र से स्रुवा को घृत से भरके एक-एक करके तीन पूर्णाहुति करें।*

ओं सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा॥

अथ महामृत्युञ्जयमन्त्रः

ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।

उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्।

उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः॥

—यजुर्वेद अ० ३।६०

---

* पूर्णाहुति के पश्चात् ''वसो पवित्रमसि शतधारम्.........'' मन्त्र से घृत का अग्नि में प्रक्षेप करना ठीक नहीं।

अग्निहोत्र प्रार्थना

(१)

ओं तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाहि॥ १ ॥
ओं आयुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मेदेहि॥ २ ॥
ओं वर्चोदाऽअग्नेऽसि वर्चो मे देहि॥ ३ ॥
ओं अग्ने यन्मे तन्वाऽ ऊनं तन्मऽआपृण॥ ४॥

—यजुः० ३।१७

ओं तेजोऽसि तेजो मयि धेहि॥ ५ ॥
ओं वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि॥ ६ ॥
ओं बलमसि बलं मयि धेहि॥ ७॥
ओं ओजोऽसि ओजोमयि धेहि॥ ८ ॥
ओं मन्युरसि मन्युं मयि धेहि॥ ९ ॥
ओं सहोऽसि सहो मयि धेहि॥ १०॥ —यजुः० १९।९
ओं यत्तेऽग्ने तेजस्तेनाऽहं तेजस्वी भूयासम्॥ ११ ॥
ओं यत्तेऽग्ने वर्चस्तेनाऽहं वर्चस्वी भूयासम्॥ १२ ॥
ओं यत्तेऽग्ने हरस्तेनाऽहं हरस्वी भूयासम्॥ १३ ॥

—तैत्तिरीय आरण्यक ४४।२; आश्व० गृ० १।२१।४

ओं मेधां मे देवः सविता आदधातु॥ १४॥
ओं मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु॥ १५ ॥
ओं मेधां मे अश्विनौ देवावाधत्तां पुस्करस्त्रजौ॥ १६ ॥

—पार० गृ०, २।४।८

(२)

पूजनीय प्रभो हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिये।
छोड़ देवें छल-कपट को, मानसिक बल दीजिये॥
वेद की बोलें ऋचाएँ, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोकसागर से तरें॥
अश्वमेधादिक रचाएँ, यज्ञ पर-उपकार को।
धर्म मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को॥

नित्य श्रद्धा भक्ति से, यज्ञादि हम करते रहें।
रोग-पीड़ित विश्व के, सन्ताप सब हरते रहें॥
भावना मिट जाए मन से, पाप-अत्याचार की।
कामनाएँ पूर्ण होवें, यज्ञ से नर-नार की॥
लाभकारी हो हवन, हर जीवधारी के लिये।
वायु-जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किये॥
स्वार्थभाव मिटे हमारा, प्रेम-पथ-विस्तार हो।
इदं न मम का सार्थक, प्रत्येक से व्यवहार हो॥
प्रेम-रस में तृप्त होकर, वन्दना हम कर रहे।
'नाथ' करुणारूप करुणा, आपकी सब पर रहे॥

—लोकनाथ 'तर्कवाचस्पति'

शान्तिपाठ

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥

—यजुः० ३६।१७

शान्ति कीजिये प्रभु त्रिभुवन में।
जल में थल में और गगन में, अन्तरिक्ष में अग्नि पवन में।
ओषधि वनस्पति, वन, उपवन में, सकल विश्व के जड़ चेतन में॥
शान्ति कीजिये..........
ब्राह्मण के उपदेश वचन में, क्षत्रिय के द्वारा हो रण में।
वैश्य जनों के होवे धन में, औ शूद्रों के हो चरणन में॥
शान्ति कीजिये..........
शान्ति, राष्ट्र निर्माण सृजन में, नगर ग्राम और भवन में।
जीव मात्र के तन में मन में, और जगत् के हो कण-कण में॥
शान्ति कीजिये..........

ब्रह्मयज्ञ के अन्तर्गत जो **स्वाध्याय** कर्म सम्मिलित है, उस स्वाध्याय को देवयज्ञ के पश्चात् प्रतिदिन करने में प्रमाद कभी न करें।

V. श्री सूक्तम् वन्दन

वैदिक श्री सूक्तम्

(सर्व प्रकार की श्री, लक्ष्मी, धन, ऐश्वर्य, मेधा, बुद्धि, आयु, नीरोगता की प्राप्ति के लिये) इस श्री सूक्त के प्रस्तोता हैं स्व० पं० वीरसेन जी वेदश्रमी, वेद विज्ञानाचार्य, वेद सदन, इन्दौर (म०प्र०)

ओ३म्। भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ —यजुः० ३६।३

वाजश्च मे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥१॥

प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च मऽआधीतं च मे वाक् च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥२॥

ओजश्च मे सहश्च मेऽआत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मेऽङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे परूᳬंषि च मे शरीराणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥३॥

ज्यैष्ठ्यं च मेऽआधिपत्यं च मे मन्युश्च मे भामश्च मेऽमश्च मेऽम्भश्च मे जेमा च मे महिमा च मे वरिमा च मे प्रथिमा च मे वर्षिमा च मे द्राघिमा च मे वृद्धं च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥४॥ —यजुः० १८।१-४

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्।
सनिं मेधामयासिषᳬं स्वाहा॥५॥

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥६॥

मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा॥७॥

इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम्।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा॥८॥
—यजुः० ३२।१३-१६

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय।
पशूनाᳬं रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा॥९॥
—यजुः० ३९।४

कया नश्चित्रऽआ भुवदूती सदावृधः सखा।
कया शचिष्ठया वृता॥१०॥ —यजुः० ३६।४

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम॥११॥
—यजुः० ५।३६

दिवो वा विष्णऽउत वा पृथिव्या महो वा विष्णऽउरोरन्तरिक्षात्। उभा हि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणादोत सव्याद्विष्णवे त्वा॥१२॥ —यजुः० ५।१९

भूरिदा भूरि देहि नो मा दभ्रं भूर्या भर।
भूरि घेदिन्द्र दित्ससि॥१३॥ —ऋ० ४।३२।२०

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे।
पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्॥१४॥
—ऋ० २।२१।६

भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥१५॥ —ऋ० १०।१२१।१०

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं मऽइषाण सर्वलोकं मऽइषाण॥१६॥
—यजुः० अ० ३१। मं० २२

यह वैदिक श्रीसूक्त—श्री, लक्ष्मी, धन, ऐश्वर्य, मेधा, बुद्धि, आयु, आरोग्यता, समृद्धि, बल, तेज, रक्षा आदि की प्राप्ति, वृद्धि, शुभ दिवस सम्पादन, मंगल कामना, प्रार्थना एवं साधना के लिये अत्यन्त उपयोगी और अनुभूत है। अतः प्रतिदिवस पाठ एवं हवन के द्वारा यथेच्छ लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

इति वैदिक श्रीसूक्तम्

V. पितृ, बलिवैश्वदेव एवं अतिथियज्ञ

अथ पितृयज्ञः

अग्निहोत्र के पश्चात् पितृयज्ञ अर्थात् जीवित देवों, ऋषियों और पितरों को यथा—माता, पिता, दादा, दादी, नाना, नानी, आचार्य, गुरु, उपाध्याय आदि मान्यों की यथावत् श्रद्धाभाव से सेवा-सुश्रूषा, सहयोग वा उनका संग करना तथा उनकी आज्ञाओं का पालन करना ''श्राद्ध'' कहाता है; तथा अन्न-जल, भोजन-दूध, वस्त्र, औषधि आदि से तृप्त करना ''तर्पण'' कहाता है। 'श्राद्ध' और 'तर्पण' दोनों ही पितृयज्ञ के अंग हैं और यह जीवित पितरों को ही लागू होते हैं, मृतकों को नहीं।*

इति पितृयज्ञः

अथ भूतयज्ञः (बलिवैश्वदेव यज्ञ)

निम्नलिखित दस मन्त्रों से घृत-मिश्रित भात की, यदि भात न बना हो तो, खट्टा, लवणान्न और क्षार को छोड़कर, पाकशाला में जो कुछ भोजन बना हो, उसी की आहुति नित्य दें—

ओम् अग्नये स्वाहा॥ १ ॥
ओं सोमाय स्वाहा॥ २ ॥
ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा॥ ३ ॥
ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा॥ ४ ॥
ओं धन्वन्तरये स्वाहा॥ ५ ॥
ओं कुह्वै स्वाहा॥ ६ ॥
ओं अनुमत्यै स्वाहा॥ ७ ॥
ओं प्रजापतये स्वाहा॥ ८ ॥
ओं सह द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा॥ ९ ॥
ओं स्विष्टकृते स्वाहा॥ १० ॥

* प्रमाण तथा विशेष विवरण के लिए देखें ऋषि दयानन्दकृत पञ्चमहायज्ञ विधि।

तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों से बलिदान करें। एक पत्तल व थाली में यथोक्त दिशाओं में भाग रखना। यदि भाग रखने के समय कोई अतिथि आ जाए तो उसी को देना अथवा अग्नि में डालना चाहिए—

ओं सानुगायेन्द्राय नमः॥ १ ॥ इससे पूर्व
ओं सानुगाय यमाय नमः॥ २ ॥ इससे दक्षिण
ओं सानुगाय वरुणाय नमः॥ ३ ॥ इससे पश्चिम
ओं सानुगाय सोमाय नमः॥ ४ ॥ इससे उत्तर
ओं मरुद्भ्यो नमः॥ ५ ॥ इससे द्वार
ओं अद्भ्यो नमः॥ ६ ॥ इससे जल स्थान
ओं वनस्पतिभ्यो नमः॥ ७ ॥ इससे ऊखल स्थान
ओं श्रियै नमः॥ ८ ॥ इससे ईशान दिशा में
ओं भद्रकाल्यै नमः॥ ९ ॥ इससे नैर्ऋत्य दिशा में
ओं ब्रह्मपतये नमः॥ १० ॥
ओं वास्तुपतये नमः॥ ११ ॥ इनसे मध्य
ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः॥ १२ ॥
ओं दिवाचारिभ्यो भूतेभ्यो नमः॥ १३ ॥ इनसे ऊपर
ओं नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्यो नमः॥ १४ ॥
ओं सर्वात्मभूतये नमः॥ १५ ॥ इससे पृष्ठ में
ओं पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः॥ १६ ॥ इससे दक्षिण

—मनु० ३।८७-९१

इसके पश्चात् घृतसहित लवणान्न लेके—

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम्।
वायसानां कृमीणां च शनकैर्निर्वपेद् भुवि॥

—मनु० ३।९२

अर्थ—कुत्ता, पतित, चाण्डाल, पापरोगी, काक और कृमि—इन छह नामों से छह भाग पृथिवी में धरे, और छह भाग जिस-जिस नाम के हों उस-उस को दे देवे।

इति बलिवैश्वदेवविधिः॥

अथ अतिथियज्ञः

तद्यस्यैवं विद्वान् व्रात्योऽतिथिर्गृहानागच्छेत्॥ १॥

स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद् व्रात्य क्वावात्सीर्व्रात्योदकं व्रात्य तर्पयन्तु व्रात्य यथा ते प्रियं तथास्तु व्रात्य यथा ते वशस्तथास्तु व्रात्य यथा ते निकामस्तथाऽस्त्विति॥ २॥

—अथर्व० १५।११।१,२

जब पूर्ण विद्वान् परोपकारी, जितेन्द्रिय, धार्मिक, छल-कपट रहित, सत्योपदेशक, संन्यासी गृहस्थों के घर आवें, तब गृहस्थ लोग स्वयं समीप जाकर उक्त विद्वानों को प्रणाम आदि करके उत्तम आसन पर बैठाकर पूछें कि कल के दिन आपने कहाँ निवास किया था? हे ब्रह्मन्! जलादि पदार्थ जो आपको अपेक्षित हों ग्रहण कीजिए और हम लोगों को अपने सत्योपदेश से तृप्त कीजिए। हे विद्वान् व्रात्य, जिस प्रकार से आपकी प्रसन्नता हो वैसी आपकी सेवा हमलोग करें। इस प्रकार धार्मिक, परोपकारी, सत्योपदेशक, पक्षपातरहित, शान्त, सर्वहितकारक विद्वानों की अन्नादि से सेवा एवम् उनसे प्रश्नोत्तर आदि करके विद्या प्राप्त करना अतिथियज्ञ कहाता है, उसे नित्यप्रति किया करें तथा सेवा और सत्संग से आनन्द में रहें।

गृहस्थ को चाहिए कि घर आया हुआ अतिथि आसन, भोजन, शय्या, जल, फल-मूल आदि से सत्कार किये बिना न रहे। विशेषत: किसी भी अतिथि को सूर्यास्त के बाद वापस लौटाना ठीक नहीं। जो पदार्थ स्वयं खाये, अतिथि को अवश्य खिलाए। 'अतिथिदेवो भव' (तैत्तिरीय आरण्यक १।११२) अतिथि का सत्कार करना, सौभाग्य, यश, दीर्घायु और सुख प्रदान करनेवाला होता है।

इति अतिथियज्ञ॥

VII. विविध प्रार्थनाएँ

भोजन-प्रार्थना

भोजन से पूर्व उच्चारणीय मन्त्र

ओम् अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः।
प्रप्र दातारं तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे॥ १॥

—यजुः० ११।८३

ओं स्तविष्यामि त्वामहं विश्वस्यामृत भोजन अग्ने
त्रातारममृतं मियेध्य यजिष्ठं हव्यवाहन॥ २॥

—ऋग्० १।४४।५

हे **(अन्नपते)** अन्न के स्वामी परमात्मन्! **(नः)** हमें **(अन-अमीवस्य शुष्मिणः अन्नस्य)** अमीवा से रहित, रोग निवारक स्वास्थ्यवर्धक बलकारक अन्न **(देहि)** प्रदान कीजिए।

(दातारम्) हमारे अन्नदाता की **(प्र प्र तारिष)** बहुत-बहुत बढ़ोत्तरी हो। अन्नदानियों का अधिकाधिक अन्नैश्वर्य बढ़े। **(नः)** हमारे **(द्विपदे)** दो पैर वाले और **(चतुष्पदे)** चार पैरवाले साथियों अर्थात् समस्त देहधारियों के लिए **(ऊर्जं धेहि)** ओज, पराक्रम और शक्ति अन्न द्वारा प्राप्त हो॥ १॥

हे **(विश्वस्यामृत भोजन)** विश्व के अमृत-तुल्य भोजन!

तू ही **(अग्ने)** अग्नि है, गतिप्रदाता है। **(त्रातारम्)** सबका त्राण करनेवाला है। **(अमृतम्)** तू ही अमृत है। तू ही **(मियेध्य)** क्षुधा का नाशक है। तुझसे ही **(यजिष्ठम्)** सबका सत्कार होता है। तू ही **(हव्यवाहन)** हवियों का वाहक है। हमारे जीवन की हवि है। **(अहम्)** मैं **(त्वाम्)** तेरी **(स्तविष्यामि)** स्तुति करूँगा। [**स्तोता वो अमृतः स्यात**—स्तुति करनेवाला ही अमृत को प्राप्त होता है]

भोजन के बाद उच्चारणीय मन्त्र

ओं मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी॥

—ऋ० १०।११७।६

हे अन्नमय प्रभो!

(अप्रचेताः) बुद्धिशून्य मनुष्य ही **(मोघम् अन्नम्)** मुफ़्त का भोजन **(विन्दते)** प्राप्त करने का यत्न करता है। **(सत्यम् ब्रवीमि)** सच कहता हूँ। **(सः)** वह अन्न **(तस्य)** उसके लिए **(वधः इत्)** नाश/हनन का कारण है। **(केवलादी)** अकेला खानेवाला **(केवलाघः)** केवल पापी ही **(भवति)** होता है, क्योंकि वह **(न)** न तो **(अर्यमणम्)** आर्यमान्यों को **(पुष्यति)** पुष्ट करता है, और **(नो)** न ही अपने **(सखायम्)** सखाओं/मित्रों को। अत: मैं मिल बाँट कर ही खाता रहूँ।

कोई भी औषधि पान करते समय प्रार्थना

ओं सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः॥ १ ॥

—यजुर्वेद ६।२२, ३६।१२

ओं रुद्र जलाषभेषज नीलशिखण्ड कर्मकृत्। प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान्कृण्वोषधे॥ २ ॥

—अथर्व० २।२७।६

यह **(ओषधयः)** ओषधि[याँ] **(नः)** हमें **(आपः)** जल के समान शान्तिदायक और **(सुमित्रिया)** अच्छे मित्र के समान हितकारक **(सन्तु)** हो/हों। हमारी **(तस्मै)** उस रोग, पीड़ा आदि के लिए **(यः)** जो **(अस्मान्)** हमको **(द्वेष्टि)** दुःखी करते हैं, **(च)** और **(वयम्)** हम **(यम्)** जिनको **(द्विष्मः)** नहीं चाहते, उनको यह ओषधि[याँ] **(दुर्मित्रियाः)** शत्रु के समान **(सन्तु)** होवें।

हे **(रुद्र)** रोगों को रुलानेवाले परमेश्वर!

आप **(जलाषभेषज)** सुख स्वरूप, सबके चिकित्सक **(नील शिखण्ड)** तापहारी **(कर्मकृत्)** कर्मकुशल **(ओषधे)** ओषधि-स्वरूप हो। मेरे शरीर में **(प्राशं प्रतिपाशः)** जो प्रतिवादी शक्तियाँ मेरे शारीरिक सन्तुलन को बिगाड़ रही हैं, उनको **(अरसात् कृणु)** निर्बल करके **(जहि)** समाप्त कर दें, जिससे मैं पुनः स्वस्थ हो सकूँ।

कार्य पर जाते-आते समय प्रार्थना

ओं मधुमन्मे निक्रमणं मधुमन्मे परायणम्। वाचा वदामि मधुमद्भूयासं मधुसंदृशः॥ १ ॥

—अथर्व० १।३४।३

ओं प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु। प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये॥ २ ॥

—अथर्व० १९।६२।१

हे प्रभो!

(मे) मेरा **(निक्रमणम्)** जाना **(मधुमत्)** मधु के समान सुखकर हो। **(मे)** मेरा **(परायणम्)** वापस आना भी **(मधुमत्)** सुखकारी हो। **(वाचा)** वाणी से जो भी **(वदामि)** बोलूँ, वह **(मधुमत्)** मधु के समान हो। **(मधुसंदृशः)** मधु के समान मधुर दृष्टिवाला मैं सदैव **(भूयासम्)** बना रहूँ॥ १ ॥

(मा) मुझे **(देवेषु)** देवों [भद्र लोगों] का **(प्रियम्)** प्रिय **(कृणु)** कर। **(मा)** मुझे **(राजसु)** राज्य अधिकारियों में **(प्रियम्)** प्रिय **(कृणु)** बना। **(सर्वस्य)** सब लोगों में **(उत् शूद्र उत् आर्ये)** चाहे वे सेवावृती हों या श्रेष्ठ संस्कारी लोग हों, मुझे **(प्रियम्)** प्रेम से **(पश्यतः)** देखनेवाले हों॥ २ ॥

कार्य दिवस पर कार्यालय/दुकान खोलते समय प्रार्थना

ओं मयि देवा द्रविणमा यजन्तां मय्याशीरस्तु मयि देवहूतिः। दैव्या होतारो वनुषन्त पूर्वेऽरिष्टाः स्याम तन्वा सुवीराः॥

—ऋग्० १०।१२८।३

प्रभुकृपा से आज **(मयि)** मुझको **(देवाः)** भद्र जन **(द्रविणम्)** धनैश्वर्य **(आ यजन्ताम्)** भली-भाँति प्रदान करें। **(मयि आशीः अस्तु)** मेरे आशानुरूप फल की प्राप्ति हो। **(देवहूतिः मयि)** देवों की प्रशंसा मुझे धन्धे में प्राप्त हो। **(पूर्वे)** पूर्व [पहले] के ग्राहक और

नये **(दैव्याः)** दिव्य गुणों से युक्त **(होतारः)** कार्य करने और करवाने वालों का **(वनुषन्तः)** पदार्पण हो। हम **(सुवीराः)** कर्मवीर/कार्यकुशल रहते हुए **(तन्वा अरिष्टाः स्याम्)** शारीरिक दृष्टि से अपीड़ित रहें।

नियत अथवा कोई भी कार्य आरम्भ करते समय प्रार्थना

प्रथम गायत्री मन्त्र का पाठ तदुपरान्त निम्न मन्त्रों का पाठ—

ओं समिन्द्र राया समिषा रभेमहि सं वाजेभिः पुरुश्चन्द्रैरभिद्युभिः। सं देव्या प्रमत्या वीरशुष्मया गोअग्रयाश्वावत्या रभेमहि॥ १ ॥

—ऋग्० १।५३।५; अथर्व २०।२१।५

ओं परि माग्ने दुश्चरिताद् बाधस्वा मा सुचरिते भज।
उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृताँ२ऽअनु॥ २ ॥

—यजुः० ४।२८

हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्यवान् परमेश्वर!

हम अपने कार्यों को **(राया)** आत्मैश्वर्य के साथ, **(सम् इषा)** सम्यक् इच्छाशक्ति के साथ **(सम् वाजेभिः)** अच्छे प्रकार शक्तियों और सामर्थ्य के साथ **(पुरुः-चन्द्रैः)** बहुत प्रसन्नता के साथ **(अभि-द्युभिः)** सर्वत्र ज्योतियों/दीप्तियों के साथ **(सम वीर शुष्मया)** सम्यक् बल, साहस तथा शौर्य के साथ **(सं रभेमहि)** सम्यक् आरम्भ करें। **(गो अग्रया, अश्वावत्या, प्रमत्या, देव्या)** उत्तम वाणी, आशुगामिनी उत्तम अनुमति देवी के साथ ही हम **(रभेमहि)** कार्यारम्भ करें॥ १ ॥

हे **(अग्ने)** ज्योतिस्वरूप परमेश्वर!

कर्त्तव्यपालन में **(दुश्चरितात्)** दुराचार तथा भ्रष्ट आचार से **(मा)** मुझे **(परि वाधस्व)** सब ओर से बचा **(मा)** मुझे **(सुचरिते)** उत्तम आचार, सदाचार में **(आ भज)** भलीभाँति लगा। मैं **(उदायुषा)** उत्कृष्ट जीवन द्वारा **(स्वायुषा)** अपनी आयु में ही **(अमृतान् अनु)** अमृत के अनुकूल **(उदस्थाम्)** उन्नति करूँ; ऊपर उठूँ। स्थिरता से मेरा उत्थान हो॥ २ ॥

मन से बुरे विचारों को हटाने के लिए प्रार्थना

ओं परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षां वनानि सं चर गृहेषु गोषु मे मनः॥

—अथर्व० ६।४५।१

हे **(मनस्पाप)** मेरे मन के पाप! **(परः अपेहि)** दूर भाग जा। **(किम्)** क्यों **(अशस्तानि)** बुरी/गंदी/निन्दित बातों को तू **(शंससि)** सोचता है। **(परे हि)** परे हट, भाग जा। **(त्वां न कामये)** मैं तुझे नहीं चाहता। **(वृक्षां वनानि सं चर)** वृक्षों और निर्जन वनों में विचर, मेरे पास मत फटक। **(मे मनः गृहेषु गोषु)** मैं अपने मन को अपने घर में, अपने काम में, अपनी गौओं में लगाऊँ, अन्यत्र नहीं।

नौका, वाहन, यान आदि पर चढ़ते समय प्रार्थना

ओं सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये॥

—ऋग्० १०।६३।१०

हे प्रभो! **(सुत्रामाणम्)** उत्तम रीति से सुरक्षित, **(पृथिवीम्)** सर्वाश्रयी स्थिर, **(द्याम्)** प्रकाशयुक्त **(अनेहसम्)** दोष-रहित **(सुशर्माणम्)** सुविधायुक्त **(अदितिम्)** अखण्डित **(सुप्रणीतिम्)** अच्छी बनी हुई **(सु-अरित्राम्)** सुन्दर/सही यन्त्रों वाली **(अनागसम्)** सङ्कटों से रहित **(अस्त्रवन्तीम्)** छिद्रों/त्रुटियों से रहित इस **(दैवीम्)** दिव्य जल, अग्नि, विद्युत् से गतिमान **(नावम्)** नौका/वाहन/यान पर हम **(स्वस्तये)** कल्याण के लिए **(आ रुहेमः)** आरूढ़ हों और सुख से पार उतरें।

यात्रा पर जाते समय प्रार्थना

ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्य१स्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमउक्तिं विधेम॥

—ऋग्० १।१८९।१; यजुः० ५।३६, ७।४३, ४०।१६

हे **(अग्ने)** स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप **(देव)** दिव्य सामर्थ्ययुक्त परमेश्वर! **(विश्वानि वयुनानि विद्वान्)** आप समस्त वयुनों/स्थानों/धामों को जाननेवाले हैं। **(अस्मान्)** हमको **(राये)** सौभाग्यैश्वर्य की प्राप्ति के लिए **(सुपथा नय)** सही मार्गों पर ले चलिये। **(अस्मत्)** हमसे यात्रा में **(जुहुराणम्)** कुटिलतायुक्त **(एनः)** पापकर्म **(युयोधि)** दूर रहें; और हम निरन्तर **(ते)** आपके लिए **(भूयिष्ठाम्)** अधिकाधिक **(नमः)** नमन तथा **(उक्तिम्)** स्तवन **(विधेम)** करते रहें।

जानेवाले यात्रियों के लिए शुभकामना

ओं सुगः पन्थां अनृक्षर आदित्यास ऋतं यते।
नात्रांवखादो अस्ति वः॥ —ऋग्० १।४१।४

हे **(आदित्यासः)** सूर्य्य के समान सुपथगामी यात्रियो! **(ऋतं यते)** ऋत पर चलनेवालों के लिए **(पन्थाः)** सारे मार्ग **(सुगः)** सुगम तथा **(अनृक्षरः)** कण्टकरहित हैं। **(अत्र)** इस मार्ग में **(वः)** आपको **(अवखादः)** हानि **(न अस्ति)** नहीं है। आपकी यात्रा मङ्गलमय हो।

परीक्षा अथवा साक्षात्कार से पूर्व प्रार्थना

ओं सना दक्षमुत क्रतुमप सोम मृधो जहि।
अथा नो वस्यसस्कृधि॥ १॥
—ऋग्वेद ९।४।३; साम० १०४९

ओं विश्वा सोम पवमान द्युम्नानीन्दवा भर।
विदाः सहस्त्रिणीरिषः॥ २॥ —ऋग्वेद ९।४०।४

ओं मूर्धाहं रयीणा मूर्धा समानानां भूयासम्॥ ३॥
—अथर्ववेद १६।३।१

हे आनन्द प्रदाता **(सोम)** परमेश्वर!

हमें **(दक्षम्)** दक्षता **(उत)** तथा **(क्रतुम्)** कर्म-कुशलता **(सनः)** प्रदान कर। **(मृधः)** बाधक तत्त्वों को **(अप जहि)** हमसे दूर रख। **(अथः)** और **(नः)** हमें **(वस्यसः)** सबसे श्रेष्ठ वा

सफलकाम **(कृधि)** कर॥ १॥

हे **(पवमान सोम)** पवित्र शक्तिमान् प्रभो!

(विश्वा द्युम्नानीन् दवा) समस्त दिव्य ज्योतियों=दिव्यज्ञान, ऐश्वर्य से **(नः)** हमें **(आ भर)** अच्छी प्रकार भर दे। हमारी **(सहस्त्रिणीः इषः विदाः)** अनेकानेक भद्र इच्छाओं को पूर्ण कर॥ २॥

हे सकल ऐश्वर्यदाता परमेश्वर!

अपने श्रम, तप और पुरुषार्थ तथा आपकी कृपा से **(अहम्)** मैं **(मूर्धा)** शिरोमणि बनूँ, और **(रयीणा समानानाम्)** समान ऐश्वर्य वालों में भी **(मूर्धा)** शिरोमणि **(भूयासम्)** हो जाऊँ। वरीयता एवं प्राथमिकता आपके आशीर्वाद से मुझे ही प्राप्त हो॥ ३॥

सत्य पर आधारित युद्ध, संग्राम वा न्यायालय जाते समय प्रार्थना

ओं ममाग्ने वर्चो विहवेष्वस्तु वयं त्वेन्धानास्तन्वं पुषेम।
मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्त्रस्त्वयाध्यक्षेण पृतना जयेम॥ १॥
—ऋग्० १०।१२८।१; अथर्व० ५।३।१

ओं वयं जयेम त्वया युजा वृतमस्माकमंशमुदवा भरेभरे।
अस्मभ्यमिन्द्र वरिवः सुगं कृधि प्र शत्रूणां मघवन् वृष्ण्या रुज॥ २॥
—ऋग्० १।१०२।४; अथर्व० ७।५०।४

हे **(अग्ने)** अग्निस्वरूप परमेश्वर!

(वि हवेषु मम वर्चः अस्तु) संघर्षों में मेरा वर्चस्व हो। **(वयं त्वा इन्धानाः)** हम तुझे अपने जीवन में प्रज्वलित करते हुए **(तन्वं पुषेम)** स्वयं को पुष्ट करें। **(मह्यं चतस्त्रः प्रदिशः नमन्ताम्)** मेरे लिए चारों दिशाओं में नमन हो। **(त्वया अध्यक्षेण पृतना जयेम)** तेरी अध्यक्षता में ही हम संग्रामों को विजय करें।

हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्यवान् प्रभो!

(त्वया युजा) तुझसे युक्त होकर **(वयं जयेम भरे भरे)** हम संग्राम-संग्राम में विजय प्राप्त करें। **(अस्माकम्)** हमारे **(अंशम्)** भाग=पक्ष को **(उत् अवः)** उत्तम रीति से रखने में आप सहायक

हों। **(अस्मभ्यम्)** हमारे लिए **(वरिवः)** वरीयता को **(सुगं कृधि)** सुगम कर दें। हे **(मघवन्)** शक्तिशाली प्रभो! हमारे **(शत्रूणाम्)** शत्रुओं के **(वृत्तम्)** घेरों/चालों तथा **(वृष्ण्या)** बल/साहस को आप **(प्र रुज)** अच्छी प्रकार तोड़ दें/नष्ट कर दें। हमारी जीत हो।

किसी भी कृषि-कार्य को आरम्भ करते समय प्रार्थना

ओं युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम्।
विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वमा यवन्॥ १ ॥

—ऋ० १०।१०१।३; यजुः० १२।६८; अथर्व० ३।१७।२

ओम् इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाभि रक्षतु।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम्॥ २ ॥

—ऋ० ४।५७।७; अथर्व० ३।१७।४

हे अन्नों के स्वामी परमेश्वर!

हमारे सारे कृषि-कार्य **(सीरा युनक्त)** भूमि की हलों से जुताई **(युगा वि तनोत)** एवं उसके विस्तार, तथा **(कृते योनौ)** बीज डालने के लिए खेत तैयार हो जाने तक ठीक से हों। अच्छे जुते हुए खेत में ही **(बीजं वपतेह)** बीज बोया जाए। **(विराजः श्नुष्टिः सभरा असत्)** जब अन्न की बालें वर्षा के जल से खूब पुष्ट हो जावें, उसके **(नेदीय इत)** कुछ काल बाद ही **(पक्वं सृण्य आ यवन्)** पका अन्न दरांती से काटकर **(नः)** हम प्राप्त करें। हमारे अन्न के भण्डार भरे रहें॥ १ ॥

हे **(इन्द्रः)** ऐश्वर्यवान् परमेश्वर!

आप **(सीतां निगृह्णातु)** हमारे समस्त कृषि-कार्य को व्यवस्थित रूप से चलाने में सहायक हों। **(पूषा)** पुष्ट करनेवाले आप **(तां अभि रक्षतु)** खेती की सब ओर से रक्षा करें। **(नः)** हमें **(सा पयस्वती)** आनन्द देनेवाली लहलहाती फसल **(उत्तराम्-उत्तरां समाम्)** उत्तरोत्तर प्रति संवत्सर/वर्ष **(दुहाम्)** दूध के समान अच्छा फल प्रदान करे॥ २ ॥

भयरहित होने के लिए प्रार्थना

ओं यतो यतः समीहसे ततो नोऽअभयं कुरु ।
शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः ॥१॥

—यजुर्वेद ३६।२२

ओं यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि।
मघवञ्छग्धि तव त्वं न ऊतिभिर्वि द्विषो वि मृधो जहि॥ २ ॥

—अथर्व० १९।१५।१

ओम् अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु॥ ३ ॥

—अथर्व० १९।१५।६

ओं यथा द्यौश्च पृथिवी च न बिभीतो न रिष्यतः।
एवा मे प्राण मा बिभेः॥ ४॥ —अथर्व० २।१५।१

हे प्रभो! **(यतः यतः समीहसे)** जहाँ-जहाँ भी हम सम्यक् चेष्टा वा गति करें **(ततः नः अभयं कुरु)** वहाँ-वहाँ आप हमें भयरहित करें। **(नः प्रजाभ्यः शं कुरु)** हमारी प्रजाओं के लिए शान्ति प्रदान करें **(नः पशुभ्यः अभयम्)** हमारे पशुओं के लिए भी अभयता प्रदान करें॥ १ ॥

हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्ययुक्त परमात्मन्! **(यतः भयामहे)** जिससे हम डरते हैं **(ततः नः अभयं कृधि)** उससे हमें आप भयरहित कर दें।

हे **(मघवन्)** महाबली! **(त्वम् तव ऊतिभिः नः शग्धि)** आप अपनी सुरक्षात्मकता से हमें शक्ति दें। **(द्विषः)** द्वेष करनेवालों को और **(मृधः)** हिंसकों/शत्रुओं को **(वि वि जहि)** विविध उपायों से नष्ट कर दें॥ २ ॥

(अभयं मित्राद्) मित्रों से [हमें] अभय हों, **(अभयं अमित्राद्)** शत्रुओं से भी भयरहित हों। **(ज्ञाताद् अभयम्)** ज्ञात से अभय हों तथा **(अभयं परोक्षात्)** परोक्ष में भी अभय हो। **(अभयं नक्तम्)** रात्रि में अभय और **(अभयं दिवा नः)** दिन में भी हमें अभयता हो। **(सर्वाः आशा मम मित्रं भवन्तु)** समस्त आशाएँ मेरी मित्र हो जावें, किसी भी दिशा में हम भयभीत न हों॥ ३ ॥

(यथा) जैसे **(द्यौ)** द्यौ **(च)** और **(पृथिवी)** पृथिवी **(च)** निश्चित ही **(न रिष्यतः)** न सताते हैं, और **(न विभीतः)** न डरते हैं, **(एव)** ऐसे ही **(मे)** मेरे **(प्राण)** प्राण, तू भी **(मा विभेः)** न दुःखी हो, न डर॥ ४॥

आन्तरिक शान्ति के लिये प्रार्थना

ओ३म् इमानि यानि पञ्चेन्द्रियाणि मनःषष्ठानि मे हृदि ब्रह्मणा संशितानि। यैरेव ससृजे घोरं तैरेव शान्तिरस्तु नः॥ १॥

—अथर्व० १९।९।५

ओं यानि कानि चिच्छान्तानि लोके सप्तऋषयो विदुः। सर्वाणि शं भवन्तु मे शं मे अस्त्वभयं मे अस्तु॥ २॥

—अथर्व० १९।९।१३

हे भगवन्! ऐसी कृपा करो कि **(इमानि यानि)** यह जो **(पञ्च इन्द्रियाणि)** मेरी पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ, और **(मनः षष्ठानि)** यह छठा मन है **(यैः एव)** जिन्होंने **(मे हृदि)** मेरे हृदय में **(घोरम् संसृजे)** घोर अशान्ति सृजित कर रक्खी है, यह **(ब्रह्मणा)** आप परम ब्रह्म के द्वारा **(संशितानि)** सम्यक् परिष्कृत होकर मेरे विवेक को जागृत करें **(तैः एव)** जिससे ही **(नः शान्तिः अस्तु)** हमें आन्तरिक शान्ति प्राप्त होवे॥ १॥

(यानि) जिन **(कानि)** किन्हीं **(चित्)** भी मेरे द्वारा किये गये **(शान्तानि)** शान्ति कर्मों को **(लोके)** संसार में **(सप्तऋषयः)** शरीरगत पाँच इन्द्रियों, छठा मन, सातवीं बुद्धिरूपी यह सात ऋषि **(विदुः)** जानते हैं। **(सर्वाणि)** वे सब **(मे)** मेरे लिए **(शम्)** शान्तिदायक **(भवन्तु)** होवें। **(मे शं अस्तु)** मुझे शान्ति प्राप्त हो **(अभयम् मे अस्तु)** अभयता मुझे प्राप्त हो॥ २॥

शिव संकल्प मन्त्राः

ओ३म् यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमञ्ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ १॥

—यजुः० ३४।१

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २॥

—यजुः० ३४।२

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ ३॥

—यजुः० ३४।३

येनेदम्भूतं भुवनम्भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ ४॥

—यजुः० ३४।४

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः। यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ ५॥

—यजुः० ३४।५

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ ६॥

—यजुः० ३४।६

पद्यमय भावार्थ

प्रभो! जागते हुए सदा, जो दूर दूर तक जाता है।
सोते में भी दिव्य शक्तिमय, कोसों दौड़ लगाता है।
दूर दूर वह जाने वाला, तेजों का भी तेज निधान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान्॥ १॥
जिसके द्वारा बुद्धिमान सब, नाना करतब करते हैं।
सत्कर्मों को करें मनीषी, वीर युद्ध में मरते हैं॥
पूजनीय अतिशय जिसका है, प्रजावर्ग में अद्‌भुत् मान।
नित्य युक्त शिव संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान्॥ २॥
जिसमें धैर्य, शक्ति चिन्तन की, तथा ज्ञान रहता भरपूर।
प्राणिमात्र में अमृतमय है, अरु प्रकाश का बहता पूर।
जिसके बिना नहीं चलता है, निश्चय कोई कार्य विधान।
नित्य युक्त शिव संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान्॥ ३॥

अमर तत्व जो त्रय कालों का, भेद यथावत् पाता है।
बुद्धि, ज्ञान की पाँच इन्द्रियाँ, अहंकार से नाता है॥
इन्हीं सप्त ऋत्विज का फैला, जिसमें निशदिन यज्ञ-वितान।
नित्य युक्त शिव संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान्॥ ४॥

चार वेद निगमागम सारे, ईश-ज्ञान के सुन्दर स्रोत।
रथ के पहिये में ज्यों आरे रहते धुर से ओत-प्रोत।
जंगम-जग का चित्त अचल हो, जिसमें रहता निष्ठावान्।
नित्ययुक्त शुभ संकल्पों से वह मन मेरा हो भगवान्॥ ५॥

जो मन शरीर को बागडोर से इधर-उधर ले जाता है।
चतुर सारथी ज्यों घोड़े को उत्तम चाल चलाता है।
सदा प्रतिष्ठित हृदय देश में, विपुल तीव्र गति अजर महान्।
नित्य युक्त शिव संकल्पों से वह मन मेरा हो भगवान्॥ ६॥

रात्रिकालीन प्रार्थना

ओ३म् अग्ने त्वꣳ सु जागृहि वयꣳ सु मन्दिषीमहि।
रक्षा णोऽअप्रयुच्छन् प्रबुधे नः पुनस्कृधि॥ १॥
—यजु:० ४।१४

आ रात्रि पार्थिवं रजः पितुरप्रायि धामभिः।
दिवः सदांसि बृहती वि तिष्ठस आ त्वेषं वर्तते तमः॥ २॥
—अथर्ववेद १९।४७।१

न यस्याः पारं ददृशे न योयुवद्विश्वमस्यां नि विशते यदेजति।
अरिष्टासस्त उर्वि तमस्वति रात्रि पारमशीमहि भद्रे पारमशीमहि॥ ३॥
—अथर्ववेद १९।४७।२

त्वयि रात्रि वसामसि स्वपिष्यामसि जागृहि।
गोभ्यो नः शर्म यच्छाश्वेभ्यः पुरुषेभ्यः॥ ४॥
—अथर्ववेद १९।४७।९

रात्रि मातरुषसे नः परि देहि।
उषा नो अह्ने परि ददात्वहस्तुभ्यं विभावरि॥ ५॥
—अथर्ववेद १९।४८।२

हे **(अग्ने)** प्रकाशमान् परमेश्वर! **(वयम्)** हम **(अप्रयुच्छन)** प्रमादरहित होकर **(सुमन्दिषीमहि)** आनन्दपूर्वक आपकी छत्रछाया में सोते हैं। हे प्रभो! हमारी **(रक्षाणो)** रक्षा करना। कृपा करके **(नः)** हमें **(पुनः)** फिर **(त्वं सुजागृहि)** तुम अच्छी प्रकार जगाकर **(प्रबुधे कृधि)** प्रबुद्ध कर देना॥ १॥

हे **(रात्रि)** रात्रि! तू **(पार्थिवम्)** पृथिवी सम्बन्धी **(रजः)** लोक **(पितुः)** परमपिता परमात्मा के बनाये **(धामभिः)** धामों=तेजों से **(आ प्रायि)** सब ओर से परिपूर्ण है। तू **(बृहती)** बड़ी भारी शक्ति वाली होकर **(दिवः)** प्रकाश के **(सदांसि)** स्थानों को **(वि तिष्ठसे)** व्याप्त होती है। **(त्वेषम्)** तेरा तारागणों से चमकता **(तमः)** अन्धकार **(आ वर्तते)** सर्वत्र वर्तता है॥ २॥

(यस्याः) जिस [रात्रि] का **(न)** न **(पार)** पार, और **(न)** न **(योयुवत्)** [प्रकाश से] पृथक् होने का [स्थान] **(ददृशे)** दिखाई पड़ता है। **(यत्)** जो कुछ **(एजति)** चेष्टा या गति है, **(सर्वम्)** वह **(विश्वम्)** सब **(अस्याम्)** इस [रात्रि] में **(नि विशते)** ठहर जाता है। हे **(उर्वि)** फैली हुई **(तमस्वति)** अन्धेरी **(रात्रि)** रात्रि! हम **(अरिष्टासः)** बिना कष्ट पाये हुए **(त)** तेरे **(पारम्)** पार को **(अशीमहि)** पावें। हे **(भद्रे)** कल्याणी रात्रि! [तुझे] **(पारम्)** पार करने की सामर्थ्य को हम **(अशीमहि)** प्राप्त करें॥ ३॥

हे **(रात्रि)** रात्रि!

हम **(त्वयि)** तेरे आधार/विश्वास पर **(वसामसि)** निवास करते हैं। **(स्वपिष्यामसि)** हम निश्चिन्त होकर सोवेंगे; क्योंकि हमें विश्वास है कि तुम **(जागृहि)** जागती रहोगी। **(नः)** हमारी **(गोभ्यो)** गौओं **(अश्वेभ्यः)** घोड़ों और **(पुरुषेभ्यः)** लोगों के लिए तुम **(शर्म यच्छ)** सुख ही प्रदान करना॥ ४॥

हे **(रात्रि मातः)** रात्रि माता!

तुम **(नः)** हमको **(उषसे)** ऊषा के प्रति **(परि देहि)** सौंप देना। **(ऊषा)** ऊषा **(नः)** हमें **(अह्ने)** दिन को, और **(अहः)** दिन फिर **(तुभ्यम्)** तुझ **(विभावरि)** तेजस्विनी/शक्तिदायिनी माता की गोद में हमें **(परि ददातु)** सौंप दे, यही प्रार्थना है॥ ५॥

बृहद्-यज्ञ पद्धति
(सामान्य प्रकरण)

VIII. बृहद्यज्ञ पद्धति

आवश्यक निर्देश

१. यज्ञशाला वा यज्ञकुण्ड के परिमाण के लिए संस्कारविधि (सामान्य प्रकरणम्) देखें।

२. यज्ञशाला के चारों ओर ध्वजा-पताका-पल्लव आदि बाँधें। नित्य मार्जन तथा गोमय से लेपन करें। चाहे यज्ञवेदी हो या यज्ञकुण्ड, आटा, हल्दी, कुंकुम, आदि की रंगोली से स्थान को सुभूषित करना उचित है।

३. समिधा, घृत और होम के द्रव्य संस्कारविधि के अनुसार होने चाहिएँ।

४. चरु या स्थालीपाक मीठा भात, मीठी खीचड़ी, खीर, लड्डू, मोहनभोग का (जो पाकस्थाली में डालकर विधिपूर्वक बनाया गया हो) होना चाहिए। होम के लिए अच्छी प्रकार संस्कार करके पकाया गया अन्न पदार्थ 'पुरोडाश' कहाता है।

५. यजमान दम्पति उत्तम मांगलिक नवीन स्वदेशी वस्त्र पहन कर ही यज्ञ वेदी पर बैठें। यज्ञ वेदी पर बैठकर बातें करना वर्जित है।

६. संस्कार आदि कराने के निमित्त यजमान, धर्मात्मा, शास्त्रोक्त विधि को पूर्ण रूप से जानने हारे, कर्म कुशल, विद्वान्, जितेन्द्रिय, निर्लोभ, निर्व्यसनी, सुशील, वेदवित्, सर्वोपकारी **गृहस्थों** का **'ऋत्विजों'** के रूप में वरण करे। जो एक हो, तो उसका नाम पुरोहित, दो हों, तो ऋत्विग् तथा पुरोहित; तीन हों, तो ऋत्विग्, पुरोहित, अध्यक्ष; और जो चार हों तो उनकी संज्ञा, होता, अध्वर्यु, उद्गाता, और ब्रह्मा होती है, इनके आसन इस प्रकार हैं—
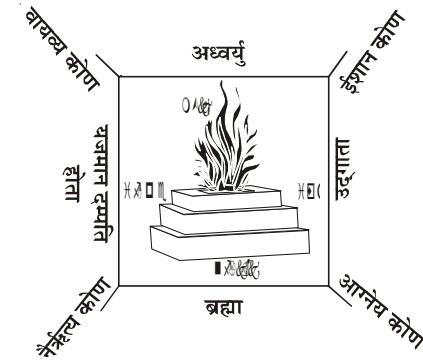
७. ब्रह्मा के स्थान पर किसी विदुषी स्त्री को बिठाया जावे।

८. चारों कोणों पर जल से भरे कलश पल्लव एवं नारियल सहित सु-अलंकृत कर रखे जावें।

अथ बृहद्यज्ञ (सामान्य प्रकरण) पद्धति

(सत्संग, संस्कारों, पर्वों एवं पारायण यज्ञों पर)

अथ ऋत्विग्वरणम्

यजमानोक्तिः—ओमावसोः सदने सीद।

ऋत्विगुक्तिः—ओं सीदामि।

यजमानोक्तिः—ओं तत्सद् श्री ब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्द्धे श्रीश्वेतवाराह कल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे १,९७,२९,४९,१०२ सृष्ट्यब्दे २०५९ वैक्रमाब्दे... संवत्सरे... अयने... ऋतौ... मासे... पक्षे... तिथौ...वासरे... नक्षत्रे... लग्ने... मुहूर्ते अत्र * अहम्... अद्य... कर्मकरणाय भवन्तं वृणे।

ऋत्विगुक्तिः—वृतोऽस्मि।

अथ आचमनमन्त्राः

(जितने यज्ञ करनेवाले हों, उतने ही आचमन पात्र हों)

ओम्अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा॥ १॥ *इससे एक*

ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा॥ २॥ *इससे दूसरा*

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा॥ ३॥

इससे तीसरा —तैत्तिरीय आरण्यक प्र० १०। अनु० ३२, ३५

तत्पश्चात् बायीं हथेली में जल लेकर नीचे लिखे मन्त्रों से अर्थ-विचार-पूर्वक पहले दाहिनी ओर, पश्चात् बायीं ओर के अंगों को दाएं हाथ की अनामिका एवं मध्यमा अंगुलियों से स्पर्श करें।

अथ अङ्गस्पर्शमन्त्राः

ओं वाङ् म आस्येऽस्तु। *इस मन्त्र से मुख,*

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु। *इस मन्त्र से नासिका के दोनों छिद्र,*

ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु। *इस मन्त्र से दोनों आँखें,*

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु। *इस मन्त्र से दोनों कान,*

* उस देश, स्थान का नाम यहाँ लिया जा सकता है, जहाँ यज्ञ हो रहा हो, जैसे 'जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गते भारत राजधान्यां दिल्ली महानगरे'।

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु। *इस मन्त्र से दोनों बाहु,*

ओम् ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु। *इस मन्त्र से दोनों जंघा,*

ओम् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु।

इस मन्त्र से सारे शरीर का मार्जन करें व जल के छींटे दें।

—पारस्करगृ० कण्डिका ३। सू० २५॥

अग्निहोत्र करते समय प्रत्येक अग्निहोत्री (यजमान) को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिये कि उसने यज्ञोपवीत धारण किया हुआ है। यदि यज्ञोपवीत नहीं पहने हैं, तो निम्न यज्ञोपवीत मन्त्रों से यज्ञोपवीत स्त्री-पुरुष धारण करें, तथा व्रत लें—

यज्ञोपवीत मन्त्र

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥ १॥

—पार० गृह० २।२।११

यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि॥ २॥

—पार० गृह० २।२।११

व्रत-धारण मन्त्रः

ओं अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयम्।
तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात्सत्यमुपैमि॥ —मन्त्र ब्रा० १।६।९

अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनामन्त्राः *

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ १॥ —यजुः० ३०।३

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ २॥

—यजुः० १३।४

* १. समस्त मन्त्रोच्चारण मधुर स्वर से यजमान ही करे। न शीघ्र और न बिलम्व से उच्चारण करे। यजमान यदि मन्त्रोच्चारण करने में असमर्थ हो तो पुरोहित वा ऋत्विज उद्गाता मन्त्रोच्चारण करें। देखनेवाले मौन बैठें। अर्थ के लिए पृष्ठ ३९ से ४२ तक देखें।

२. मन्त्रों को बोलते जाना और कुण्ड में समिधाओं का रखते जाना सर्वथा त्याज्य है। मन्त्रपाठ के समय केवल परमेश्वर में ही ध्यान लगाना चाहिए।

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य च्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ३॥
—यजुः० २५।१३

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैकऽइद्राजा जगतो बभूव।
य ईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ४॥
—यजुः० २३।३

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्व स्तभितं येन नाकः।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ५॥
—यजुः० ३२।६

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥ ६॥
—ऋ० १०।१२१।१०

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त॥ ७॥
—यजुः० ३२।१०

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम॥ ८॥
—यजुः० ४०।१६

अथ स्वस्तिवाचनम्

ओ३म् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥ १॥ —ऋ० १।१।१

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये॥ २॥ —ऋ० १।१।९

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना॥ ३॥
—ऋ० ५।५१।११

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥ ४॥
—ऋ० ५।५१।१२

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः॥ ५॥
—ऋ० ५।५१।१३

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि॥ ६॥
—ऋ० ५।५१।१४

स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि॥ ७॥ —ऋ० ५।५१।१५

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ८॥
—ऋ० ७।३५।१५

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः।
उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनु मदा स्वस्तये॥ ९॥
नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये॥ १०॥
सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्।
ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये॥ ११॥
को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये॥ १२॥
येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये॥ १३॥
य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये॥ १४॥
भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेंऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये॥ १५॥
सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये॥ १६॥
विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये॥ १७॥

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये॥ १८॥
अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये॥ १९॥
यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये॥ २०॥
स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्य१प्सु वृजने स्ववति।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन॥ २१॥
स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा॥ २२॥
—ऋ० १०।६३।३-१६

इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशꣳ सो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥ २३॥ —यजुः० १।१

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतास उद्भिदः।
देवा नो यथा सदमिदवृधेअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे॥ २४॥
—यजुः० २५।१४

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ* रातिरभि नो निवर्तताम्।
देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥ २५॥ —यजुः० २५।१५

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥ २६॥
—यजुः० २५।१८

स्वस्ति नऽ इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ २७॥
—यजुः० २५।१९

* ꣳ, ꣴ का 'ग्वङ्ग' रूप उच्चारण अशुद्ध है। यह चिह्न स्वर के आनुनासिक उच्चारण के लिए हैं।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ २८॥
—यजुः० २५।२१

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि॥ २९॥ —साम०पू० १।१।१

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः।
देवेभिर्मानुषे जने॥ ३०॥ —साम० पू० १।१।२

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे॥ ३१॥
—अथर्व० १।१।१

इति स्वस्तिवाचनम्

अथ शान्तिकरणम्

ओ३म् शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ॥ १॥
—ऋ० ७।३५।१

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु॥ २॥
—ऋ० ७।३५।२

शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु॥ ३॥
—ऋ० ७।३५।३

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः॥ ४॥
—ऋ० ७।३५।४

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः॥ ५॥
—ऋ० ७।३५।५

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु॥ ६॥
—ऋ० ७।३५।६

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः॥ ७॥
—ऋ० ७।३५।७

शं न सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥ ८॥
—ऋ० ७।३५।८

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः॥ ९॥
—ऋ० ७।३५।९

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः॥ १०॥
—ऋ० ७।३५।१०

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः॥ ११॥
—ऋ० ७।३५।११

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु॥ १२॥
—ऋ० ७।३५।१२

शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा॥ १३॥
—ऋ० ७।३५।१३

इन्द्रो विश्वस्य राजति।
शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥ १४॥ —यजुः० ३६।८

शन्नो वातः पवताꣳ शन्नस्तपतु सूर्य्यः।
शन्नः कनिक्रदद् देवः पर्जन्योऽअभि वर्षतु॥ १५॥
—यजुः० ३६।१०

अहानि शम्भवन्तु नः शꣳ रात्रीः प्रति धीयताम्।
शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या।
शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शँयोः॥ १६॥
—यजुः० ३६।११

शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शँयोरभिस्रवन्तु नः॥ १७॥ —यजुः० ३६।१२

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥ १८॥
—यजुः० ३६।१७

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ १९॥ —यजुः० ३६।२४

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २०॥
—यजुः० ३४।१

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २१॥
—यजुः० ३४।३

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्जोतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २२॥
—यजुः० ३४।३

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २३॥
—यजुः० ३४।४

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २४॥
—यजुः० ३४।५

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २५॥

—यजुः० ३४।६

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते।
शं राजन्नोषधीभ्यः॥ २६॥ —साम० उत्तरा० १।१।३

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु॥ २७॥

—अथर्व० १९।१५।५

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु॥ २८॥

—अथर्व० १९।१५।६

॥ इति शान्तिकरणम् ॥

बृहद यज्ञ (सामान्य प्रकरण) की विधि

१.	समिधा चयनम्	देखें पृष्ठ ४३, ४४ एवं ४५
२.	अग्न्याधानम्	
३.	अग्नि प्रदीपन	
४.	समिदाधानम्	
५.	पञ्च घृताहुतयः	
६.	जल सिञ्चनम्	
७.	आदि आघारावाज्यभागाहुतयः	
८.	प्रातः, सायं अथवा दोनों कालों का प्रधान होम*	देखें पृष्ठ ४६ से ४८ (पूर्णाहुति को छोड़कर)
९.	**मुख्य होम** (पर्व, संस्कार या लोकाचार अथवा पारायण या अन्य विशेष वेद मन्त्रों द्वारा	
१०.	पर्व, संस्कार या लोकाचार सम्बन्धी अन्य कार्यक्रम	
११.	पूर्णाहुति प्रकरण	देखें पृष्ठ ८० से ८२ तक
१२.	महावामदेव्यगान	देखें पृष्ठ ८७ से ८८ तक

* नित्यकर्म पहले करना है, अन्य सब क्रियाएँ उसके बाद।

बृहद यज्ञ (पूर्णाहुति-प्रकरण)

(क) अन्त की आघारावाज्याभागाहुति मन्त्राः

ओम् अग्नये स्वाहा॥ १॥ इदमग्नये—इदं न मम॥

इस मन्त्र से वेदी के उत्तर-भाग अग्नि में आहुति दें।

ओम् सोमाय स्वाहा॥ २॥ इदं सोमाय—इदं न मम॥

—गोभिल० गृह्य० १।८।२४

इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण-भाग अग्नि में आहुति दें।

ओम् प्रजापतये स्वाहा॥ ३॥ इदं प्रजापतये—इदं न मम॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा॥ ४॥ इदमिन्द्राय—इदं न मम॥

इन दो मन्त्रों से वेदी के मध्य अग्नि में आहुति देनी।

उसके पश्चात् शुद्ध किये हुए उसी घृतपात्र में से स्रुवा को भरके प्रज्वलित समिधाओं पर व्याहृति की चार आहुति देवें—

(ख) व्याहृत्याहुति मन्त्राः

ओं भूरग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये—इदं न मम॥ १॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा॥ इदं वायवे—इदं न मम॥ २॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा॥ इदमादित्याय—इदं न मम॥ ३॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा॥
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः—इदं न मम॥ ४॥

ये चार घी की आहुति देकर निम्न मन्त्र से स्विष्टकृत् होमाहुति दें। यह घृत की अथवा भात की होनी चाहिए।

(ग) स्विष्टकृत होमाहुति

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्टकृते—इदं न मम॥

—आश्व० १।१०।२२; शतपथ ब्रा० १४।९।४।२४

इससे एक आहुति करके प्रजापत्याहुति अगले मन्त्र को मन में बोल के देनी चाहिए—

(घ) प्रजापत्याहुति

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये—इदं न मम ॥

उपरोक्त मौन आहुति देकर चार आज्याहुति घृत की देवें।

(ङ) आज्याहुतिमन्त्राः (पवमानाहुतयः)

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः ॥ आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय—इदं न मम ॥ १ ॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः ॥ तमीमहे महागयं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय—इदं न मम ॥ २ ॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् ॥ दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय—इदं न मम ॥ ३ ॥

—ऋ० ९।६६।१९-२१

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये—इदं न मम ॥ ४ ॥

—ऋ० १०।१२१।१०

इनसे घृत की चार आहुति देकर 'अष्टाज्याहुति' के निम्नलिखित मन्त्रों से सर्वत्र मंगलकार्यों में ८ (आठ) आहुति देवें। वे आठ आहुति मन्त्र यह हैं—

(च) अष्टाज्याहुतिमन्त्राः

ओं त्वं नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्याम्—इदं न मम ॥ १ ॥ —ऋ० ४।१।४

ओं स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा ॥ इदमग्नीवरुणाभ्याम्—इदं न मम ॥ २ ॥ —ऋ० ४।१।५

ओम् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय। त्वामवस्युरा चके स्वाहा ॥ इदं वरुणाय—इदं न मम ॥ ३ ॥ —ऋ० १।२५।१९

ओं तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा ॥ इदं वरुणाय—इदं न मम ॥ ४ ॥ —ऋ० १।२४।११

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः—इदं न मम ॥ ५ ॥ —पार०गृ०सू० १।२।८

ओम् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयासि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा ॥ इदमग्नये अयसे—इदं न मम ॥ ६ ॥ —पार०गृ०सू० १।२।८

ओम् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा ॥ इदं वरुणायाऽऽदित्यायाऽदितये च—इदं न मम ॥ ७ ॥

—ऋ० १।२४।१५

ओं भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञꣳ हिꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा ॥ इदं जातवेदोभ्याम्—इदं न मम् ॥ ८ ॥ —यजुः० ५।३

इसके बाद यदि पूर्णमासी या अमावास्या हो तो पूर्णमासी या अमावस्या की आहुतियाँ देकर तदुपरान्त पूर्णाहुति करें।

(छ) पूर्णाहुतयः

ओ३म् पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरापत।
वस्नेव विक्रीणावहाऽ इषमूर्जꣳशतक्रतो ॥ —यजुः० ३।४९

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥ —ब्राह्मण ग्रन्थ

पुनः इस मन्त्र से तीन बार बोलकर तीन आहुतियाँ देवें।

ओं सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा ॥

पूर्णाहूति के पश्चात् यजमान, ऋत्विक, तथा यजमान और ऋत्विक दोनों हाथ जोड़ कर इन मन्त्रों से प्रार्थना करें।

---

१. पूर्णाहुति से पहले, यदि चाहें तो 'स्विष्टकृदाहुति' से 'प्रायश्चित्ताहुति' के रूप में आहुति दे सकते हैं।

२. पूर्णाहुति के पश्चात् "**वसो पवित्रमसि शतधारम्**" मन्त्र पढ़कर अवशिष्ट घृत का अग्नि में प्रक्षेप करना अनुचित है।

यजमानप्रार्थना

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मेऽराधीदमहं
य एवास्मि सोऽस्मि ॥ —यजुः० २।२८

ऋत्विक्प्रार्थना

ओं यज्ञ यज्ञं गच्छ यज्ञपतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा।
एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्ववीरस्तं जुषस्व स्वाहा॥
—यजुः० ८।२२

यजमान और ऋत्विक् की सम्मिलित प्रार्थना

ओम् अग्ने व्रतपास्त्वे व्रतपा या तव तनूर्मय्यभूदेषा सा त्वयि यो मम तनूस्त्वय्यभूदियꣳ सा मयि यथायथं नौ व्रतपते व्रतान्यनु मे दीक्षां दीक्षापतिरमꣳ स्तानु तपस्तपस्पतिः॥ —यजुः० ५।४०

ओम् इष्टो यज्ञो भृगुभिराशीर्दा वसुभिः।
तस्य न इष्टस्य प्रीतस्य द्रविणेहागमेः॥ —यजुः० १८।५६

ओम् इष्टो अग्निराहुतः पिपर्तु न इष्ट ꣳ हविः।
स्वगेदं देवेभ्यो नमः॥ —यजुः० १८।५७

ओं येन वहसि सहस्त्रं येनाग्ने सर्ववेदसम्।
तेनेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे॥ —यजुः० १८।६२

ओं प्रस्तरेण परिधिना स्त्रुचा वेद्या च बर्हिषा।
ऋचेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे॥ —यजुः० १८।६३

ओं यद् दत्तं यत्परादानं यत्पूर्तं याश्च दक्षिणाः।
तदग्निर्वैश्वकर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत्॥ —यजुः० १८।६४

ओं यत्र धारा अनपेता मधोर्घृतस्य च याः।
तदग्निर्वैश्वकर्मणः स्वर्देवेषु नो दधत्॥ —यजुः० १८।६५

ओम् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम् आ राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवाऽस्य यजमानस्य वीरो जायतां। निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥ —यजुः० २२।२२

ईश्वर-प्रार्थना

ओं तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाहि॥ १॥
ओं आयुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मेदेहि॥ २॥
ओं वर्चोदाऽअग्नेऽसि वर्चो मे देहि॥ ३॥
ओं अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण॥ ४॥ —यजुः० ३।१७
ओं तेजोऽसि तेजो मयि धेहि॥ ५॥
ओं वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि॥ ६॥
ओं बलमसि बलं मयि धेहि॥ ७॥
ओं ओजोऽसि ओजो मयि धेहि॥ ८॥
ओं मन्युरसि मन्युं मयि धेहि॥ ९॥
ओं सहोऽसि सहो मयि धेहि॥ १०॥ —यजुः० १९।९
ओं यत्तेऽग्ने तेजस्तेनाऽहं तेजस्वी भूयासम्॥ ११॥
ओं यत्तेऽग्ने वर्चस्तेनाऽहं वर्चस्वी भूयासम्॥ १२॥
ओं यत्तेऽग्ने हरस्तेनाऽहं हरस्वी भूयासम्॥ १३॥
—तैत्तिरीय आरण्यक ४४।२; आश्व० गृ० १।२१।४
ओं मेधां मे देवः सविता आदधातु॥ १४॥
ओं मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु॥ १५॥
ओं मेधां मे अश्विनौ देवावाधत्तां पुस्करस्त्रजौ॥ १६॥
—पार० गृ०, २।४।८

ऋत्विक् द्वारा आशीर्वाद

यजमान को आशीर्वाद देने के लिये ऋत्विक/ ब्रह्मा जी के द्वारा जल छिड़कना ही श्रेयस्कर है, फूलों को तोड़-तोड़ कर फेंकना उचित नहीं। जल छिड़कते समय ऋत्विक तथा अन्य सभी लोग एक स्वर में बोलें—

ओं आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता नऽऊर्जे दधातन।
महे रणाय चक्षसे॥ —यजुः० ११।५०
ओं सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः।
ओं सफला सन्तु यजमानस्य कामाः।
ओं शुभं भवतु। ओं स्वस्ति। ओं स्वस्ति। ओं स्वस्ति॥

१. दर्शेष्टि (अमावस्या-यज्ञ) विधिः

कृष्णपक्ष की अमावस्या और शुक्लपक्ष की पूर्णमासी के दिन होने वाले पाक्षिक-यज्ञ कहाते हैं, जिनके नाम क्रमशः दर्शेष्टि और पौर्णमासेष्टि भी हैं। अमावस्या को दर्श भी कहते हैं। अत: अमावस्या के दिन होनेवाला यज्ञ 'दर्श-याग या दर्शेष्टि' नाम से प्रसिद्ध है।

अमावस्या को बृहद् यज्ञ की पूर्णाहुति को छोड़ सारी विधि पूरी करके पहले स्थालीपाक की तीन विशेष आहुतियाँ निम्न मन्त्रों से दें—

ओम् अग्नये स्वाहा॥ १ ॥
ओम् इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा॥ २ ॥
ओं विष्णवे स्वाहा॥ ३ ॥

घृत की चार व्याहृति आहुतियाँ निम्न मन्त्रों से दें—

ओं भूरग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये—इदं न मम॥
ओं भूवर्वायवे स्वाहा॥ इदं वायवे—इदं न मम॥
ओं स्वरादित्याय स्वाहा॥ इदमादित्याय—इदं न मम॥
ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा॥
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः—इदं न मम॥

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत वा शाकल्य की विशेष आहुतियाँ दें—

ओं यत्ते देवा अकृण्वन्भागधेयममावास्ये संवसन्तो महित्वा। तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरं स्वाहा॥ १ ॥ इदं अमावास्यायै—इदं न मम॥

ओम् अहमेवास्म्यमावास्या३ मामा वसन्ति सुकृतो मयीमे। मयि देवा उभये साध्याश्चेन्द्रज्येष्ठाः समगच्छन्त सर्वे स्वाहा॥ २ ॥ इदं अमावास्यायै इदं न मम॥

ओम् आगन्रात्री संगमनी वसूनामूर्जं पुष्टं वस्वावेशयन्ती। अमावास्यायै हविषा विधेमोर्जं दुहाना पयसा न आगन् स्वाहा॥ ३ ॥ इदं अमावास्यायै—इदं न मम॥

ओम् अमावास्ये न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा॥ ४॥ इदं अमावास्यायै—इदं न मम॥ —अथर्व० ७।७९।१-४

पश्चात् **'ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा'** से तीन आहुति देकर महावामदेव्यगान कर यज्ञ समाप्त करें।

२. पौर्णमासेष्टि-विधिः

पूर्णिमा के दिन बृहद् यज्ञ की पूर्णाहुति छोड़ सारी विधि पूरी करके निम्न मन्त्रों से पहले तीन आहुतियाँ स्थालीपाक की दें—

ओम् अग्नये स्वाहा॥ १ ॥
ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा॥ २ ॥
ओं विष्णवे स्वाहा॥ ३ ॥

तत्पश्चात् चार व्याहृति आहुति घृत की दें—

ओं भूरग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥ १ ॥
ओं भुवर्वायवे स्वाहा॥ इदं वायवे—इदन्न मम॥ २ ॥
ओं स्वरादित्याय स्वाहा॥ इदमादित्याय—इदन्न मम॥ ३ ॥
ओं भूभुर्वः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः—इदन्न मम॥ ४॥

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य की विशेष आहुतियाँ दें—

ओं पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तादुन्मध्यतः पौर्णमासी जिगाय। तस्यां देवैः संवसन्तो महित्वा नाकस्य पृष्ठे समिषा मदेम स्वाहा॥ १ ॥ इदं पौर्णमास्यै—इदं न मम॥

ओं वृषभं वाजिनं वयं पौर्णमासं यजामहे। स नो ददात्वक्षितां रयिमनुपदस्वतीं स्वाहा॥ २ ॥ इदं पौर्णमासाय—इदं न मम॥

ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा॥ ३ ॥ इदं प्रजापतये—इदं न मम॥

ओं पौर्णमासी प्रथमा यज्ञियासीदह्नां रात्रीणामतिशर्वरेषु। ये त्वां यज्ञैर्यज्ञिये अर्धयन्त्यमी ते नाके सुकृतः प्रविष्टाः स्वाहा॥ ४॥ इदं पौर्णमास्यै—इदं न मम॥ —अथर्व० ७।८०।१-४

पश्चात् **'ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा'** मन्त्र से तीन आहुति देकर महावामदेव्यगान कर यज्ञ समाप्त करें।

इति पक्षेष्टि (दर्श-पौर्णमासेष्टि)[1]

---

१. **यो विद्वान् अग्निहोत्रं च जुहोति दर्शपूर्णमासाभ्यां च यजते, मासि-मासि हि एव अस्य अश्वमेधेन इष्टं भवति। एतद् उ ह अस्य अग्निहोत्रं च दर्शपूर्णमासौ च अश्वमेधम् अभिसम्पद्यते॥** —शत० १५।२५।५
वह जो विद्वान् नित्य अग्निहोत्र करता है और दर्शपूर्णमास दोनों इष्टियों से यज्ञ करता है, मास-मास में, निस्संदेह मानो उसका प्रसिद्ध अश्वमेध यज्ञ किया गया-सा हो जाता है, यही निश्चय करके उसके किए प्रसिद्ध अग्निहोत्र और दर्शपौर्णमास दोनों मानो, अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न होते हैं।

मङ्गलकार्यों में वामदेव्यगान

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता॥ १ ॥ —साम० ६८२

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढा चिदारुजे वसु॥ २ ॥ —साम० ६८३

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम्। शतं भवास्यूतये॥ ३ ॥ —साम० ६८४

महावामदेव्यम्

काऽ५या नश्चाऽ३ यित्राऽ३ आ भुवात्। ऊ। ती सदावृधः सा। खा। औऽ३ होहायि। कयाऽ२३ शचाई। ष्ठयौहोऽ३। हुंमौ२। वातोंऽ३ऽ५हाइ॥ (१)॥

काऽ५स्त्वा। सत्यौ ३मा ३दानाम्। मा। हिष्ठो मात्सादन्धः। सा। औ३होहायि। दृढा२३ चिदा। रुजौहो३। हुम्मा२। वाऽ३सो३ऽ५हायि॥ (२)॥

आऽ५भी। षु णा३ः सा३खीनाम्। आ। विता जरायि तॄ। णाम्। औ२३ हो हायि। शता२३म्भवा। सियौ हो३ हुम्मा२। ताऽ२ यो ३ ऽ ५ हायि॥ (३)॥

—साम० उत्तरार्चिक। अध्याय १। खं० ४। मं० १-३

—देखिये—गोभिलगृह्य० प्रपा० १। खं० ९। सू० २९

दक्षिणा-दान और अभ्यागत सत्कार

वामदेव्यगान होने के पश्चात् गृहस्थ यजमान स्त्री-पुरुष, यज्ञ/संस्कार के कार्यकर्त्ता, सद्धर्मी लोकप्रिय परोपकारी, सज्जन विद्वान् गृहस्थ/ऋत्विग्, वा त्यागी पक्षपातरहित संन्यासी, जो सदा विद्या की वृद्धि और सबके कल्याणार्थ वर्तनेवाले हों, तथा जितने ऋत्विज/आचार्य/पुरोहित/ब्रह्मा हों, उनको नमस्कार कर उठावें, सुन्दर पुष्पमाला, आसन, अन्न, जल, वस्त्र, पात्र, गौ, धन आदि के दक्षिणा-दान-भेंट से उत्तम प्रकार से यथायोग्य यथासामर्थ्य सत्कार करें। पश्चात् जो कोई देखने ही के लिए आए हों, उनको भी सत्कारपूर्वक विदा कर दें।

जिनको दक्षिणा देनी हो, उनको श्रद्धा से यथेष्ट दक्षिणा देवें, वा जिसको जिमाना हो जिमावें। इस प्रकार यज्ञ में आये हुए मनुष्यों को यथायोग्य आदर-सत्कार करके स्त्री-स्त्रियों और पुरुष-पुरुषों को प्रीति-प्रसन्नतापूर्वक विदा करें।

पश्चात् यजमान रुचिपूर्वक यज्ञ शेष तथा उत्तमान्न का भोजन करें।

यह सामान्यविधि सब संस्कारों, पर्वों तथा अन्य आयोजनों में कर्त्तव्य है।

IX. कुछ चुनिन्दा भजन एवं गीत

याजक-परिवार के लिए प्रार्थना

सदा फूलता-फलता भगवन् यह याजक परिवार रहे।
रहे प्यार जो किसी से इनका, सदा आपसे प्यार रहे॥
मिथ्या कर अभिमान कभी न, जीवन का अपमान करें।
देवजनों की सेवा करके, वेदामृत का पान करें।
प्रभु आपकी आज्ञा-पालन, करता हर नर-नार रहे॥ १॥
मिले सम्पदा जो भी इनको, उसको मानें आपकी।
घड़ी न आने पावे इन पर, कोई भी सन्ताप की।
यही कामना प्रभु आपसे, कर हम बारम्बार रहे॥ २॥
दुनियादारी रहे चमकती, धर्म निभाने वाले हों।
सेवा के साँचे में सबने, जीवन अपने ढाले हों।
बच्चा-बच्चा परिवार का, बनकर श्रवण कुमार रहे॥ ३॥
बने रहें सन्तोषी सारे, जीवन के हर काल में।
काल चाल हो जैसा इनका, रहें मस्त हर हाल में।
ताकि 'देश' बसाया इनका, सुखदायी संसार रहे॥ ४॥

—पं० देशराज

(२)

हे दयामय आपका हमको सदा आधार हो।
आपके भक्तों से ही भरपूर यह परिवार हो॥
छोड़ देवें, काम को और क्रोध को मद-मोह को।
शुद्ध औ निर्मल हमारा सर्वदा आचार हो॥
प्रेम से मिल-मिलके सारे गीत गायें आपके।
दिल में बहता आपका ही प्रेम-पारावार हो॥
जय पिता, जय-जय पिता, हम जय तुम्हारी गा रहे।
रात-दिन घर में हमारे आपकी जयकार हो॥
पास अपने हो न धन तो उसकी कुछ परवा नहीं।
आपकी भक्ति से ही धनवान् यह परिवार हो॥

(३)

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्॥
हे ईश, सब सुखी हों, कोई न हो दुःखारी।
सब हो नीरोग भगवन्, धन धान्य के भंडारी।
सब भद्र भाव रखें, सन्मार्ग के पथिक हों।
दुःखिया न कोई होवे सृष्टि में प्राणधारी॥

(४)

सुखी बसे संसार सब, दुःखिया रहे न कोय।
यह अभिलाषा हम सबकी, भगवन पूरी होय॥ १॥
विद्या बुद्धि तेज बल, सबके भीतर होय।
दूध-पूत धन-धान्य से, वञ्चित रहे न कोय॥ २॥
आपकी भक्ति-प्रेम से, मन होवे भरपूर।
राग-द्वेष से चित्त मेरा, कोसों भागे दूर॥ ३॥
मिले भरोसा आपका, सदा हमें जगदीश।
आशा तेरे धाम की, बनी रहे मम ईश॥ ४॥
पाप से हमें बचाइये, करके दया दयाल।
अपना भक्त बनायके, हमको करो निहाल॥ ५॥
दिल में दया उदारता, मन में प्रेम अपार।
हिय में धीरज धीरता, सबको दो करतार॥ ६॥

(५)

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू।
तुझसे ही पाते प्राण हम, दुखियों के कष्ट हरता है तू॥
तेरा महान तेज है छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान॥
तेरा ही धरते ध्यान हम, माँगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला॥
ओं भूभुर्व स्वः, तत्सवितुर्वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमही
धियो यो नः प्रचोदयात्॥

पिताश्री केशवराम जी का प्रिय ब्रह्म स्तोत्र तथा भजन

(६)

नमस्ते सते ते जगत कारणाय, नमस्ते चिते सर्व लोकाश्रयाय।
नमोऽद्वैत तत्वाय मुक्ति प्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापने शाश्वताय॥ १ ॥
त्वमेकं शरेण्यं त्वमेकं वरेण्यं, त्वमेकं जगतपालकं स्वप्रकाशम्।
त्वमेकं जगत् कर्तृ पार्तृ प्रहर्तृ, त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम्॥ २ ॥
भयानां भयं भीषणं भीषणानाम्, गति प्राणिनां पावनं पावनानाम्।
महोच्चैः पदाणां नियन्तृत्वमेकं, परेषां परं रक्षणां रक्षणानाम्॥ ३ ॥
वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो, वयं त्वां जगत साक्षी रूपम् नमामः।
सदेकं निधानं निरालम्ब ईशं, भवाम्बोधिपोतं शरण्यं व्रजामः॥ ४ ॥
न तस्य कश्चित्पतिरस्ति लोके, न चेशिता नैव च तस्य लिंगम्।
स कारणं करणाधिपा धिपो, न चास्य कश्चिद् जनिता न चाधिपः॥ ५ ॥
तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तं देवतानां परम हि दैवतम्।
पतिं पतीनां परमं परस्ताद्, विदाम देवं भुवनेश मीड्यम्॥ ६ ॥
एको देवः सर्वभूतेषु गूढ़ सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च॥ ७ ॥
त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देवः॥ ८ ॥

(७)

हे दयामय! हम सबों को शुद्धताई दीजिए।
दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिए॥ १ ॥
ऐसी कृपा और अनुग्रह, हम पर हो परमात्मा।
हो निवासी इस जगत् के, सबके सब धर्मात्मा॥ २ ॥
हो उजाला सबके मन में, ज्ञान के प्रकाश से।
और अँधेरा दूर सारा हो, अविद्या नाश से॥ ३ ॥
खोटे कर्मों से बचें, तेरे ही गुण गावें सदा।
छूट जावें दुःख सारे, पावें जन सुख सम्पदा॥ ४ ॥
सारी विद्याओं को सीखें, ज्ञान से भरपूर हों।
शुभ कर्म में होवें तत्पर, दुष्ट गुण सब दूर हों॥ ५ ॥

यज्ञ हवन से हो सुगन्धित इस धरा के सर्वदेश।
वायु-जल सुखदाई होवें, जाँय मिट सारे क्लेश॥ ६ ॥
वेद के प्रचार में, होवें सभी पुरुषार्थी।
हो परस्पर प्रीति सब में, और बनें परमार्थी॥ ७ ॥
लोभी, कामी और क्रोधी, कोई पिता हममें न हो।
सर्व व्यसनों से बचें, और छोड़ दे मद मोह को॥ ८ ॥
अच्छी संगति में रहें, और वेद मार्ग पर चलें।
तेरे ही होवें उपासक, सब कुकर्मों से बचें॥ ९ ॥
कीजिए हम सबका हृदय, शुद्ध अपने ज्ञान से।
मान भक्तों में बढ़ाओ, अपनी भक्ति दान से॥ १० ॥
शम, दम, क्षमा, तप, धीरता, ब्रह्मचर्य को धारण करें।
तब तक जीयें, हम धर्मयुक्त आचार, व्रत पालन करें॥ ११ ॥
तीन तापों से बचा प्रभु, स्वाधीनता का दान कर।
विश्व सेवा के लिये, हमें योग्यता प्रदान कर॥ १२ ॥
सर्वरक्षक, पथ-प्रदर्शक, न्यायकारी मान कर।
आप ही को नित भजें, प्रभु सर्व व्यापक जान कर॥ १३ ॥

माताश्री धनदेवी के प्रिय भजन

(८)

जय जय पिता परम आनन्द दाता, जगदादि कारण मुक्ति प्रदाता।
अनादि और अनन्त विशेषण हैं तेरे, सृष्टि का स्रष्टा तू भर्ता संहर्ता॥
सूक्ष्म से सूक्ष्म तू है स्थूल इतना कि जिसमें यह ब्रह्माण्ड सारा समाता।
मैं लालित व पालित हूँ पितृ-स्नेह का, यह प्राकृत सम्बन्ध है तुझसे ताता॥
करो शुद्ध निर्मल मेरी आत्मा को, करूँ मैं विनय नित्य सायं व प्रातः।
मिटाओ मेरे भय को आवागमन के, फिरूँ न जन्म पाता और बिलबिलाता॥
बिना तेरे है कौन दीनन का बंधु कि जिसको मैं अपनी अवस्था सुनाता।
'अमीं' रस पिलाओ कृपा करके मुझको, रहूँ सर्वदा तेरी कीर्ति को गाता॥

(९)

अजब हैरान हूँ भगवन्! तुम्हें कैसे रिझाऊँ मैं।
कोई वस्तु नहीं ऐसी जिसे सेवा में लाऊँ मैं॥ १ ॥
करूँ किस तरह आवाह्न, कि तुम व्यापक हो घट घट में।
निरादर है बुलाने में, अगर घण्टी बजाऊँ मैं॥ २ ॥
तुम्हीं हो मूरती में भी, तुम्हीं व्यापक हो फूलों में।
भला भगवान् को भगवान् पर कैसे चढ़ाऊ मैं॥ ३ ॥
लगाना भोग भी तुमको, इक अपमान करना है।
खिलाता है जो सब जग को, उसे कैसे खिलाऊँ मैं॥ ४ ॥
तुम्हारी ज्योति से रोशन हैं, सूरज, चाँद और तारे।
महा अन्धेर है, भगवन्, अगर दीपक दिखाऊँ मैं॥ ५ ॥
भुजायें हैं न गरदन है, न सीना है न पेशानी।
तुम हो निरलेप नारायण, कहाँ चन्दन लगाऊँ मैं॥ ६ ॥

(१०)

पितु-मातु सहायक स्वामी सखा, तुम ही एक नाथ हमारे हो।
जिनके कछु और आधार नहीं, तिनके तुमही रखवारे हो॥
सब भाँति सदा सुखदायक हो, दुःख-दुर्गण नाशन हारे हो।
प्रतिपाल करो सिगरे जग को अतिशय करुणा उर धारे हो॥
भूले हैं हम ही तुमको, तुमतो हमरी सुधि नहिं विसारे हो।
उपकारन को कछु अन्त नहीं, छिन ही छिन जो विस्तारे हो॥
महाराज! महा महिमा तुम्हरी, समझे विरले बुधवारे हो।
शुभ शान्ति-निकेतन प्रेमनिधे, मन-मन्दिर के उजियारे हो॥
एहि जीवन के तुम जीवन हो, इन प्राणन के तुम प्यारे हो।
तुमसौं प्रभु पाय 'प्रताप हरी' केहि के अब और सहारे हो॥

(११)

तुम्हारे दिव्य दर्शन की, मैं इच्छा लेके आयी हूँ।
पिला दो प्रेम का अमृत, पिपासा लेकर आयी हूँ॥ १ ॥
रतन अनमोल लाते, लाने वाले भेंट को तेरी।
मैं केवल आँसुओं की, मंजु माला लेके आयी हूँ॥ २ ॥

जगत् के रंग सब झूठे, तू अपने रंग में रंग दे।
मैं अपना यह महा बद रंग, चोला लेके आयी हूँ॥ ३ ॥
प्रकाशानन्द हो जावे, मेरी अन्धेरी कुटिया में।
तुम्हारा आसरा विश्वास, आशा लेके आयी हूँ॥ ४ ॥

महात्मा गोपाल स्वामी जी के प्रिय भजन

(१२)

हे प्रेममय प्रभु! तुम्हीं सबके आधार हो।
तुमको परम पिता प्रणाम बार-बार हो॥ १ ॥
ऐसी कृपा करो कि हम सब धर्मवीर हों।
वैदिक पवित्र धर्म का जग में प्रचार हो॥ २ ॥
सन्देश देश-देश में वेदों का दें सुना।
सद्भाव और प्रेम का सब में प्रसार हो॥ ३ ॥
असहाय के सहाय हों, उपकार हम करें।
अभिमान से बचें, हृदय निर्भय उदार हो॥ ४ ॥
फूले फले संसार में यह रम्य वाटिका।
कर्त्तव्य अपने का सदा हमको विचार हो॥ ५ ॥
स्वाधीनता के मन्त्र का जप हम सदा करें।
सेवा में मातृ-भूमि के तन-मन निसार हो॥ ६ ॥

(१३)

वह शक्ति हमें दो दयानिधे, कर्त्तव्य मार्ग पर डट जावें।
पर सेवा, पर उपकार में हम, निज जीवन सफल बना जावें॥ १ ॥
हम दीन-दुःखी, निबलों विकलों के सेवक बन सन्ताप हरें।
जो हैं अटके, भूले भटके, उनको तारें खुद तर जावें॥ २ ॥
छल-दम्भ, द्वेष, पाखण्ड-झूँठ, अन्याय से निशिदिन दूर रहें।
जीवन हो शुद्ध सरल अपना, शुचि प्रेम-सुधा-रस बरसावें॥ ३ ॥
निज आन-मान मर्यादा का प्रभु ध्यान रहे, अभिमान रहे।
जिस देश, जाति में जन्म लिया, बलिदान उसी पर हो जावें॥ ४ ॥

(१२)

तव वन्दन हे नाथ करें हम।

तव चरणों की छाया पाकर, शीतल सुख उपभोग करें हम॥
भारत माता की सेवा का व्रत भारी हे नाथ! धरें हम।
माँ के हित की रक्षा के हित न्यौछावर निज प्राण करें हम॥
पाप-शाल को तोड़ गिरावें वेदाज्ञा निज शीश धरें हम।
राग-द्वेष को दूर हटाकर प्रेम-मन्त्र का जाप करें हम॥
फूले दयानन्द फुलवारी विद्या-मधु का पान करें हम।
प्रातः सायं तुझको ध्यावें तेरा ही गुणगान करें हम॥

(१३)

मिलता है सच्चा सुख केवल, भगवान् तुम्हारे चरणों में।
यह विनती है पल-पल छिन-छिन, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में॥
चाहे वैरी कुल संसार बने, चाहे जीवन मुझ पर भार बने।
चाहे मौत गले का हार बने, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में॥ १ ॥
चाहे संकट ने मुझे घेरा हो, चाहे चारों ओर अँधेरा हो।
पर चित्त न डगमग मेरा हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में॥ २ ॥
चाहे अग्नि में मुझे जलना हो, चाहें काँटों पर भी चलना हो।
चाहे छोड़के देश निकलना हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में॥ ३ ॥
जिह्वा पर तेरा नाम रहे, तेरी याद सुबह और शाम रहे।
बस काम यही आठों याम रहे, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में॥ ४ ॥

(१४)

भगवान्! मोरी नैया उस पार लगा देना।
अब तक तो निभाया है, आगे भी निभा देना॥
दल-बल के साथ माया, घेरे जो मुझको आ कर।
तुम देखते न रहना, मुझे उससे छुड़ा देना॥
सम्भव है, झंझटों में, मैं तुमको भूल जाऊँ।
पर, नाथ, कहीं तुम भी, मुझको न भुला देना॥
तुम इष्ट, मैं उपासक; तुम देव मैं पुजारी।
यह बात सच है तो फिर—करके दिखा देना॥

(१६)

जगदीश, शान्त हृदय को मेरे बनाइये।
प्रकाश अपनी कृपा का मुझ को दिखाइये॥
हो कर के साक्षात् मेरे मन में आइये।
और आ के, फिर, यहाँ से बाहर न जाइये॥
अन्तःकरण को ज्ञान से भरपूर कीजिये।
और ज्योति-युक्त बुद्धि को मेरी बनाइये॥
'लवलीन आप में रहे, भागा फिरे न मन',
इसके लिए विवेक का पहरा बिठाइये॥ जगदीश...

(१७)

तेरे पूजन को भगवान्, बना मन मन्दिर आलीशान।
करूँ कैसे पूजन भगवान्, नहीं मुझ को पूजा का ज्ञान॥
करें पूजा दुनिया के लोग, लगाते तुम्हें प्रेम से भोग।
चढ़ाते पुष्प फल पकवान, करूँ कैसे पूजन भगवान॥ १ ॥
न मेरे मन में ऐसा चाव, न ऐसी पूजा का ही भाव।
चाहूँ मैं पूजा एक महान्, करूँ कैसे पूजन भगवान्॥ २ ॥
मेरी पूजन की जो टेक, निराली है दुनिया से एक।
दो हृदयों का हो एक मिलान, करूँ कैसे पूजन भगवान्॥ ३ ॥
उसी की लगी हुई है चाह, न दूजी पूजा की परवाह।
मगर मैं हूँ उस से अनजान, करूँ कैसे पूजन भगवान्॥ ४ ॥
तुम्हीं बतला दो उसका भेद, मिटे जो मेरे मन का खेद।
बने **गोपाल** तुम्हारा गान, करूँ कैसे पूजन भगवान्॥ ५ ॥

(१८)

तेरी मेहरबानी का है बोझ इतना,
जिसे मैं उठाने के क़ाबिल नहीं हूँ।
मैं लिख तो रहा हूँ मगर जानता हूँ,
मैं कुछ भी लिखने के क़ाबिल नहीं हूँ॥ १ ॥
तुम्हीं ने अता की, मुझे ज़िन्दगानी,
मुँह में ज़ुबान और क़लम में रवानी।
कर्ज़दार तेरी दया का हूँ इतना,
जिसे मैं चुकाने के क़ाबिल नहीं हूँ॥ २ ॥

यह माना कि दाता हो तुम कुल जहाँ के,
मगर कैसे झोली फैलाऊँ मैं आके।
जो पहले दिया है वो कुछ कम नहीं है,
मैं उसी को उठाने के क़ाबिल नहीं हूँ॥ ३ ॥

ज़माने की चाहत में, खुद को मिटाया,
बड़ी देर बाद, तेरे रस्ते पर आया।
अब आ तो गया हूँ, मगर जानता हूँ,
तुम्हें मुँह दिखाने के क़ाबिल नहीं हूँ॥ ४ ॥

यही माँगता हूँ सिर को झुका कर,
तेरा दीद इक बार जी भर के पा कर॥
सज़ा जो भी दोगे, क़बूल होगी मुझको,
और कुछ भी पाने के, मैं काबिल नहीं हूँ॥ ५ ॥

(१९)

इक तेरी दया का दान मिले, इक तेरा सहारा मिल जाये।
भवसागर में बहती मेरी, नैया को किनारा मिल जाये॥ १ ॥
मैं दीन हूँ, दीन दयाल है तू, अल्पज्ञ हूँ मैं, सर्वज्ञ है तू।
आशाओं की झोली भर जाये, जब तेरा द्वारा मिल जाये॥ २ ॥
दुनियाँ की टेढ़ी चालों में, पड़कर के कुछ पा न सका।
तू सर्व वरों का दाता है, अब वरदान ही तेरा मिल जाये॥ ३ ॥
इस मानव जीवन को पाकर, कोई उत्तम कर्म कमा न सका।
अज्ञान का परदा हट जाये, यदि तेरा उजियारा मिल जाये॥ ४ ॥
अपने मुझ को अपना न सके, ग़ैरों को उलाहना क्यों कर दूँ।
अब दिल की तड़प यह कहती है, वह प्रीतम प्यारा मिल जाये॥ ५ ॥
है बिनती एक यही मेरी, यही एक निवेदन है मेरा।
मुक्ति के लायक़ यदि बन न सकूँ, नर तन ही दुबारा मिल जाय॥ ६ ॥
मैं नर हूँ, तू नारायण है, इतनी तो दया करना दाता।
तेरी पूजा का, अर्चन का, अधिकार ही मुझ को मिल जाये॥ ७ ॥
इक तेरी दया का..............................

(२०)

ओम् है जीवन हमारा, ओम् प्राणाधार है।
ओम् है कर्त्ता विधाता, ओम् पालनहार है॥ १ ॥
ओम् है दुःख का विनाशक, ओम् सर्वानन्द है।
ओम् है बल-तेजधारी, ओम् करुणाकन्द है॥ २ ॥
ओम् सबका पूज्य है, हम ओम् का पूजन करें।
ओम् ही के ध्यान से, हम शुद्ध अपना मन करें॥ ३ ॥
ओम् के गुरुमन्त्र जपने से, रहेगा शुद्ध मन।
बुद्धि दिन प्रतिदिन बढ़ेगी, धर्म में होगी लगन॥ ४ ॥
ओम् के जप से हमारा ज्ञान बढ़ता जाएगा।
अन्त में प्रिय ओम् हमको मोक्ष-पद पहुँचाएगा॥ ५ ॥

(२१)

हे ईश मेरे मन के, मेरे मन को सुमन कर दो।
इस तन की अमावस में, पूनम की किरण भर दो॥ १ ॥
जन जन के नयनों में देखूँ मैं झलक तेरी।
साँसो की सरगम में, सुन पाऊँ पुलक तेरी।
मन्दिर में मेरे आकर, मेरे भाव सजग कर दो॥ २ ॥
क्या जग ने दिया मुझ को, सपने ही दिखाये हैं।
कितनों ने मेरे पथ पर, काँटे ही बिछाये हैं।
अब तुम मुझे अपना कर, जीवन को सफ़ल कर दो॥ ३ ॥
जिसे पाकर नश्वरता भी, अमृत में बदल जाती,
उन्हीं प्यार की बूदों की, प्यासी है मेरी धरती,
बरसो मेरे आँगन में, मुझे आज सरस कर दो॥ ४ ॥
मैं सत्य सखा तेरा, तेरा ही रहूँगा मैं।
कोई सुख मिले न मिले, कुछ भी न कहूँगा मैं।
तुम पास हो मेरे हर दम, यह विश्वास अटल कर दो॥ ५ ॥
हे ईश मेरे मन को...............किरण भर दो।

(२२)

तुम्हीं मेरे बन्धु सखा तुम्हीं मेरे,
तुम्हीं मेरी माता, तुम्हीं पिता हो।
तुम्हीं मेरे रक्षक हो, तुम्हीं मेरे पालक हो,
तुम्हीं इष्ट मेरे तुम्हीं देवता हो।
तुम्हें छोड़ किसकी शरण में मैं जाऊँ,
है सब कुछ तेरा क्या तुझ पर चढ़ाऊँ।
तुम्हीं मेरी विद्या, तुम्हीं मेरी दौलत,
मैं क्या-क्या बताऊँ, कि तुम मेरे क्या हो॥ १ ॥
तुम्हीं ने बनाये, शशि भान तारे
अगन और गगन जल, हवा भूमि सारे।
तुम्हीं ने रचा है, यह संसार सारा
अजब कारीगर हो, अजब रचयिता हो॥ २ ॥
ज़माना तुम्हें, ढूँढ़ता फिर रहा है,
न पाया किसी ने, छुपा तू कहाँ है।
पता मिल रहा है, पत्ते-पत्ते से तेरा,
सरासर ग़लत है, कि तुम लापता हो॥ ३ ॥
अजब तेरी लीला अजब तेरी माया,
सभी से अलग है सभी में समाया।
सत्ता से तेरी मुकर जायें कैसे,
कि हर सूं तुम ही, रहे जगमगा हो॥ ४॥

(२३)

दाता तेरे सुमिरन का, वरदान जो मिल जाये,
मुरझाई कली दिल की, एक आन में खिल जाये॥ १ ॥
सुनते हैं तेरी रहमत, दिन रात बरसती है।
एक बूंद जो मिल जाये, तक़दीर बदल जाये॥ २ ॥
देवत्व के फूलों से, दामन को मेरे भर दो,
जीवन यह सुगन्धित हो, दुर्गन्ध निकल जाये॥ ३ ॥
हे मानव तू दिल से, प्रभु नाम का सिमरन कर।
दोषों भरे जीवन का, काँटा ही बदल जाये॥ ४ ॥
हे नाथ मेरे दिल की, इतनी-सी तमन्ना है।
पापों से बचा लेना, यदि पाँव फिसल जाये॥ ५ ॥

(२४)

ओ३म् सत्यं शिवम् सुन्दरम है, सर्वव्यापक है, सीमा नहीं है।
सच्चिदानन्द घट घट समाया, वैसी महिमा किसी की नहीं है॥ १ ॥
है अजन्मा मगर जन्मदाता, सृष्टिकर्ता है सब सिद्धिदाता।
परम ज्ञानी है, पावन विधाता, कोई भी उसकी उपमा नहीं है॥ २ ॥
वह अनादि है, अनहद है अनुपम, अजर है, अमर और अभयं।
है निराकार, निर्विकार नित्यं, उसकी कोई भी प्रतिमा नहीं है॥ ३ ॥
ओ३म् है व्योम, सागर, धरा में, वह है हर श्वास में हर शिरा में।
अखिल विश्व में, चर और अचर में, दूसरा विश्वकर्मा नहीं है॥ ४ ॥
शक्ति दो हम बनें कर्म-भूषण, भक्ति दो हम बनें धर्म भूषण।
हो न पाये किसी का भी शोषण, भावना हम सभी की यही है॥ ५ ॥
हे परमब्रह्म परमेश्वर वंदन, नमन कर रहे हम सब आर्य जन।
सब के आधार, तुम ही हो भगवन, अनन्त तेरी महिमा कही है॥ ६ ॥
ओ३म् सत्यं शिवम्..............नहीं है।

—नरेन्द्र आर्य 'अमर भूषण'

(२५)

ओ३म् हमें ज्योतिर्मय कर दो।
प्राणों में मेधा बरसा कर, सुख जीवन में करो प्रदान।
सूर्य, चन्द्र निर्माता, त्राता, शान्ति सौख्य का दो वरदान।
आत्म तत्व को झंकृत कर दो, ओ३म् हमें ज्योतिर्मय कर दो॥ १ ॥
सब क्लेशों से दूर रहें हम, सदा तुम्हें ही मन में धारें।
रूप तुम्हारा विश्व विधाता, मन-मन्दिर में सदा विचारें।
श्रेष्ठ बुद्धि का हमको वर दो, ओ३म्, हमें ज्योतिर्मय कर दो॥ २ ॥
दुःख नाशक हो, दूर करो दुःख, शान्ति सुधा मन में बरसाओ,
प्रेरक, त्राता, भाग्य-विधाता, ज्योति, ज्ञान, जीवन सरसाओ।
मन मेरे को निर्मल कर दो, ओ३म् हमें ज्योतिर्मय कर दो॥ ३ ॥

—स्व० भारतेन्द्र नाथ

(२६)

जौहर-गान

हमें वरणीय-वर जगदीश, वर-वर दे, यही वर दे।
प्रभो! वैदिक मिशन के, मिशनरी सच्चे हमें कर दे॥ १॥
फिरे देशों-विदेशों में, ऋचायें वेद की गाते।
हमारे हृदयों में ऐसी श्रद्धा वेद की भर दे॥ २॥
बनें निर्मम, असंगी, निस्पृह, निष्काम, निर्मोही।
परन्तु दीन दुःखियों के लिये तो अश्रु भर-भर दे॥ ३॥
जियें तो धर्म सेवा में, मरें तो धर्म रक्षा में।
हमें ऐसा जिगर दे, और ऐसा ही हमें सर दे॥ ४॥
सुखी हों या दुःखी हों, आपदा हो, सम्पदा या हो।
कदापि एक डग पीछे, न हममे से कोई धर दे॥ ५॥
बनायें आर्य सारे विश्व को वेदानुयायी हम।
हमें वह जातवेदस् सत्य का प्रकाश प्रखर दे॥ ६॥
रहे 'विदेह' अन्तर कुछ न करनी और कथनी में।
हमारी वाणियों में ओज दे, तासीर दे, स्वर दे॥ ७॥

—स्व० स्वामी विद्यानन्द 'विदेह'

(२७)

साधु तो उसको कहिये, जे पीर पराई जाने रे।
परसुख में जो सुखी रहे, परदुःख में दुःख माने रे॥ १॥
पतित प्राणियों का निशवासर प्रेम सहित उद्धार करे।
सहता रहे शान्त हृदय से, जग के तीखे ताने रे॥ २॥
करे आत्मवत् आदर सब का, सब से सच्चा प्यार करे।
मन में समता धारण कर के, भेदभाव विसराने रे॥ ३॥
चाहे मान करे कोई, चाहे कोई अपमान करे।
हर्ष शोक से ऊपर उठकर, चित्त आनन्द समाने रे॥ ४॥
दुःखी न होवे निज निन्दा से, निन्दक का भी हित साधे।
सुन निज प्रशंसा 'विदेह' जो मन अभिमान न लाने रे॥ ५॥

—स्व० स्वामी विद्यानन्द 'विदेह'

X. ओ३म्-संकीर्तन*

रचयिता—स्व० स्वामी सवित्रानन्दजी सरस्वती, पूर्व आश्रम में पं० विश्वमित्र जी मैसूर (कर्नाटक)

१. **अनन्तगुणगणभूषित ओ३म्।**
ओम् अनन्त गुणों से भूषित है।
२. **शुद्धब्रह्म परात्पर ओ३म्।**
ओम् शुद्ध ब्रह्म है और सूक्ष्म से सूक्ष्म है।
३. **शबलब्रह्म सुनामक ओ३म्।**
विश्व के साथ ओम् शबल ब्रह्म कहलाता है।
४. **कालात्मक परमेश्वर ओ३म्।**
ओम् ही काल है और सर्वोच्च नियन्ता है।
५. **प्रलयानन्तर सुस्थित ओ३म्।**
प्रलय के बाद भी ओम् ही बचा रहता है।
६. **ईक्षितसृष्टिविधायक ओ३म्।**
ओम् ही योजना के अनुसार सृष्टि बनाता है।
७. **व्यापकयज्ञप्रसारक ओ३म्।**
ओम् विश्व में व्याप्त यज्ञ का विस्तार करनेवाला है।
८. **लोकाखिलगतिदायक ओ३म्।**
ओम् सभी लोकों को गति देनेवाला है।
९. **जगन्नियन्तापालक ओ३म्।**
ओम् संसार का नियामक है, सबका पालक है।
१०. **जनतादुःखप्रभञ्जक ओ३म्।**
ओम् लोगों के दुःखों का नाश करनेवाला है।
११. **भक्तप्रियसुखदायक ओ३म्।**
ओम् भक्तों का प्यारा है, उन्हें प्रिय सुख देता है।
१२. **सूर्यादिकद्युतिधारक ओ३म्।**
ओम् सूर्य आदि प्रकाशमान लोकों का धारक है।

* यह ओ३म् संकीर्तन महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित आर्याभिविनय में दिये परमेश्वर के गुणों पर आधारित है।

१३. परमसहायकप्रियवर ओ३म्।
ओम् सबसे बड़ा सहायक है, सबसे अधिक प्रिय है।

१४. नित्यतृप्तसर्वाश्रय ओ३म्।
ओम् सदा ही तृप्त है और सबका आश्रय है।

१५. ज्ञानरूपसत्प्रेरक ओ३म्।
ओम् ज्ञानस्वरूप है, सदा अच्छी प्रेरणा देता है।

१६. सकलद्रव्यव्यापक ओ३म्।
ओम् सारे पदार्थों में व्याप्त है।

१७. श्रोत्रादीन्द्रियशक्तिद ओ३म्।
कान आदि सभी इन्द्रियों को ओम् ही शक्ति देता है।

१८. कर्माश्रितफलदायक ओ३म्।
ओम् सबको कर्मों के अनुसार फल देता है।

१९. अद्भुततेजोबलयुत ओ३म्।
ओम् अदभुत तेज और बल से युक्त है।

२०. श्रेयः प्राप्तिसुसाधक ओ३म्।
ओम् श्रेयस् की प्राप्ति की सिद्धि करानेवाला है।

२१. हर्षितमतिसंदायक ओ३म्।
ओम् सदा प्रसन्न रहने वाली मति देता है।

२२. मातृप्रेमपरिपोषक ओ३म्।
माँ का प्यार देकर ओम् ही पोषण करता है।

२३. स्नेहार्द्रितपितृपालक ओ३म्।
ओम् स्नेह से पूर्ण पिता की तरह पालन करता है।

२४. व्याहृतिलोकविभाजक ओ३म्।
सात व्याहृतियों के अनुसार ओम् ही लोकों का वर्गीकरण करनेवाला है।

२५. सकलऋद्धिसिद्धिप्रद ओ३म्।
ओम् सब प्रकार की ऋद्धि और सिद्धि देनेवाला है।

२६. वेदचतुष्टयदायक ओ३म्।
ओम् ही चार वेदों का देनेवाला है।

२७. अग्न्यादिकऋषिपूजित ओ३म्।
अग्नि आदि ऋषियों ने ओम् की ही पूजा की है।

२८. साधनसाध्यसमुच्चय ओ३म्।
ओम् ही साध्य है और ओम् ही साधन है।

२९. प्राणदक्षसंदायक ओ३म्।
ओम् प्राणों में बल देता है।

३०. इन्द्रबृहस्पतिनामक ओ३म्।
इन्द्र और बृहस्तपति उसी ओम् के नाम हैं।

३१. ऋतुपरिवर्तनकारण ओ३म्।
ऋतुओं में उसी ओम् के कारण परिवर्तन होते हैं।

३२. ऋतुमूलकहितदायक ओ३म्।
ऋतुओं के द्वारा ओम् सबका हित करता है।

३३. ज्ञानसूर्यविस्तारक ओ३म्।
ओम् सब ओर ज्ञानरूपी सूर्य का विस्तार करता है।

३४. सुरसंपूजितसुरवर ओ३म्।
सब देवताओं से पूजित और सबसे श्रेष्ठ देवता ओम् ही है।

३५. सत्संकल्पप्रपूरक ओ३म्।
ओम् सत्य संकल्पों को हमेशा पूर्ण करता है।

३६. धर्माधर्मसुशिक्षक ओ३म्।
धर्म क्या है और अधर्म क्या, ओम् ही सिखाता है।

३७. जन्मरहितजन्मप्रद ओ३म्।
ओम् का जन्म नहीं होता, पर वह सबको जन्म देता है।

३८. देवादिकऋणमोचक ओ३म्।
ओम् देव आदि ऋणों से मुक्त करनेवाला है।

३९. क्लेशविमुक्तविशेषण ओ३म्।
ओम् सभी दु:खों से मुक्त है, यही ओम् की विशेषता है।

४०. स्नायुरहितसुखपूरक ओ३म्।
नाड़ी आदियों के बंधन से रहित ओम् सुख देनेवाला है।

४१. दैहिकरोगनिवारक ओ३म्।
ओम् देह के सभी रोगों का निवारण करता है।

४२. तनुपालकदीर्घायुद ओ३म्।
ओम् शरीर की रक्षा करता है और दीर्घायु देता है।

४३. आत्मिकबलसंदायक ओ३म्।
आत्मशक्ति देनेवाला ओम् ही है।

४४. मानवलक्ष्यमहाश्रय ओ३म्।
सभी मनुष्यों का ओम् ही लक्ष्य है और महान् आश्रय है।

४५. नित्यनिरंजननिरुपम् ओ३म्।
ओम् नित्य, निराकार और अनुपम है।

४६. भवभयभंजनभेषज ओ३म्।
ओम् जन्म-मरण के बंधन भय की एकमात्र औषध है।

४७. आर्तत्राणपरायण ओ३म्।
ओम् दुखियों के दु:ख दूर करता है और सर्वोत्कृष्ठ आश्रय है।

४८. अज्ञानादिकरिपुहर ओ३म्।
ओम् अज्ञान आदि शत्रुओं का नाश करता है।

४९. दारिद्र्यादि-विनाशक ओ३म्।
ओम् दरिद्रता आदि दुखों को नष्ट करता है।

५०. परमैश्वर्यसुदायक ओ३म्।
परम ऐश्वर्य को ओम् ही देता है।

५१. सर्वानन्दसुसाधक ओ३म्।
सब की आनन्दमय स्थिति को ओम् ही सिद्ध करता है।

५२. साम्राज्यार्कप्रसारक ओ३म्।
ओम् सुख-शान्ति साम्राज्य रूपी सूर्य का प्रकाश फैलाता है।

५३. विश्वविनोदक विभुवर ओ३म्।
ओम् विश्व को विनोदित करने वाला सर्वसमर्थ है।

५४. सद्बोधित हृद्वर्द्धक ओ३म्।
ओम् उद्बुद्ध हृदय वाले व्यक्ति को बढ़ावा देता है।

५५. निर्मल नायक शर्मद ओ३म्।
ओम् सदा पवित्र, नेता और सुख देनेवाला है।

५६. लोभादिकरिपुनाशक ओ३म्।
ओम् लोभ आदि शत्रुओं का नाश करनेवाला है।

५७. तेज:प्रद तेजोमय ओ३म्।
ओम् स्वयं तेज:स्वरूप है और भक्तों को तेजस्वी बनाता है।

५८. ओज:प्रद ओजोमय ओ३म्।
ओम् स्वयं ओज:स्वरूप है और भक्तों को ओजस्वी बनाता है।

५९. श्रद्धाप्रद श्रद्धामय ओ३म्।
ओम् श्रद्धारूप है और भक्तों को श्रद्धा प्रदान करता है।

६०. रसवाहक सर्वेश्वर ओ३म्।
ओम् सबमें रस बहानेवाला और सबका ईश्वर है।

६१. दानसृष्टिसंचालक ओ३म्।
ओम् दानरूप इस सृष्टि का संचालन करता है।

६२. रसभेदक संवर्द्धक ओ३म्।
ओम् सभी रसों का भेदन करके उनको बढ़ाता है।

६३. पापनिवारकमोक्षद ओ३म्।
ओम् पापों का निवारण करके मोक्ष देता है।

६४. मृत्युरूपसंशोधक ओ३म्।
ओम् ही मृत्यु के रूप में आकर आत्मा का शोधन करता है।

६५. चित्रविचित्रमहातुथ ओ३म्।
ओम् बड़ा ही अद्भुत और विचित्र है, महान् सत्य है।

६६. सत्यसनातन धर्मद ओ३म्।
सत्य सनातन वैदिक धर्म ओम् ने दिया है।

६७. होमार्पित हवि भेदक ओ३म्।
होम में दी गई आहुतियों को ओम् सूक्ष्म बना फैला देता है।

६८. सभ्य सभाप्रतिभा प्रिय ओ३म्।
ओम् सभ्य है और प्रतिभाशाली सभासदों को प्यार करता है।

६९. विस्तृत शांति विधायक ओ३म्।
विश्व में व्याप्त शान्ति का विधान करनेवाला ओम् ही है।

७०. वरुणप्रजापतिप्रेरक ओ३म्।
ओम् स्वीकरणीय, प्रजाओं का रक्षक और प्रेरणा देनेवाला है।

७१. स्थावरजङ्गम रक्षक ओ३म्।
स्थावर और जङ्गम सभी का रक्षक ओम् है।

७२. विद्वज्जन मतिप्रेरक ओ३म्।
विद्वानों की बुद्धि को ओम् ही प्रेरणा देता है।

७३. विक्रम विष्णु विराडसि ओ३म्।
ओम् पराक्रमी, सर्वव्यापक और नानारूपों में विराजमान है।

७४. दानरहितनर नाशक ओ३म्।
दान की भावना से रहित व्यक्ति का नाशक ओम् है।

७५. त्यागयुक्त नरभद्रद ओ३म्।
ओम् त्याग की भावनावाले व्यक्तियों का कल्याण करता है।

७६. मन्युरूप मन्युप्रद ओ३म्।
दुष्टों पर क्रोध करता है और ओम् ही मन्यु शक्ति भक्तों को देता है।

७७. वीर्यरूप वीर्यप्रद ओ३म्।
ओम् वीर्यरूप है और वीर्य देनेवाला है।

७८. सहनरूप सहदायक ओ३म्।
ओम् सहनशील है और सहन करने की शक्ति देता है।

७९. अचलरूप संचालक ओ३म्।
ओम् स्वयं अचल है, पर सबको गति देकर चला रहा है।

८०. रुद्र भीम भयवाहक ओ३म्।
ओम् दुष्टों को रुलाता है, भयस्वरूप है, पापों से भय पैदा करता है।

८१. सज्जन सम्मत सौख्यद ओ३म्।
ओम् सज्जनों के लिए हितकारी सुख देता है।

८२. वर्णचतुष्टय स्थापक ओ३म्।
ओम् ब्राह्मण आदि चारों वर्णों का विधान करनेवाला है।

८३. सर्वन्यून संपूरक ओ३म्।
ओम् सब की कमियों को पूरा करता है।

८४. विद्वेषादिक भंजक ओ३म्।
ओम् द्वेष आदि दुष्ट भावनाओं का नाश करता है।

८५. सर्वमित्र संपादक ओ३म्।
ओम् सबसे मित्रता करनेवाला और सबको मित्र बना देनेवाला है।

८६. सृष्टिस्थितिलयकारक ओ३म्।
सृष्टि, स्थिति और प्रलय सब ओम् ही करता है।

८७. क्षोभरहितनभनामक ओ३म्।
ओम् चंचलता से रहित है, सबको एकसाथ अनुशासन में बांधकर रखता है।

८८. मंगलमूलमयोभुव ओ३म्।
ओम् सारे मंगल का वही मूल है और सुखस्वरूप है।

८९. शंकररूपमयस्कर ओ३म्।
ओम् शंकर है, सबको सुख और शान्ति देनेवाला है।

९०. वष्टुधियावसुरसवति ओ३म्।
ओम् सबसे वांछनीय है, सब को रसवती बुद्धि देता है।

९१. सत्पथदर्शपुरोहित ओ३म्।
आत्म-यज्ञ का ओम् ही पुरोहित है और आत्मा को सन्मार्ग दिखाता है।

९२. नाशनिवारकस्वस्तिद ओ३म्।
ओम् नाश का निवारण करनेवाला और कल्याण प्रद है।

९३. सकलयज्ञस्वीकारक ओ३म्।
ओम् सभी यज्ञों को स्वीकार करता है।

९४. उक्षितरक्षकशिक्षक ओ३म्।
गर्भ में बच्चे की रक्षा करनेवाला और उसे सब कुछ सिखानेवाला ओम् ही है।

९५. विश्वरूपविश्वावसु ओ३म्।
विश्व ओम् ही का रूप है, और ओम विश्व में बसा हुआ है।

९६. विश्वमित्र वैश्वानर ओ३म्।
ओम् सबका मित्र है, मानव-मात्र का हितैषी है।

९७. पुण्यरूप परमपूरुष ओ३म्।
ओम् पुण्यरूप है, सर्वाधिक ऐश्वर्यशाली और परमपुरुष है।

९८. **पाहि निरन्तर पूषण ओ३म्।**
ओम् सब का पोषक और सदा रक्षा करने वाला है।

९९. **पाहिप्रवाहणप्रभुवर ओ३म्।**
आनन्द प्रवाहित करनेवाले ओम् प्रभो, रक्षा करो।

१००. **अद्‌भुत मित्र कृपाकर ओ३म्।**
ओम् अलौकिक मित्र है और कृपा करनेवाला है।

१०१. **मित्ररूपव्रतपालक ओ३म्।**
मित्र रूप में ओम् सब व्रतों का पालन करवाता है।

१०२. **निश्चित मित्र निराश्रय ओ३म्।**
ओम् एकबार मित्र हो जाए तो कभी मित्रता नहीं छोड़ता और वह स्वयं किसी के आश्रित नहीं है।

१०३. **अधमोद्धारकचिन्मय ओ३म्।**
ओम् अधमों का उद्धार करता है और चेतनस्वरूप है।

१०४. **सत्यसुखात्मकसर्वद ओ३म्।**
ओम् सत्यस्वरूप है, सब कुछ वही देता है।

१०५. **निर्गुणरूपनिरामय ओ३म्।**
ओम् निर्गुण है, रूपरहित है और रोगरहित है।

१०६. **आनन्दामृतवर्षक ओ३म्।**
ओम् आनन्द अमृत की वर्षा करता है।

१०७. **गणनायकगणपालक ओ३म्।**
ओम् ही सही रास्ते से सबको चलानेवाला और सबका पालक है।

१०८. **मर्माच्छादकविभुवर ओ३म्।**
हृदय, प्राण आदि को आच्छादित करनेवाला विभुवर ओ३म् है।

ओ३म् असतो मा सद्‌गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय।

—शतपथ ब्राह्मण १४।४।१।३०

"The cultural aspects of human life and activities get fully manifested, expressed and cherished only through festivals. Guided by Vedas (the oldest and the earliest treatise of all true knowledge for the benefit of human beings) the ancient 'Rishis' (the great thinkers of their times) of India, had devised festivals so as to remind every community of its obligations and duties as enshrined in Vedas, apart from festivity and enjoyment part attached with each festival. The festivals have linkages with the moods of changing seasons in India and also with its rich cultural heritage and history. It is the paramount duty of every Indian and every person of Indian origin to celebrate these festivals with full fervour and dedication, wherever they are."

—M. Gopal Swami Saraswati

पर्व पद्धतियाँ

पर्वों के विषय में

''पर्वों की अपनी महत्ता है। भारत को यह गौरव प्राप्त है कि यहाँ सर्वाधिक ऋतुओं के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं ऋतुपरक पर्वों की बहुतायत है। आर्यसमाज की शिरोमणि संस्था सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने ऋषि दयानन्द जन्म शताब्दी के अवसर पर एक बहुत बड़ा कार्य यह किया कि पर्वों की संख्या निश्चित कर उनकी विधियों में एकरूपता ला दी। इस कार्य में उत्तरप्रदेश के हल्दौर के निवासी श्री पं० भवानी प्रसाद जी का योगदान स्वर्ण अक्षरों में लिखे जाने योग्य है। उनकी 'आर्य पर्व पद्धति' को सर्वत्र मान्यता प्राप्त है। उसी के आधार पर इन पद्धतियों को कर्मकाण्ड की विभिन्न पुस्तकों से संकलित किया गया है। प्रयास यह रहा है कि आवश्यक तथ्य छूटने न पावे, और अनावश्यक तथ्य आने न पावे। उद्देश्य यही है कि जैसे संस्कार सब मनुष्यमात्र के लिए संकेतित हैं, वैसे ही पर्व भी सबसे सम्बद्ध हों। पर्वों के प्रमाण के लिए आर्य पर्व पद्धति ही पठनीय एवं मननीय है, और रहेगी।''

XI. आर्य पर्व पद्धति

[मन्त्र भाग]

१. नव-संवत्सरेष्टि-नववर्षोत्सव

[चैत्र शुक्ल प्रतिपदा अथवा मेष संक्रान्ति]

गृह्यकृत्य—प्रातः गृह के परिमार्जन, शोधन, लेपनादि के पश्चात् नवीन शुद्ध स्वदेशीय वस्त्र धारण करें। पश्चात् यजमान सपरिवार बृहद् यज्ञ की सब विधि पूरी करके (पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर) निम्नलिखित संवत्सर वर्णनपरक मन्त्रों से विशेष अधिक आहुतियाँ देवें—

मुख्य होम के मन्त्राः

ओं संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसीदावत्सरोऽसीद्वत्सरोऽसि वत्सरोऽसि। उषसस्ते कल्पन्तामहोरात्रास्ते कल्पन्तामर्द्धमासास्ते कल्पन्तां मासास्ते कल्पन्तामृतवस्ते कल्पन्ताꣳसंवत्सरस्ते कल्पताम्। प्रेत्याऽएत्यै सं चाञ्च प्र च सारय। सुपर्णचिदसि तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवः सीद स्वाहा॥१॥ —यजुः० २७।४५

ओं यमाय यमसूमथर्वभ्योऽवतोकाꣳ संवत्सराय पर्यायिणीं परिवत्सरायाविजातामिदावत्सरायातीत्वरीमिद्वत्सरायातिष्कद्वरीं वत्सराय विजर्जराꣳसंवत्सराय पलिक्नीमृभुभ्योऽ जिनसन्धꣳ साध्येभ्यश्चर्मम्नम् स्वाहा॥ २॥ —यजुः० ३०।१५

ओं द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत। तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शङ्कवोऽर्पिताःषष्टिर्न चलाचलासः स्वाहा॥ ३॥ —ऋग्० १।१६४।४८

ओं सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा। त्रिनाभि चक्रमजरमनर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनाधि तस्थुः स्वाहा॥ ४॥ —ऋग्० १।१६४।२

ओं द्वादशारं नहि तज्जराय वर्वर्ति चक्रं परि द्यामृतस्य। आ पुत्रा अग्ने मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विंशतिश्च तस्थुः स्वाहा॥ ५॥ —ऋग्० १।१६४।११

ओं पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परे अर्धे पुरीषिणम्। अथेमे अन्य उपरे विचक्षणं सप्तचक्रे षळर आहुरर्पितम् स्वाहा॥ ६॥ —ऋग्० १।१६४।१२

ओं पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने तस्मिन्ना तस्थुर्भुवनानि विश्वा। तस्य नाक्षस्तप्यते भूरिभारः सनादेव न शीर्यते सनाभिः स्वाहा॥ ७॥ —ऋग्० १।१६४।१३

ओं सनेमि चक्रमजरं वि वावृत उत्तानायां दश युक्ता वहन्ति। सूर्यस्य चक्षू रजसैत्यावृतं तस्मिन्नार्पिता भुवनानि विश्वा स्वाहा॥ ८॥ —ऋग्० १।१६४।१४

ओं संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्र्युपास्महे।
सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण सं सृज स्वाहा॥ ९॥
—अथर्व० ३।१०।३

ओं यस्मान्मासा निर्मितास्त्रिंशदराः संवत्सरो यस्मान्निर्मितो द्वादशारः। अहोरात्रा यं परियन्तो नापुस्तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् स्वाहा॥ १०॥ —अथर्व० ४।३५।४

तत्पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण विधि पूरी कर यज्ञ महावामदेव्यगान से समाप्त करें।

पश्चात् मध्याह्न में सब जने एकत्र प्रीतिपूर्वक सात्त्विक भोजन करें, तथा अपने आश्रित भृत्य आदिकों को भी अन्न-वस्त्रादि से सत्कृत करें।

सामाजिक कृत्य—अपराह्न में सब आर्य पुरुष किसी सामाजिक स्थान पर या मन्दिर आदि धार्मिक स्थानों में एकत्र हो ज्ञानगोष्ठी, अध्यात्मचर्चा, पारस्परिक मंगल कामना, सामूहिक क्रीड़ा व आमोद-प्रमोद के कृत्य करें। इस दिन प्रत्येक व्यक्ति को अपने आगामी वर्ष की उन्नति का संकल्प भी करना चाहिए।

सब स्त्री-पुरुषों को योग्य है कि यज्ञ के अन्त में सर्वतोभद्र-भाव की प्रार्थना परमात्मा से करें—

ओं यानि नक्षत्राणि दिव्य१न्तरिक्षे अप्सु भूमौ यानि नगेषु दिक्षु। प्रकल्पयंश्चन्द्रमा यान्येति सर्वाणि ममैतानि शिवानि सन्तु॥

—अथर्व० १९।८।१

हे सुख-शान्तिदाता प्रभो! जो नक्षत्र, आकाश [=द्युलोक] में, अन्तरिक्ष वायुमण्डल या मध्यलोक में, जलों=समुद्रों में, भूमि पर, **(नगेषु)** पर्वतों पर, दिशाओं में विद्यमान हैं और जिनको चन्द्रमा **(प्रकल्पयन्)** अपनी गति से प्रभावित कर प्राप्त होता है, वे सब मेरे लिए सुखकारी हों।

ओं स्वस्तितं मे सुप्रातः सुसायं सुदिवं सुमृगं सुशकुनं मे अस्तु। सुहवमग्ने स्वस्त्य१मर्त्यं गत्वा पुनरायाभिनन्दन्॥

—अथर्व० १९।८।३

मेरे लिए **(सु+अस्तितं)** सूर्यास्त-वेला अर्थात् रात्रि सुखकारिणी हो, प्रभात सुखद हो, सुखद सायं-वेला हो, मध्याह्न सुखकर हो, **(सु+मृगं)** मृग नक्षत्र का उदय अर्थात् वर्ष का आरम्भ सुखद हो, सब **(सुशकुनं)** प्रकृति के लक्षण अच्छे हों। हे अग्नि! सूर्य या परमात्मन्! मेरा **(सुहवम्)** सुन्दर लेन-देन जीवन में सुख-शान्ति देनेवाला हो। हे सूर्य! **(अमर्त्यं गत्वा)** अविनश्वर स्थिति को प्राप्त होकर **(अभिनन्दन्)** सबको प्रसन्न करता हुआ तू **(पुनः आ अव)** पुनः आ अर्थात् मुझे दर्शन दे।

ओं स्वस्ति नो अस्त्वभयं नो अस्तु नमोऽहोरात्राभ्यामस्तु॥

—अथर्व० १९।८।७

इस प्रकार हमारा कल्याण हो; हमें अभय हो। दिन-रात्रि परमेश्वर के लिए हमारा नमन हो।

—:०:—

(२) हरि तृतीया (हरियाली तीज)

[श्रावण शुक्ल तृतीया]

प्रत्येक घर में प्रातः स्त्री-पुरुष मिलकर वृहद् यज्ञ करें। सायंकाल सब महिलायें मिलकर यज्ञ करें। शिष्ट संगीत हो तथा सब सखी सहेलियाँ मिलकर झूला झूलें और श्रावण महिमा के गीत गावें।

—:०:—

(३) श्रावणी उपाकर्म [रक्षा बन्धन]

[श्रावण शु० पूर्णिमा]

प्रातःकाल स्नान से निवृत्त होकर प्रथम ब्रह्मयज्ञ करें। फिर बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत आचमन, अंग स्पर्श, आदि शान्तिप्रकरण पर्यन्त सब क्रियाये करें। तत्पश्चात् नवीन यज्ञोपवीत इन मन्त्रों से धारण करें—

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥ १॥
ओं यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वायज्ञोपवीतेनोपनह्यामि॥ २॥

—पार० का० २।२।११

पुराने यज्ञोपवीत निम्न मन्त्र पढ़ कर उतार कर एकान्त में रख दें—

एतावद्दिन पर्यन्तं ब्रह्म त्वं धारितं मया।
जीर्णत्वात् परित्यागो गच्छ सूत्र यथा सुखम्॥

फिर ऋषियों का तर्पण निम्न मन्त्रों के पाठ से करें—

ओम् अग्नि ऋषि स्तृप्यताम्।
ओं वायु ऋषि स्तृप्यताम्॥
ओम् आदित्य ऋषि स्तृप्यताम्।
ओम् अंगिरा ऋषि स्तृप्यताम्॥
ओं कश्यपोत्रिर्भारद्वाजः विश्वमित्रोऽथ गौतमः।
जमदग्निर्वसिष्ठश्च सप्तैते परम ऋषय स्तृप्यताम्॥
ओं लोकानां तुष्टिकर्त्तारो यूयं सर्वे तपोधनाः।
नमो वो धर्म विज्ञेभ्यो, महर्षिभ्यो नमो नमः॥

मुख्य होम के मन्त्राः

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ करके (पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर) घृत-शाकल्य की विशेष आहुतियाँ निम्न मन्त्रों से देवें—

ओं ब्रह्मणे स्वाहा॥ १॥ ओं छन्दोभ्यः स्वाहा॥ २॥
ओं सावित्र्यै स्वाहा॥ ३॥ ओं ब्रह्मणे स्वाहा॥ ४॥
ओं श्रद्धायै स्वाहा॥ ५॥ ओं मेधायै स्वाहा॥ ६॥
ओं प्रज्ञायै स्वाहा॥ ७॥ ओं धारणायै स्वाहा॥ ८॥

ओं सदसस्पतये स्वाहा ॥ ९ ॥ ओम् अनुमतये स्वाहा ॥ १० ॥
ओं छन्दोभ्यः स्वाहा ॥ ११ ॥ ओं ऋषिभ्यः स्वाहा ॥ १२ ॥

तत्पश्चात् निम्न लिखे प्रमाणे पाँच सत्यव्रताहुतियाँ देवें—

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयम्।
तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात्सत्यमुपैमि स्वाहा ॥ इदमग्नये—इदं न मम ॥ १ ॥
ओं वायो व्रतपते० स्वाहा ॥ इदं वायवे—इदं न मम ॥ २ ॥
ओं सूर्य व्रतपते० स्वाहा ॥ इदं सूर्याय—इदं न मम ॥ ३ ॥
ओं चन्द्र व्रतपते० स्वाहा ॥ इदं चन्द्राय—इदं न मम ॥ ४ ॥
ओं व्रतानां व्रतपते० स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय व्रतपतये—इदं न मम ॥ ५ ॥

पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य की चार आहुतियाँ दें—

ओं व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते स्वाहा॥१॥
—यजु:० १९।३०

ओम् अभ्यादधामि समिधमग्ने व्रतपते त्वयि।
व्रतं च श्रद्धां चोपैमीन्धे त्वा दीक्षितोऽअहम् स्वाहा॥२॥
—यजु:० २०।२४

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥३॥
ओं मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा ॥४॥

तत्पश्चात् ऋग्वेद के निम्नलिखित ग्यारह मन्त्रों से आहुति दें—

ओं बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधानाः।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः स्वाहा ॥ १ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।१

ओं सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत। अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि स्वाहा ॥ २ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।२

ओं यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम्।
तामाभृत्या व्यदधुः पुरुत्रा तां सप्त रेभा अभि सं नवन्ते स्वाहा ॥ ३ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।३

ओम् उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं वि सस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः स्वाहा ॥ ४ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।४

ओम् उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवाँ अफलामपुष्पाम् स्वाहा ॥ ५ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।५

ओं यस्तित्याज सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम् स्वाहा ॥ ६ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।६

ओम् अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः।
आदघ्नास उपकक्षास उ त्वे ह्रदाइव स्नात्वा उ त्वे ददृश्रे स्वाहा ॥ ७ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।७

ओं हृदा तष्टेषु मनसो जवेषु यद् ब्राह्मणाः संयजन्ते सखायः।
अत्राह त्वं वि जहुर्वेद्याभिरोहब्रह्माणो वि चरन्त्यु त्वे स्वाहा ॥ ८ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।८

ओम् इमे ये नार्वाङ्न परश्चरन्ति न ब्राह्मणासो न सुतेकरासः। त एते वाचमभिपद्य पापया सिरीस्तन्त्रं तन्वते अप्रजज्ञयः स्वाहा ॥ ९ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।९

ओं सर्वे नन्दन्ति यशसागतेन सभासाहेन सख्या सखायः। किल्बिषस्पृत्पितुषणिर्ह्येषामरं हितो भवति वाजिनाय स्वाहा ॥ १० ॥
—ऋग्वेद १०।७१।१०

ओं ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान्गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु। ब्रह्मा त्वा वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां वि मिमीत उ त्वः स्वाहा ॥ ११ ॥
—ऋग्वेद १०।७१।११

इन आहुतियों के पीछे निम्न मन्त्र से यजमान वा गृहपति आहुति देवें। मन्त्र सब बालें—

ओं सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्।
सनिं मेधामयासिषꣳ स्वाहा॥ —यजु:० ३२।१३

इसके पीछे सब उपस्थित पारिवारिक जन तीन शुष्क समिधाओं को घी में भिगोकर गायत्री मन्त्र से तीन आहुतियाँ देवें—

ओं भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा॥ —यजुः० ३६।३

तत्पश्चात् स्विष्टकृत् आहुति—

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्टकृते—इदं न मम॥

तत्पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके सब जने इस मन्त्र को पढ़ें—

ओं शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा।
शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः॥१॥

—यजुः० ३६।९

ओं नमो ब्राह्मणो नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामिष। ऋतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु, तद्वक्तारमवतु। अवतु मामवतु वक्तारम्॥ २॥

पश्चात् आचमन करके गायत्री मन्त्र [यजुः० ३६।३] को उपस्थित नर-नारी पुरोहित के साथ मिलकर तीन बार पढ़ें। पश्चात् सब सत्यविद्या के आदिग्रन्थ चार वेदों के आदि और अन्त के निम्न आठ मन्त्रों का पाठ करें—

ऋग्वेद—

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥ १॥ —ऋग्० १।१।१

ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥ २॥

—ऋग्० १०।१९१।४

यजुर्वेद—

ओम् इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरन-मीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशंसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥ २॥ —यजुः० १।१

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। ओ३म् खं ब्रह्म॥४॥

—यजुः० ४०।१७

सामवेद—

ओम् अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि॥ ५॥ —सामवेद १

ओं स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ ६॥

—सामवेद १८७५

अथर्ववेद—

ओं ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे॥ ७॥

—अथर्ववेद १।१।१

ओं पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः।
सहस्रं शंसा उत ये गविष्टौ सर्वाँ इत्ताँ उप याता पिबध्यै॥ ८॥

—अथर्ववेद २०।१४३।९

इन मन्त्रों के पाठ के पश्चात् निम्न मन्त्रों से परमेश्वर का उपस्थान करें—

परमेश्वर का उपस्थान

ओं स्तुता मया वरदा वेदमाता प्र चोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्। आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्॥ —अथर्व० १९।७१।१

ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥

—यजुः० २५।२१

ओं देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳरातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानाꣳसख्यमुपसेदिमा वयं देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥

—यजुः० २५।१५

इन मन्त्रों के पाठ के पश्चात्

ओं सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै॥

—तैत्तिरीय आरण्यक ८।१

श्रावणी उपाकर्म विधि समाप्त करके यदि लोकाचार के अनुरुप **रक्षा बन्धन (राखी)** का पर्व मनाना अभीष्ट हो, तो इन मन्त्रों के अन्त में स्वाहा बोलकर आहुतियाँ अग्नि कुण्ड में अग्नि प्रज्वलित करके दें—

ओं संगच्छमाने युवती समन्ते स्वसारा जामी पित्रोरुपस्थे।
अभिजिघ्रन्ती भुवनस्य नाभिं द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्॥

—ऋग्वेद १।१८५।५

उर्वी सद्मनी बृहती ऋतेन हुवे देवानामवसा जनित्री।
दधाते ये अमृतं सुप्रतीके द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्॥

—ऋग्वेद १।१८५।६

उर्वी पृथ्वी बहुले दूरेअन्ते उप ब्रुवे नमसा यज्ञे अस्मिन्।
दधाते ये सुभगे सुप्रतूर्ती द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्॥

—ऋग्वेद १।१८५।७

देवान्वा यच्चकृमा कच्चिदागः सखायं वा सदमिज्जास्पतिं वा।
इयं धीर्भूया अवयानमेषां द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्॥

—ऋग्वेद १।१८५।८

उभा शंसा नर्या मामविष्टामुभे मामूती अवसा सचेताम्।
भूरि चिदर्यः सुदास्तरायेषा मदन्त इषयेम देवाः॥

—ऋग्वेद १।१८५।९

ऋतं दिवे तदवोचं पृथिव्या अभिश्रावाय प्रथमं सुमेधाः।
पातामवद्याद्दुरितादभीके पिता माता च रक्षतामवोभिः॥

—ऋग्वेद १।१८५।१०

इन मन्त्रों से आहुति देकर बहन प्रथम मन्त्र का पाठ करके भाई/ यों के राखी बांधे और स्वस्ति मन्त्रों से रक्षा बन्धन का कार्य समापन करे। पश्चात पूर्णाहुति प्रकरण समाप्त करके शान्तिपाठ कर महावामदेव्य गान तथा निम्न श्रावणी गान सब मिल कर करें।

वेद ही जग में हमारा, ज्योति जीवन सार है।
वेद ही सर्वस्य प्यारा, पूज्य प्राणाधार है॥
सत्य विद्या का विधाता, ज्ञान का गुरु ज्ञेय है।
मुनियों का मुक्ति दाता, धर्म धी का ध्येय है॥
वेद ही परमेश प्रभु का, प्रेम पारावार है॥१॥
ब्रह्म कुल का देवता है, राज कुल रक्षक रहा।
वैश्य वंश विभूषिता है, शुद्ध कुल स्वामी सदा।
वेद ही वर्णाश्रमों का, आदि है आधार है॥२॥
श्रावणी का श्रेष्ठ उत्सव, पुण्य पावन पर्व है।
वेद व्रत स्वाध्याय वैभव, आज ही सुख सर्व है॥
वेद पाठी विप्र गण का, दिव्य दिन दातार है॥३॥
वेद का पाठन पठन हो, वेद वाद संवाद हो।
वेद हित जीवन मरण हो, वेद हित आह्लाद हो॥
आर्य जन का आज से व्रत, विश्व वेद प्रचार है॥४॥
'विश्वभर को आर्य करना', वेद का सन्देश है।
'मृत्यु से किंचित न डरना', ईश का आदेश है॥
सृष्टि सागर में हमारा, वेद ही पतवार है॥५॥
रोज रोज सरोज सम, श्रुति "सूर्य" से खिलते रहें।
वेद चन्द्र चकोर हम, द्युति मोद से मिलते रहें।
वेद ही स्वामी सखा सब, वेद ही परिवार है॥६॥

—:०:—

(४) विजयादशमी (दशहरा)

[आश्विन शुक्ल दशमी]

गृह कृत्य—*स्वसुभीते के अनुसार विजयदशमी के पूर्वदिन वा प्रातःकाल शस्त्र और वाहनादि का संस्कार (स्वच्छता और सुधार) किया जाए। पूर्वाह्न में अन्य पर्वों के समान गृह का परिमार्जन और लेपनादि करके बृहद् यज्ञ किया जाए। उसमें क्षात्र-धर्म के द्योतक और यात्रा के लाभ के सूचक निम्नलिखित मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ*

दी जाएँ। इस अवसर पर संस्कृत अस्त्र और परिष्कृत उपकरण भी यज्ञ-स्थल में उपस्थित किए जाएँ।

बृहद् यज्ञ में लिखित सब क्रिया यथाविधि करके निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य की विशेष आहुति दें—

मुख्य होम मन्त्राः

ओं संशितं म इदं ब्रह्म संशितं वीर्यं बलम्। संशितं क्षत्रमजरमस्तु जिष्णुर्येषामस्मि पुरोहितः स्वाहा॥ १॥

—अथर्ववेद ३।१९।१

ओं समहमेषां राष्ट्रं स्यामि समोजो वीर्यं बलम्। वृश्चामि शत्रूणां बाहूननेन हविषाहम् स्वाहा॥ २॥ —अथर्ववेद ३।१९।२

ओं नीचैः पद्यन्तामधरे भवन्तु ये नः सूरिं मघवानं पृतन्यान्। क्षिणामि ब्रह्मणामित्रानुन्नयामि स्वानहम् स्वाहा॥ ३॥

—अथर्ववेद ३।१९।३

ओं तीक्ष्णीयांसः परशोरग्नेस्तीक्ष्णतरा उत। इन्द्रस्य वज्रात्तीक्ष्णीयांसो येषामस्मि पुरोहितः स्वाहा॥ ४॥

—अथर्ववेद ३।१९।४

ओम् एषामहमायुधा सं स्याम्येषां राष्ट्रं सुवीरं वर्धयामि। एषां क्षत्रमजरमस्तु जिष्ण्वेषां चित्तं विश्वेऽवन्तु देवाः स्वाहा॥ ५॥

—अथर्ववेद ३।१९।५

ओम् उद्धर्षन्तां मघवन्वाजिनान्युद्वीराणां जयतामेतु घोषः। पृथग्घोषा उलुलयः केतुमन्त उदीरताम्। देवा इन्द्रज्येष्ठा मरुतो यन्तु सेनया स्वाहा॥ ६॥ —अथर्ववेद ३।१९।६

ओं प्रेता जयता नर उग्रा वः सन्तु बाहवः। तीक्ष्णेषवोऽबलधन्वनो हतोग्रायुधा अबलानुग्रबाहवः स्वाहा॥ ७॥

—अथर्ववेद ३।१९।७

ओम् अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते। जयामित्रान्प्र पद्यस्व जह्येषां वरंवरं मामीषां मोचि कश्चन स्वाहा॥ ८॥

—अथर्ववेद ३।१९।८

ओं ये बाहवो या इषवो धन्वनां वीर्याणि च। असीन्परशूनायुधं चित्ताकूतं च यद्धृदि। सर्वं तदर्बुदे त्वममित्रेभ्यो दृशे कुरूदारांश्च प्र दर्शय स्वाहा॥ ९॥ —अथर्ववेद ११।९।१

ओम् उत्तिष्ठत सं नह्यध्वं मित्रा देवजना यूयम्। संदृष्टा गुप्ता वः सन्तु या नो मित्राण्यर्बुदे स्वाहा॥ १०॥

—अथर्ववेद ११।९।२

ओम् उत्तिष्ठतमा रभेथामादानसंदानाभ्याम्। अमित्राणां सेना अभि धत्तमर्बुदे स्वाहा॥ ११॥ —अथर्ववेद ११।९।३

पञ्च स्थालीपाक आहुति

अन्त में निम्न मन्त्रों के अन्त में स्वाहा बोलकर स्थालीपाक की विशेष पाँच आहुति दें—

ओं वयं जयेम त्वया युजा वृतमस्माकमंशमुदवा भरेभरे। अस्मभ्यमिन्द्र वरिवः सुगं कृधि प्र शत्रूणां मघवन् वृष्ण्या रुज॥ १॥

—ऋ० १।१०२।४

ओं परा णुदस्व मघवन्नमित्रान्त्सुवेदा नो वसू कृधि।
अस्माकं बोध्यविता महाधने भवा वृधः सखीनाम्॥ २॥

—ऋ० ७।३२।२५

ओं वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः।
यो अस्माँ अभिदासत्यधरं गमया तमः॥ ३॥

—ऋ० १०।१५२।४

ओं प्र सू त इन्द्र प्रवता हरिभ्यां प्र ते वज्रः प्रमृणन्नेतु शत्रून्। जहि प्रतीचो अनूचः पराचो विश्वं सत्यं कृणुहि विष्टमस्तु॥ ४॥

—ऋ० ३।३०।६

ओं ममाग्ने वर्चो विहवेष्वस्तु वयं त्वेन्धानास्तन्वं पुषेम।
मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्त्रस्त्वयाध्यक्षेण पृतना जयेम॥ ५॥

—अथर्व० ५।३।१; ऋ० १०।१२८।१

तदन्तर पूर्णाहुति प्रकरण की विधि पूरी कर, वामदेव्यगान, शान्ति पाठ के साथ कृत्य को समाप्त करें—

सामाजिक कृत्य—*राज्य की ओर से चतुरंगिणी सेना तथा युद्ध-आयुधों, अस्त्रों-शस्त्रों की शोभा यात्रा निकाली जावे और राष्ट्राध्यक्ष उसकी सलामी लें।*

—:०:—

(५) शारदीय नवसस्येष्टि (दीपावली)

कार्त्तिक कृ० अमावस्या

गृह्यकृत्य—*यत: दीवाली का पर्व वर्ष-भर में घरों की लिपाई-पुताई आदि संस्कार के लिए विशेषत: उद्दिष्ट है, इसलिए स्वसुभीते के अनुसार दीवाली से पूर्व दिन के सायंकाल तक प्रचलित प्रथानुसार यह सब कार्य समाप्त हो जाना चाहिए। कार्तिक अमावास्या के दिन प्रात:काल बृहद् यज्ञ प्रकरण में प्रदर्शित प्रकारानुसार यज्ञशाला वा आवास-गृह के तल का गोमय से पुन: लेपन करके स्वदेशीय नवीन शुद्ध वस्त्र परिधानपूर्वक यथाविधि बृहद् यज्ञ (पूर्णाहुति प्रकरण को छोड़कर) करके अग्रलिखित मन्त्रों से स्थालीपाक से ३८ विशेष आहुतियाँ दी जाएँ। स्थालीपाक, नवागत श्रावणी शस्य के अन्न से बनाया गया पायस (खीर) होना उत्तम है। हवन के अन्य शाकल्य में लाजा (नवीन धानों की खील) विशेषत: मिलाई जाएँ।*

मुख्य होम मन्त्राः

ओं परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान् स्वाहा॥ १॥ —ऋ० १०।१८।१

ओं मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः। आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः स्वाहा॥ २॥ —ऋ० १०।१८।२

ओम् इमे जीवा वि मृतैराववृत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य। प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः स्वाहा॥ ३॥

—ऋ० १०।१८।३

ओम् इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम्। शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन स्वाहा॥ ४॥

—ऋ० १०।१८।४

ओं यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साधु। यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषाम् स्वाहा॥ ५॥

—ऋ० १०।१८।५

ओम् आयुष्मतामायुष्कृतां प्राणेन जीव मा मृथाः। व्य१हं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा स्वाहा॥ ६॥

—अथर्व० ३।३१।८

ओं ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत। इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्व१राभरत् स्वाहा॥ ७॥

—अथर्व० ११।५।१९

ओं शतायुधाय शतवीर्याय सतोतयेऽभिमातिषाहे। शतं यो नः शरदो अजीजादिन्द्रो नेषदति दुरितानि विश्वा स्वाहा॥ ८॥

ओं ये चत्वारः पथयो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी वियन्ति। तेषां यो आ ज्यानिमजीजिमावहास्तस्मै नो देवाः परिदत्तेह सर्वम् स्वाहा॥ ९॥

ओं ग्रीष्मो हेमन्त उत नो वसन्तः शरद्वर्षाः सुवितन्नो अस्तु। तेषामृतूनाꣳ शतशारदानां निवात एषामभये स्याम स्वाहा॥ १०॥

ओम् इद्वत्सराय परिवत्सराय संवत्सराय कृणुता बृहन्नमः। तेषां वयꣳ सुमतौ यज्ञियानां ज्योग् जीता अहताः स्याम स्वाहा॥ ११॥ —म० ब्रा० २।१।९-९२

—गोभिलीय गृह्यसूत्र, प्रपाठक, खंड ७, सूत्र १०-११

ओं पृथिवी द्यौः प्रदिशो दिशो यस्मै द्युभिरावृताः। तमिहेन्द्रमुपह्वये शिवा नः सन्तु हेतयः स्वाहा॥ १२॥

ओं यन्मे किंचिदुपेप्सितमस्मिन् कर्मणि वृत्रहन्। तन्मे सर्वꣳ समृध्यतां जीवतः शरदः शतम् स्वाहा॥ १३॥

ओं सम्पत्तिर्भूतिर्भूमिर्वृष्टिर्ज्यैष्ठ्यँ श्रैष्ठ्यँ श्रीः प्रजामिहावतु स्वाहा॥ इदमिन्द्राय—इदं न मम॥ १४॥

ओं यस्या भावे वैदिकलौकिकानां भूतिर्भवति कर्मणाम्। इन्द्रपत्नीमुपह्वये सीताꣳ सा मे त्वनपायिनी भूयात्कर्मणि कर्मणि स्वाहा॥ इदमिन्द्रपत्न्यै—इदं न मम॥ १५॥

ओम् अश्वावती गोमती सूनृतावती बिभर्ति या प्राणभृता अतन्द्रिता। खलामालिनीमुर्वरामस्मिन् कर्मण्युपह्वये ध्रुवाꣳ सा मे त्वनपायिनी भूयात् स्वाहा॥ इदं सीतायै—इदं न मम॥ १६॥

ओं सीतायै स्वाहा॥ इदं सीतायै—इदं न मम॥ १७॥

ओं प्रजायै स्वाहा ॥ इदं प्रजायै—इदं न मम ॥ १८ ॥

ओं शमायै स्वाहा ॥ इदं शमायै—इदं न मम ॥ १९ ॥

ओं भूत्यै स्वाहा ॥ इदं भूत्यै—इदं मम ॥ २० ॥

ओं व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गवश्च मेऽणवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् स्वाहा॥२१॥ —यजुः० १८।१२

ओं वाजो नः सप्त प्रदिशश्चतस्रो वा परावतः। वाजो नो विश्वैर्देवैर्धनसाताविहावतु स्वाहा॥२२॥ —यजुः० १८।३२

ओं वाजो नोऽअद्य प्रसुवाति दानं वाजो देवाँ२॥ऽऋतुभिः कल्पयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं जजान विश्वाऽआशा वाजपतिर्जयेयम् स्वाहा॥२३॥ —यजुः० १८।३३

ओं वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान् हविषा वर्द्धयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वाऽआशा वाजपतिर्भवेयम् स्वाहा॥२४॥ —यजुः० १८।३४

ओं सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक्। धीरा देवेषु सुम्नयौ स्वाहा ॥ २५ ॥ —अथर्व० ३।१७।१

ओं युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम्। विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वमा यवन् स्वाहा ॥ २६ ॥ —अथर्व० ३।१७।२

ओं लाङ्गलं पवीरवत्सुशीमं सोमसत्सरु। उदिद्वपतु गामविं प्रस्थावद्रथवाहनं पीबरीं च प्रफर्व्यम् स्वाहा ॥ २७ ॥

—अथर्व० ३।१७।३

ओम् इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाभि रक्षतु। सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् स्वाहा ॥ २८ ॥ —अथर्व० ३।१७।४

ओं शुनं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनु यन्तु वाहान्। शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै स्वाहा ॥ २९ ॥ —अथर्व० ३।१७।५

ओं शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय स्वाहा ॥ ३० ॥ —अथर्व० ३।१७।६

ओं शुनासीरेह स्म मे जुषेथाम्। यद्दिवि चक्रथुः पयस्तेनेमामुप सिञ्चतम् स्वाहा ॥ ३१ ॥ —अथर्व० ३।१७।७

ओं सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव। यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः स्वाहा ॥ ३२ ॥ —अथर्व० ३।१७।८

ओं घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः। सा नः सीते पयसाभ्याववृत्स्वोर्जस्वती घृतवत्पिन्वमाना स्वाहा ॥ ३३ ॥

—अथर्व० ३।१७।९

ओम् इन्द्राग्निभ्यां स्वाहा। इदमिन्द्राग्निभ्याम्—इदं मम ॥ ३४ ॥

ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा। इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यः—इदं न मम ॥ ३५ ॥

ओं द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ॥ इदं द्यावापृथिवीभ्याम्—इदं न मम ॥ ३६ ॥

ओं स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणीहि विश्वाश्च देवः पृतना अभिष्यक्। सुगन्नु पन्थां प्रदिशन्न एहि ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुः स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्टकृते—इदं न मम ॥ ३७ ॥

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा ॥ इदमग्नये स्विष्टकृते—इदं न मम ॥ ३८ ॥

इसके बाद पूर्णाहूति प्रकरण की विधि पूरी करने के पश्चात् मिष्ठान्न वितरण किया जावे। सायंकाल के पश्चात् स्वसामर्थ्यानुसार दीपमाला की जावे।

सामाजिक कृत्य—*प्रातःकाल या स्वसुभीते के अनुसार महर्षि दयानन्द का निर्वाण दिवस सार्वजनिक रूप से मनाया जावे।*

—:०:—

(६) मकर सौर संक्रान्ति

गृह्यकृत्य—*मकर-संक्रान्ति के दिन प्रातः गृह के परिमार्जन, शोधन तथा लेपन आदि के पश्चात् नवीन शुद्ध स्वदेशीय वस्त्र-परिधानपूर्वक सपरिवार बृहद् यज्ञ-हवन करें, जिसके शाकल्य में*

तिल और शर्करा का परिमाण प्रचुर होना चाहिए और आहुतियों की मात्रा स्वसामर्थ्यानुसार बढ़ा देना चाहिए। हेमन्त और शिशिर ऋतुओं की वर्णनपरक निम्नलिखित ऋचाओं से विशेष आहुतियाँ दी जाएँ—

मुख्य होम मन्त्राः

ओं सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृत् अग्नेरन्तःश्लेषोऽसि स्वाहा॥

ओं कल्पेताम्, द्यावापृथिवी स्वाहा॥

ओं कल्पन्ताम्, आपऽओषधयः स्वाहा॥

ओं कल्पन्ताम्, अग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः स्वाहा॥

ओं ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे हैमन्तिकावृत् अभिकल्पमाना इन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाऽङ्गिर-स्वद् ध्रुवे सीदतम् स्वाहा॥ —यजुर्वेद १४।२७

ओं तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृत्, अग्नेरन्तःश्लेषोऽसि स्वाहा॥

ओं कल्पेताम्, द्यावापृथिवी स्वाहा॥

ओं कल्पन्ताम्, आपऽओषधयः स्वाहा॥

ओं कल्पन्ताम्, अग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः स्वाहा॥

ओं ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे शैशिरावृत् अभिकल्पमाना इन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाऽङ्गिर-स्वद् ध्रुवे सीदतम् स्वाहा॥ —यजुर्वेद १५।५७

तत्पश्चात् तिल के लड्डू (तिलवे) होम-यज्ञ में समागत स्त्री-पुरुषों को हुतशेष के रूप में समर्पण किए जाएँ और स्ववित्तानुसार दीन-दुःखियों को दान दिए जाएँ।

सामाजिक कृत्य—*अपराह्न में सब स्त्री-पुरुष किसी प्रशस्त क्षेत्र में एकत्रित होकर दण्ड-बैठक और रस्सा खेंचना आदि के व्यायामों का प्रदर्शन करके उत्सव के आनन्द की वृद्धि करें। दीन दुःखियों तथा वृद्धों के लिये निशुल्क चिकित्सा शिविर लगाये जावें तथा निराश्रितों को शीत से बचने के लिए ओढ़ने और बिछाने के वस्त्रों का दान किया जावे।*

—:०:—

(७) वसन्त पञ्चमी

[माघ शु० पञ्चमी]

गृह्यकृत्य—*वसन्त पञ्चमी वसन्त ऋतु के आगमन का द्योतक पर्व तो है ही; विद्या और वाणी की अधिष्ठात्री सरस्वती की उपासना का भी पर्व है। अतः प्रातः गृह के परिमार्जन (शोधन-लेपनादि) के पश्चात् स्वदेशीय पीताम्बर (पीतपट) परिधानपूर्वक सपरिवार बृहद् यज्ञ-होम करके (पूर्णाहुति प्रकरण से पूर्व) वसन्तवर्णनात्मक निम्नलिखित मन्त्रों से केशर-मिश्रित (वा उसके अभाव में हरिद्रामिश्रित्) हलुए के स्थालीपाक से पाँच अधिक आहुतियाँ दी जाएँ।*

ओं वसन्तेनऽऋतुना देवा वसवस्त्रिवृता स्तुताः।
रथन्तरेण तेजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः स्वाहा॥१॥
—यजुः० २१।२३

ओं मधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे। वासन्तिकावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् स्वाहा॥२॥ —यजुः० १३।२५

ओं मधु वाताऽऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः स्वाहा॥३॥ —यजुः० १३।२७

ओं मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳरजः।
मधु द्यौरस्तु नः पिता स्वाहा॥४॥ —यजुः० १३।२८

ओं मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ२॥ऽअस्तु सूर्यः।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः स्वाहा॥५॥ —यजुः० १३।२९

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत और शाकल्य की आहुतियाँ दी जावें—

ओं प्र णो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
धीनामवित्र्यवतु स्वाहा॥ १ ॥ —ऋग्वेद ६।६१।४

ओं यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते।
इन्द्रं न वृत्रतूर्ये स्वाहा॥ २॥ —ऋग्वेद ६।६१।५

ओं त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि।
रदा पूषेव नः सनिं स्वाहा॥ ३॥ —ऋग्वेद ६।६१।६

ओम् उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा।
सरस्वती स्तोम्या भूत् स्वाहा॥ ४॥ —ऋग्वेद ६।६१।१०

ओं प्र या महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा। रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती स्वाहा॥ ५॥ —ऋग्वेद ६।६१।१३

ओं सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने। सरस्वतीं सुकृतो हवन्ते सरस्वती दाशुषे वार्यं दात् स्वाहा॥ ६॥

ओं सरस्वतीं पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः। आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयध्वमनमीवा इष आ धेह्यस्मे स्वाहा॥ ७॥

—अथर्ववेद १८।१।४१-४२

ओं पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धियावसुः स्वाहा॥ ८॥ —सामवेद १८९

इसके बाद पूर्णाहुति प्रकरण की विधि पूरी करके, महावामदेव्यगान तथा शान्तिपाठ करके उपर्युक्त केशरयुक्त हलवे का ही हुतशेष यज्ञ में समागत सज्जन प्रसादरूप से भोजन करें तथा ऋतुराज वसन्त के वर्णनपरक किसी कविता वा गीतों का मधुर गान किया जाए।

सामाजिक कृत्य—*स्वसुभीते के अनुसार अपराह्न में सब सामाजिक सज्जन (देवियाँ और देव पृथक्-पृथक् मण्डलियों में) समूहरूप से सम्मिलित होकर उपवन वा कुसुमोद्यान में भ्रमण करें और वहीं सभा करके वसन्तवर्णनपरक कविता-पाठ और शास्त्रीय संगीत एवं वीणा पर सामगान का आनन्द उठाएँ।*

इसी अवसर पर बालकों की क्रीड़ाओं के प्रदर्शन और फलों के सहभोज की आयोजना स्वसुभीते के अनुसार की जाए तो अत्युत्तम है। इससे वसन्तोत्सव की उत्कर्षवृद्धि हो सकती है।

—:०:—

(८) शिव रात्रि/ बोध रात्रि

[फाल्गुन कृ० १४]

मुख्य होम मन्त्राः

ओम् उप नः पितवा चर शिवः शिवाभिरूतिभिः।
मयोभुरद्विषेण्यः सखा सुशेवो अद्वयाः स्वाहा॥ १॥

—ऋग्वेद १।१८७।३

ओम् अस्य यामासो बृहतो न वग्नूनिन्धाना अग्नेः सख्युः शिवस्य। ईड्यस्य वृष्णो बृहतः स्वासो भामासो यामन्नक्तवश्चिकित्रे स्वाहा॥ २॥ —ऋग्वेद १०।३।४

ओम् उप त्या वह्नी गमतो विशं नो रक्षोहणा संभृता वीळुपाणी। समन्धांस्यग्मत मत्सराणि मा नो मर्धिष्टमा गतं शिवेन स्वाहा॥ ४॥

—ऋग्वेद ७।७३।४

ओं शिवो भूत्वा मह्यमग्नेऽअथो सीद शिवस्त्वम्। शिवाः कृत्वा दिशः सर्वाः स्वं योनिमिहासदः स्वाहा॥५॥

—यजुर्वेद १२।१७

ओम् उदु त्वा विश्वे देवाऽअग्ने भरन्तु चित्तिभिः। स नो भव शिवस्त्वꣳसुप्रतीको विभावसुः स्वाहा॥६॥

—यजुर्वेद १२।३१

ओं प्रेदग्ने ज्योतिष्मान् याहि शिवेभिरर्चिभिष्ट्वम्।
बृहद्भिर्भानुभिर्भासन् मा हिꣳसीस्तन्वा प्रजाः स्वाहा॥७॥

—यजुर्वेद १२।३२

ओम् अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः।
अयं मे विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः स्वाहा॥ ८॥

—अथर्ववेद ४।१३।६

ओं यस्मै त्वा यज्ञवर्धन मणे प्रत्यमुचं शिवम्।
तं त्वं शतदक्षिण मणे श्रैष्ठ्याय जिन्वतात् स्वाहा॥ ९॥

—अथर्ववेद १०।६।३४

ओं मा नो मेधां मा नो दीक्षां मा नो हिंसिष्टं यत्तपः।
शिवा नः शं सन्त्वायुषे शिवा भवन्तु मातरः स्वाहा॥ १०॥

—अथर्ववेद १९।४०।३

ओं शिवा भव पुरुषेभ्यो गोभ्यो अश्वेभ्यः शिवा।
शिवास्मै सर्वस्मै क्षेत्राय शिवा न इहैधि स्वाहा॥ ११॥

—अथर्ववेद ३।२८।३

ओम् उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान्यज्ञेन बोधय।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं यजमानं च वर्धय स्वाहा॥ १२॥

—अथर्ववेद १९।६३।१

ओं यो अध्वरेषु शंतम ऋतावा होता तमू नमोभिरा कृणुध्वम्।
अग्निर्यद्वेर्मर्ताय देवान्त्स चा बोधाति मनसा यजाति स्वाहा॥ १३॥

—ऋग्वेद १।७७।२

तत्पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा कर यज्ञ समाप्ति के पश्चात् परमेश्वर का उपस्थान "**शिव संकल्प**" के मन्त्रों से करें, तथा प्रभु से प्रार्थना करें कि **प्रत्येक रात्रि हमारी 'शिवरात्रि' हो, ताकि जीवन का प्रत्येक दिन 'सुदिन' हो।** जीवन में बोध प्राप्त कर, हम ऋषिवर दयानन्द के कार्य को आगे बढ़ाएँ और परमेश्वर से युक्त होकर मोक्षानन्द को प्राप्त करें। महावामदेव्यगान से कृत्य को समाप्त करें।

(९) वासन्ती (आषाढ़ी) नवसस्येष्टि-होली

[फाल्गुन शु० पूर्णिमा]

गृहकृत्य—*होली का पर्व भी दीवाली के समान शीतकालीन वर्षा के पश्चात् गृहों के परिमार्जन तथा संस्कार के लिए ही उद्दिष्ट है, इसलिए स्वसुभीते के अनुसार फाल्गुन सुदि चतुर्दशी के सायंकाल तक यह सब कृत्य समाप्त हो जाना चाहिए। फाल्गुन पूर्णिमा के प्रातः बृहद् यज्ञ पद्धति में प्रदर्शित प्रकारानुसार नव पीताम्बर वा श्वेताम्बर परिधानपूर्वक सामान्य होम करके नवसस्येष्टि के निम्नलिखित मन्त्रों से स्थालीपाक की ३८ विशेष आहुतियाँ दी जाएँ। स्थालीपाक नवागत आषाढ़ी सस्य के गोधूम वा यव-चूर्ण=आटे से बनाया गया मोहनभोग*

(हलुआ) हो, हवन के अन्य साकल्य में नवागत यव (जौ) विशेषतः मिलाए जाएँ। यतः देवयज्ञ देवकार्य है और कर्मकाण्ड के सब ग्रन्थों में देवकार्य के पूर्वाह्न में ही करने का विधान है, इसलिए आषाढ़ी नवसस्येष्टि वा होलिकेष्टि भी पूर्वाह्न में करनी चाहिए। पौराणिकों का पूर्णमासी की रात्रि को होली जलाने का कृत्य कर्मकाण्डशास्त्र के विरुद्ध है।

मुख्य होम मन्त्राः

ओं शतायुधाय शतवीर्याय शतोतयेऽभिमातिषाहे। शतं यो नः शरदो अजीजादिन्द्रो नेषदति दुरितानि विश्वा स्वाहा॥ १॥

ओं ये चत्वारः पथ्यो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी वि यन्ति। तेषां यो अज्यानिमजीजिमावहास्तस्म नो देवा परिदत्तेह सर्वे स्वाहा॥ २॥

ओं ग्रीष्मो हेमन्त उत नो वसन्तः शरद्वर्षाः सुवितन्नो अस्तु। तेषामृतूनꣳ शतशारदानां निवात एषामभये स्याम स्वाहा॥ ३॥

ओम् इद्वत्सराय परिवत्सराय संवत्सराय कृणुता बृहन्नमः। तेषां वयꣳ सुमतौ यज्ञियानां ज्योग् जीता अहताः स्याम स्वाहा॥ ४॥

—गोभिलीय गृह्यसूत्र प्रपाठक ३, खंड ७, सूत्र १०-११

—मं० ब्रा० २, १, ९-१२

ओं पृथिवी द्यौः प्रदिशो दिशा यस्मै द्युभिरावृताः।
तमिहेन्द्रमुपह्वये शिवा नः सन्तु हेतयः स्वाहा॥ ५॥
ओं यन्मे किञ्चिदुपेप्सितमस्मिन् कर्मणि वृत्रहन्।
तन्मे सर्वꣳ समृध्यतां जीवतः शरदः शतꣳ स्वाहा॥ ६॥

ओं सम्पत्तिर्भूतिर्भूर्वृष्टिर्ज्यैष्ठ्यꣳ श्रैष्ठ्यꣳ श्री प्रजामिहावतु स्वाहा॥ इदमिन्द्राय—इदं न मम॥ ७॥

ओं यस्या भावे वैदिकलौकिकानां भूतिर्भवति कर्मणाम्। इन्द्रपत्नीमुपह्वये सीताꣳ सा मे त्वनपायिनी भूयात् कर्मणि कर्मणि स्वाहा॥ इदमिन्द्रपत्न्यै—इदं न मम॥ ८॥

ओम् अश्वावती गोमती सूनृतावती बिभर्ति या प्राणभृतो अतन्द्रिता। खलामालिनीमुर्वरामस्मिन् कर्मण्युपह्वये ध्रुवाꣳ सा मे त्वनपायिनी भूयात् स्वाहा॥ इदं सीतायै—इदं न मम॥ ९॥

ओं सीतायै स्वाहा ॥ इदं सीतायै—इदं न मम ॥ १० ॥

ओं प्रजायै स्वाहा ॥ इदं प्रजायै—इदं न मम ॥ ११ ॥

ओं शमायै स्वाहा ॥ इदं शमायै—इदं न मम ॥ १२ ॥

ओं भूत्यै स्वाहा ॥ इदं भूत्यै—इदं न मम ॥ १३ ॥

ओं व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गवश्च मेऽणवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् स्वाहा॥१४॥ —यजुः० १८।१२

ओं वाजो नः सप्त प्रदिशश्चतस्रो वा परावतः। वाजो नो विश्वैर्देवैर्धनसाताविहावतु स्वाहा॥१५॥ —यजुः० १८।३२

ओं वाजो नोऽअद्य प्रसुवाति दानं वाजो देवाँ२॥ऽऋतुभिः कल्पयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं जजान विश्वाऽआशा वाजपतिर्जयेयम् स्वाहा॥१६॥ —यजुः० १८।३३

ओं वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान् हविषा वर्द्धयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वाऽआशा वाजपतिर्भवेयम् स्वाहा॥१७॥ —यजुः० १८।३४

ओं सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक्। धीरा देवेषु सुम्नयौ स्वाहा ॥ १८ ॥ —अथर्व० ३।१७।१

ओं युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम्। विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वमा यवन् स्वाहा ॥ १९ ॥ —अथर्व० ३।१७।२

ओं लाङ्गलं पवीरवत्सुशीमं सोमसत्सरु। उदिद्वपतु गामविं प्रस्थावद्रथवाहनं पीबरीं च प्रफर्व्यम् स्वाहा ॥ २० ॥

—अथर्व० ३।१७।३

ओम् इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाभि रक्षतु। सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् स्वाहा ॥ २१ ॥ —अथर्व० ३।१७।४

ओं शुनं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनु यन्तु वाहान्। शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै स्वाहा ॥ २२ ॥ —अथर्व० ३।१७।५

ओं शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय स्वाहा ॥ २३ ॥ —अथर्व० ३।१७।६

ओं शुनासीरेह स्म मे जुषेथाम्। यद्दिवि चक्रथुः पयस्तेनेमामुप सिञ्चतम् स्वाहा ॥ २४ ॥ —अथर्व० ३।१७।७

ओं यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मऽइध्मः शरद्धविः स्वाहा॥२५॥

—यजुः० ३१।१४

ओं येन वहसि सहस्रं येनाग्ने सर्ववेदसम्।

तेनेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे स्वाहा॥२६॥

—यजुः० १८।६२

ओं वाजस्येमं प्रसवः सुषुवेऽग्रे सोमꣳराजानमोषधीष्वप्सु। ताऽअस्मभ्यं मधुमतीर्भवन्तु वयꣳराष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः स्वाहा॥२७॥ —यजुः० ९।२३

ओं वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान् हविषा वर्द्धयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वाऽआशा वाजपतिर्भवेयम् स्वाहा॥२८॥ —यजुः० १८।३४

ओं वाजस्य नु प्रसवे मातरं महीमदितिं नाम वचसा करामहे। यस्यामिदं विश्वं भुवनमाविवेश तस्यां नो देवः सविता धर्म साविषत् स्वाहा॥२९॥ —यजुः० १८।३०

ओं व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गवश्च मेऽणवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् स्वाहा॥३०॥ —यजुः० १८।१२

ओं सत्यं च मे श्रद्धा च मे जगच्च मे धनं च मे विश्वं च मे महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातं च मे जनिष्यमाणं च मे सूक्तं च मे सुकृतं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् स्वाहा॥३१॥

—यजुः० १८।५

ओं सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव। यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः स्वाहा ॥ ३२ ॥ —अथर्व० ३।१७।८

ओं घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः। सा नः सीते पयसाभ्याववृत्स्वोर्जस्वती घृतवत्पिन्वमाना स्वाहा॥ ३३॥

—अथर्व० ३।१७।९

ओम् इन्द्राग्निभ्यां स्वाहा। इदमिन्द्राग्निभ्याम्—इदं मम॥ ३४॥

ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा। इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यः—इदं न मम॥ ३५॥

ओं द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा॥ इदं द्यावापृथिवीभ्याम्—इदं न मम॥ ३६॥

ओं स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणीहि विश्वाश्च देवः पृतना अभिष्यक्। सुगन्नु पन्थां प्रदिशन्न एहि ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुः स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्टकृते—इदं न मम॥ ३७॥

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्टकृते—इदं न मम॥ ३८॥

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत पूर्णाहुति प्रकरण की सब क्रिया यथाविधि करके, शान्तिपाठ और सामवेदोक्त वामदेव्यगान कर सर्वयज्ञ समाप्त करें।

सामाजिक कृत्य—*होली मिलन और संगीत, काव्य-पाठ आदि के कार्यक्रम आयोजित किये जावें। पारस्परिक द्वेष और मनोमालिन्य को दूर करने के लिये विशेष प्रयत्न अपेक्षित हैं।*

आदर्श सन्नारी स्मरणम्

'स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ' (ऋग्वेद ८।३३।१९), अतः प्रत्येक आदर्श नारी देश या विदेश की श्रद्धा, सम्मान और पूजा की पात्र है। आदर्श नारी, जैसे सीता, उर्मिला, मैत्रेयी, गार्गी, अहिल्या तथा किसी भी आदर्श महिला का स्मरण दिवस इस विधि से मनाया जा सकता है।

मुख्य होम मन्त्राः

ओम् इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति। एता तेऽअघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मां सुकृतं ब्रूतात् स्वाहा॥ इदं नार्यै—इदं न मम॥ —यजुः० ८।४३

ओम् अदितिष्ट्वा देवी विश्वदेव्यावती पृथिव्याः सधस्थेऽअङ्गिरस्वत् खनत्ववट स्वाहा॥ इदं अदित्यै—इदं न मम॥

—यजुः० ११।६१

ओं त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि। रदा पूषेव नः सनिम् स्वाहा॥ इदं सरस्वत्यै—इदं न मम॥ —ऋ० ६।६१।६

ओं चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम्। यज्ञं दधे सरस्वती स्वाहा॥ इदं सरस्वत्यै—इदं न मम॥ —ऋ० १।३।११

ओम् उत त्वा स्त्री शशीयसी पुंसो भवति वस्यसी। अदेवत्रादराधसः स्वाहा॥ इदं नार्यै—इदं न मम॥

—ऋ० ५।६१।६

ओं सरस्वती साधयन्ती धियं न इळा देवी भारती विश्वतूर्तिः। तिस्रो देवीः स्वधया बर्हिरेदमच्छिद्रं पान्तु शरणं निषद्य स्वाहा॥

—ऋ० २।३।८

ओम् अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति।
अप्रशस्ताइव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि स्वाहा॥

—ऋ० २।४१।१६

ओम् इमा ब्रह्म सरस्वति जुषस्व वाजिनीवति। या ते मन्म गृत्समदा ऋतावरि प्रिया देवेषु जुह्वति स्वाहा॥

—ऋ० २।४१।१८

स्थालीपाक आहुति

तदनन्तर भात व मिष्टान्न की विशेष आहुतियाँ दे। घृत की आहुति भी प्रज्वलित अग्नि में छोड़ें—

ओम् अदितिः पात्वंहसः। भद्रं इद् भद्रा कृणवत् सरस्वती स्वाहा। इदं अदित्यै सरस्वत्यै नार्यै—इदं न मम॥ १॥

—ऋ० ७।९६।३

ओम् अदित्यै सरस्वत्यै स्वाहा। इदमदित्यै सरस्वत्यै—इदं न मम॥ २॥

ओं वृजनं जरयत्यै सुनीथायै स्वाहा॥ इदं नार्यै—इदं न मम॥ ३॥

ओम् अरिष्टभर्मायै सदावृधायै स्वाहा॥ इदं अरिष्टभर्मायै सदावृधायै—इदं न मम॥ ४॥

ओं सुमृळीकायै पावकायै स्वाहा॥ इदं सुमृळीकायै पावकायै—इदं न मम॥ ५॥

ओं मात्रे सुव्रतानाम् स्वाहा॥ इदं सुव्रत मात्रे—इदं न मम॥ ६॥

ओं ऋतस्य पत्न्यै स्वाहा॥ इदं ऋतपत्न्यै—इदं न मम॥ ७॥

—यजुः० २१।५

ओं वीरपत्न्यै स्वाहा॥ इदं वीरपत्न्यै—इदं न मम॥ ८॥

ओं नेत्री सूनृतानाम् स्वाहा॥ इदं नार्यै—इदं न मम॥ ९॥

ओम् उषा उच्छद् अपस्त्रिधः स्वाहा॥ इदं नार्यै—इदं न मम॥ विश्वस्य हि प्राणनं जीवनं त्वे॥ १०॥

ओं यातुं कृण्वन् उषसो जनाय स्वाहा॥ इदं नार्यै—इदं न मम॥ ११॥

ओं प्रबोधयन्तीरुषसः ससन्तम् भद्रा नाम ब्रह्माना उषासः स्वाहा॥ इदं नार्यै—इदं न मम॥ १२॥

तदनन्तर यथाविधि पूर्णाहुति प्रकरण पूरा कर, शान्तिपाठ करें। पश्चात् सामवेदोक्त वामदेव्यगान कर यज्ञ को समाप्त करें।

(११) महापुरुष जयन्ती दिवस

[देव-ऋषि-पितृ स्मरण दिवस]

[यथा—श्री रामनवमी; श्रीकृष्ण जन्माष्टमी; स्वामी विरजानन्द, स्वामी दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, पं० लेखराम वा किसी भी महापुरुष/विद्वान्/संन्यासी का स्मरण दिवस]

बृहद्-यज्ञ (आघारावाज्यभागाहुति तक) करके परमेश्वर का उपस्थान करें।

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

परमेश्वर का स्मरण कर निम्न प्रकार से चरित्रनायक का स्मरण करें—''हम जीवन के अग्रनायक (नाम लें) के गुणों का स्मरण करते हैं, जो पुरोहित, संघ-संचालक, देशकालज्ञ, परहित के लिए सर्वस्व की आहुति देनेवाले, सब रमणीय हितकारी पदार्थों के धारक हैं।''

देव-ऋषि-पितृर्पणम्

ओम् अग्निवाय्वादित्याङ्गिरसस्तृप्यन्ताम्॥
ओं ब्रह्मादयो देवास्तृप्यन्ताम्॥
ओं मरीच्यादय ऋषयस्तृप्यन्ताम्॥
ओं सोमसदः पितरस्तृप्यन्ताम्॥
ओं देवर्षिपितरस्तृप्यन्ताम्॥

मुख्य होम मन्त्राः

ओम् ओजोऽस्योजो मे दाः स्वाहा ॥ १॥
ओं सहोऽसि सहो मे दाः स्वाहा ॥ २॥
ओं बलमसि बलं मे दाः स्वाहा ॥ ३॥
ओम् आयुरस्यायुर्मे दाः स्वाहा ॥ ४॥
ओं श्रोत्रमसि श्रोत्रं मे दाः स्वाहा ॥ ५॥
ओं चक्षुरसि चक्षुर्मे दाः स्वाहा ॥ ६॥
ओं परिपाणमसि परिपाणं मे दाः स्वाहा ॥ ७॥

—अथर्व० २।१७।१-७

ओं तेजोऽसि तेजो मयि धेहि स्वाहा॥
ओं वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि स्वाहा॥
ओं बलमसि बलं मयि धेहि स्वाहा॥
ओं ओजोऽस्योजो मयि धेहि स्वाहा॥
ओं मन्युरसि मन्युं मयि धेहि स्वाहा॥
ओं सहोऽसि सहो मयि धेहि स्वाहा॥ —यजुः० १९।९

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से स्थालीपाक की आहुतियाँ दें—

ओं ब्रह्मणे बृहस्पतये ब्रह्मणस्पतये नमः स्वाहा॥

इदं ब्रह्मणे—इदं न मम॥

ओं क्षत्राय इन्द्राय अर्यम्णे प्रजानां पतये नमः स्वाहा॥

इदं क्षत्राय—इदं न मम॥

ओं वैश्याय अर्याय मरुते रयिपतये अन्नानां पतये क्षेत्राणां पतये पशूनां पतये नमः स्वाहा॥ इदं वैश्याय—इदं न मम॥

ओं शूद्राय तपसे श्रमाधिपतये नमः स्वाहा॥ इदं शूद्राय—इदं न मम॥

ओं विश्वेदेवा अवन्तु ससन्तु शं कुर्वन्तु मयस्कुर्वन्तु शिवा शिवतमा भवन्तु स्वाहा॥ इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यः—इदं न मम॥

तत्पश्चात् सत्पुरुष की श्रद्धा-प्रीति-भक्ति से गुणगाथा का स्मरण करते हुए, निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य की आहुति दें—

ओम् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् स्वाहा॥ —यजुः० अ० २२, मं० २२

ओं रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचꣳराजसु नस्कृधि।

रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचं स्वाहा॥

—यजुः० १८।४८

ओम् इदमकर्म नमो अभ्रियाय यः पूर्वीरन्वानोनवीति। बृहस्पतिः स हि गोभिः सो अश्वैः स वीरेभिः स नृभिर्नो वयो धात् स्वाहा॥ —अथर्व० २०।१६।१२

तत्पश्चात् सब लोग यथाविधि यज्ञ का पूर्णाहुति प्रकरण पूरा कर, सामवेदोक्त वामदेव्यगान कर, शान्तिपाठ कर, यज्ञ को समाप्त करें। इस अवसर पर महापुरुष के जीवन सम्बन्धी वार्ताएँ करना उचित हैं।

(१२) राष्ट्रीय पर्व

(किसी भी देश का स्वतंत्रता दिवस, गणतन्त्र दिवस, आदि)

भूमण्डल के समस्त नागरिकों को अपने-अपने स्वातन्त्र्य-दिवस पर 'मनुर्भव' अर्थात् विश्वनागरिक बनने का संकल्प करना चाहिए। तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से '**अखण्ड स्वतन्त्र जीवन**' का संकल्प करें।

ओं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥१॥ —यजुः० ३६।२४

ओम् अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय॥ २॥ —ऋ० ५।६०।५

ओं समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः॥ ३॥

—अथर्व० ३।३०।६

यज्ञमण्डप पर उपस्थित सब जनों से पुरोहित या कोई विद्वान् उपर्युक्त संकल्प करावे।

पश्चात् वृहद् यज्ञ में लिखे अनुसार ऋत्विगवरण, संकल्पपाठ से लेकर आघारावाज्यभागाहुतिपर्यन्त सब क्रिया यथाविधि करें।

पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य को विशेष आहुतियाँ देवें—

मुख्य होम मन्त्राः

ओं सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति। सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० १२।१।१

ओम् उच्छ्वञ्चस्व पृथिवि मा नि बाधथाः सूपायनास्मै भव सूपवञ्चना। माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णुहि स्वाहा॥ २॥

—ऋ० १०।१८।११

ओं ता नः प्रजाः सं दुह्रतां समग्रा वाचो मधु पृथिवि धेहि मह्यं स्वाहा॥ ३॥ —अथर्व १२।१।१६

ओं जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्। सहस्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० १२।१।४५

ओम् उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः। दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम स्वाहा॥ ५॥ —अथर्व० १२।१।६२

ओं स्योना पृथिवि भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथः स्वाहा॥ ६॥ —ऋ० १।२२।१५

ओम् इमा याः पञ्च प्रदिशो मानवीः पञ्च कृष्टयः।
वृष्टे शापं नदीरिवेह स्फातिं समावहान् स्वाहा॥ ७॥
—अथर्व० ३।२४।३

ओं त्वज्जातास्त्वयि चरन्ति मर्त्यास्त्वं बिभर्षि द्विपदस्त्वं चतुष्पदः। तवेमे पृथिवि पञ्च मानवा येभ्यो ज्योतिरमृतं मर्त्येभ्य उद्यन्त्सूर्यो रश्मिभिरातनोति स्वाहा॥ ८॥—अथर्व० १२।१।१५

ओं रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचꣳराजसु नस्कृधि।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम् स्वाहा॥९॥
—यजुः० १८।४८

ओम् अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्। अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु स्वाहा॥ १०॥ —अथर्व० १९।१५।६

ओं यतो यतः समीहसे ततो नोऽअभयं कुरु।
शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः स्वाहा॥११॥
—यजुः० ३६।२२

ओं यदजः प्रथमं संबभूव स ह तत्स्वराज्यमियाय यस्मान्नान्यत् परमस्ति भूतं स्वाहा॥ १२॥ —अथर्व० १०।७।३१

ओम् आ यद्वामीयचक्षसा मित्र वयं च सूरयः। व्यचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये स्वाहा॥ १३॥ —ऋ० ५।६६।६

ओम् इत्था हि सोम इन्मदे ब्रह्मा चकार वर्धनम्। शविष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निः शशा अहिमर्चन्ननु स्वराज्यं स्वाहा॥ १४॥
—ऋ० १।८०।१

ओं वयं जयेम त्वया युजा वृतमस्माकमंशमुदवा भरेभरे। अस्मभ्यमिन्द्र वरिवः सुगं कृधि प्र शत्रूणां मघवन् वृष्ण्या रुज स्वाहा॥ १५॥ —ऋ० १।१०२।४

ओम् उत्तिष्ठत सं नह्यध्वमुदाराः केतुभिः सह।
सर्पा इतरजना रक्षांस्यमित्राननु धावत स्वाहा॥ १६॥
—अथर्व० ११।१०।१

ओं धूमाक्षी सं पततु कृधुकर्णी च क्रोशतु।
त्रिषन्धेः सेनया जिते अरुणाः सन्तु केतवः स्वाहा॥ १७॥
—अथर्व० ११।१०।७

ओं प्रेता जयता नर उग्रा वः सन्तु बाहवः। तीक्ष्णेषवोऽबलधन्वनो हतोग्रायुधा अबलानुग्रबाहवः स्वाहा॥ १८॥
—अथर्व० ३।१९।७

ओम् एषामहमायुधा सं स्याम्येषां राष्ट्रं सुवीरं वर्धयामि। एषां क्षत्रमजरमस्तु जिष्ण्वे३षां चित्तं विश्वेऽवन्तु देवाः स्वाहा॥ १९॥
—अथर्व० ३।१९।५

ओम् उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्। सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र स्वाहा॥ २०॥
—अथर्व० ८।४।२२

ओं पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तेरराव्णः। पाहि रीषत उत वा जिघांसतो बृहद्भानो यविष्ठ्य स्वाहा॥ २१॥
—ऋ० १।३६।१५

ओं रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत मा नो दुःशंस ईशत।
मा नो अद्य गवां स्तेनो मावीनां वृक ईशत स्वाहा॥ २२॥
—अथर्व० १९।४७।६

ओं चोष्कूयमाण इन्द्र भूरि वामं मा पणिर्भूरस्मदधि प्रवृद्ध। वधीर्हि दस्युं धनिनं घनेनँ एकश्चरन्नुपशाकेभिरिन्द्र। धनोरधि विषुणक्ते व्यायन्नयज्वानः सनकाः प्रेतिमीयुः स्वाहा॥ २३॥
—ऋ० १।३३।३-४

ओं महो महानि पनयन्त्यस्येन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि। वृजनेन वृजिनान्त्सं पिपेष मायाभिर्दस्यूँरभिभूत्योजाः स्वाहा॥ २४॥ —ऋ० ३।३४।६

ओं ससानात्याँ उत सूर्यं ससानेन्द्रः ससान पुरुभोजसं गाम्।
हिरण्ययमुत भोगं ससान हत्वी दस्यून्प्रार्यं वर्णमावत् स्वाहा॥ २५॥
—ऋ० ३।३४।९

ओम् अभि त्यं देवꣳसवितारमोण्योः कविक्रतुमर्चामि सत्यसवꣳ रत्नधामभि प्रियं मतिं कविम्। ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भाऽ अदिद्युतत्सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीत सुक्रतुः कृपा स्वः। प्रजाभ्यस्त्वा प्रजास्त्वाऽनुप्राणन्तु प्रजास्त्वमनुप्राणिहि स्वाहा॥२६॥
—यजुः० ४।२५

स्थालीपाक की विशेष आहुतियाँ

ओम् इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरन-मीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशꣳसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि स्वाहा॥ १॥
—यजुः० १।१

ओं कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे स्वाहा॥२॥
—यजुः० ४०।२

ओम् अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः। तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः स्वाहा॥ ३॥ —ऋ० १०।३४।१३

ओं युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम्। विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वमा यवन् स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० ३।१७।२

ओं शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्।
शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय स्वाहा॥ ५॥
—अथर्व० ३।१७।६

ओम् इळा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः। बर्हिः सीदन्त्वस्रिधः स्वाहा॥ ६॥ —ऋ० १।१३।९

ओम् आ भारती भारतीभिः सजोषा इळा देवैर्मनुष्येभिरग्निः। सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक्तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तु स्वाहा॥ ७॥
—ऋ० ७।२।८

ओम् इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम्।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा॥८॥
—यजुः० ३२।१६

ओं यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना स्वाहा॥९॥
—यजुः० २०।२५

ओं यत्रेन्द्रश्च वायुश्च सम्यञ्चौ चरतः सह।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र सेदिर्न विद्यते स्वाहा॥१०॥
—यजुः० २०।२६

ओम् इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो अराव्णः स्वाहा॥ ११॥ —ऋ० ९।६३।५

ओम् अहं भूमिमददामार्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय। अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनु केतमायन् स्वाहा॥ १२॥
—ऋ० ४।२६।२

ओं भूम्यां मनुष्या जीवन्ति स्वधयान्नेन मर्त्याः। सा नो भूमिः प्राणमायुर्दधातु जरदष्टिं मा पृथिवी कृणोतु स्वाहा॥ १३॥
—अथर्व० १२।१।२२

ओं यस्यां गायन्ति नृत्यन्ति भूम्यां मर्त्या व्यैलबाः। युध्यन्ते यस्यामाक्रन्दो यस्यां वदति दुन्दुभिः। सा नो भूमिः प्र णुदतां सपत्नानसपत्नं मा पृथिवी कृणोतु स्वाहा॥ १४॥
—अथर्व० १२।१।४१

ओं यस्यामन्नं व्रीहियवौ यस्या इमाः पञ्च कृष्टयः।
भूम्यै पर्जन्यपत्न्यै नमोऽस्तु वर्षमेदसे स्वाहा॥ १५॥
—अथर्व० १२।१।४२

ओं वाजस्य नु प्रसवे मातरं महीमदितिं नाम वचसा करामहे स्वाहा॥१६॥ —यजुः० १८।३०

ओम् अभ्यावर्त्तस्व पृथिवी यज्ञेन पयसा सह। वपां तेऽअग्निरिषितोऽअरोहत् स्वाहा॥१७॥ —यजुः० १२।१०३

ओं ये ग्रामा यदरण्यं याः सभा अधि भूम्याम्। ये संग्रामाः समितयस्तेषु चारु वदेम ते स्वाहा॥ १८॥ —अथर्व० १२।१।५६

ओं भूमे मातर्नि धेहि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम्। संविदाना दिवा कवे श्रियां मा धेहि भूत्यां स्वाहा॥ १९॥

—अथर्व० १२।१।६३

ओं मा नः पश्चान्मा पुरस्तान्नुदिष्ठा मोत्तरादधरादुत। स्वस्ति भूमे नो भव मा विदन्परिपन्थिनो वरीयो यावया वधम् स्वाहा॥ २०॥

—अथर्व० १२।१।३२

इसके पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके महावामदेव्यगान का गायन कर यज्ञ को समाप्त करें। तत्पश्चात् राष्ट्रीय प्रार्थना करें।

राष्ट्रीय-प्रार्थना

ओम् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम आ राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥

—यजुः० २२।२२

ब्रह्मन्! सुराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्म तेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरि-दल विनाशकारी॥
होवें दुधारु गौएँ, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही॥
बलवान् सभ्य योद्धा, यजमान-पुत्र होवे।
इच्छानुसार वर्षें, पर्जन्य ताप धोवे॥
फल-फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हो योग क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी॥

प्रार्थना

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुखःभाग् भवेत॥

हे ईश! सब सुखी हों, कोई न हो दुखारी।
होवें नीरोग भगवन्, धनधान्य के भण्डारी॥
सब भद्र भाव देखें, सन्मार्ग के पथिक हों।
दुखिया न कोई होवे, सृष्टि में जीवधारी॥

सबका भला करो भगवान्, अन्न-वस्त्र-गृह मिले समान।
सबकी व्यथा हरो भगवान्, सबका सबविध हो कल्याण॥

विश्व-संगठन की प्रार्थना

ओं संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर॥ १॥

—ऋ० १०।१९१।१

हे प्रभु! तुम शक्तिशाली, हो बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते यही हैं,कीजिए धन-वृष्टि को॥

ओं सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥ २॥

—ऋ० १०।१९१।२

प्रेम से मिलकर चलो, बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम, कर्त्तव्य के मानी बनो॥

ओं समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥ ३॥

—ऋ० १०।१९१।३

हों विचार समान सबके, चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूँ बराबर, भोग्य पा सब नेक हों॥

ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥ ४॥

—ऋ० १०।१९१।४

हों सभी के दिल तथा, संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से, जिससे बढ़े सुख-सम्पदा॥

झण्डावन्दन विधिः

तत्पश्चात् अपने-अपने राष्ट्र के ध्वज को फहरावें, और अपने-अपने राष्ट्र का ध्वजगीत सम्मिलित रूप से गावें। विधि यह है कि जिस काल में, जिस देश में, जो राष्ट्रध्वज हो, जो राष्ट्रगान हो, सबको उसको सम्मानपूर्वक स्वीकार करना योग्य है।

—:०:—

संस्कार
(सामान्य जानकारी)
एवं
सामाजिक पद्धतियाँ

महर्षि दयानन्द उवाच

''यहाँ तो केवल क्रिया करनी ही मुख्य है। जिस करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त हो सकते हैं, और सन्तान अत्यन्त योग्य होते हैं, इसलिए संस्कारों का करना सब मनुष्यों को अति उचित है।''

—स्वामी दयानन्द सरस्वती की अन्तिम कृति
'संस्कारविधि' की भूमिका की अन्तिम पंक्तियाँ

**''संस्कारैस्संस्कृतं यद्यन्मेध्यमत्र तदुच्यते।
असंस्कृतं तु यल्लोके तदमेध्यं प्रकीर्त्यते॥''**

"Whatever is purified and refined through the sacramental process in this world is pure and excellent, and whatever is not thus purified and refined is described impure in this world".

—स्वामी दयानन्द सरस्वती

(संस्कारविधि के प्रारम्भ में दिये श्लोकों में से चौथा श्लोक)

—Swami Dayananda Saraswati

(Fourth Shloka from the 'Shlokas' in the beginning of 'Sanskarvidhi')

XII. संस्कार एवं लोकाचार

(क) संस्कार

वैदिक जीवन पद्धति में 'संस्कार' वे कृत्य हैं, जिनके द्वारा व्यक्ति की आत्मा और शरीर को पवित्र, परिष्कृत और सुसंस्कृत बनाया जाता है। संस्कार शरीर तथा आत्मा दोनों को पवित्र तथा उन्नत बनाते हैं। वर्तमान में १९वीं शताब्दी के महान वेदज्ञ महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती की समस्त मानव जाति को एक बड़ी देन यह है, कि उन्होंने न केवल संस्कारों के महत्व से हमको अवगत कराया, किन्तु उनकी पद्धतियों में भी एकरुपता ला दी, वरना उनसे पहले विभिन्न गृह्यसूत्रों के आधार पर हरेक की अपनी-अपनी विधि संस्कारों के करने कराने की थी। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वेदादि शास्त्रों का श्रद्धापूर्वक चिन्तन करके आर्यों के इतिहासानुकूल शरीर और आत्मा की शुद्धि के लिये शिशु की उत्पत्ति की तैयारी के समय से लेकर मृत्यु के उपरान्त शरीर के अग्निसमर्पण पर्यन्त समस्त सोलह संस्कारों की विधि वेदानुकूल प्रतिपादित कर दी।

समस्त सोलह संस्कार इस प्रकार हैं—

(१) जन्म से पूर्व	**समय**
१. गर्भाधान संस्कार	विवाहोपरान्त **उत्तम मनचाही सन्तान** उत्पन्न करने के लिये।
२. पुंसवन संस्कार	गर्भधारण के दूसरे या तीसरे मास
३. सीमन्तोन्नयन संस्कार	गर्भधारण के सातवें या आठवें मास में गर्भ तथा गर्भिणी के सुस्वास्थ्य के लिये
(२) जन्म के पश्चात्—	
४. जातकर्म संस्कार	शिशु जन्म के तुरन्त बाद।
५. नामकरण संस्कार	जन्म के ११वें, १०१वें दिन या वर्षोपरान्त।

६. निष्क्रमण संस्कार	जन्म से चतुर्थ मास में शिशु को घर से बाहर उपवन, तपोवन या किसी भी पवित्र स्थल पर जहाँ का वायु शुद्ध हो, वहाँ भ्रमण के लिए ले जाना
७. अन्न प्राशन संस्कार	जन्म से छठे मास में शिशु को अन्नाहार पर डालना अथवा जब भी शिशु की शक्ति अन्न पचाने योग्य होवे।
८. चूड़ाकर्म (मुण्डन) संस्कार	शिशु के प्रथम अथवा तृतीय वर्ष में प्रथम बार केश उतरवाना।
९. कर्णवेध संस्कार	जन्म से तीसरे या पाँचवें वर्ष (बालक) का कर्ण तथा बालिका का कर्ण एवं नासिका वेध संस्कार
१०. उपनयन या यज्ञोपवीत संस्कार	बालक एवं बालिका का पाँचवे, छठे या आठवें वर्ष
११. वेदारम्भ या विद्यारम्भ संस्कार	गुरुकुल या स्कूल में प्रविष्ट होते समय अथवा यज्ञोपवीत संस्कार के साथ ही।
१२. समावर्तन या दीक्षा संस्कार	शिक्षा पूरी होने पर गुरुकुल या विश्वविद्यालय स्तर पर
१३. विवाह संस्कार	वयस्क हो जाने तथा शिक्षा पूरी कर लेने के उपरान्त (किन्तु १६ वर्ष से न्यून कन्या और २५ वर्ष से न्यून पुरुष का विवाह न करें, न करावें)
१४. वानप्रस्थ संस्कार	५० वर्ष की आयु के पश्चात् कभी भी, अथवा स्व सन्तान के सन्तान हो जाने के पश्चात्।
१५. संन्यास संस्कार	दृढ़ वैराग्य और यथार्थ ज्ञान के प्राप्त होने पर, सामान्यतया आयु के चतुर्थ चरण में।

१६. अन्त्येष्टि संस्कार — मृत्यु के उपरान्त मृतक का दाहकर्म (चाहे वह किसी भी आश्रम का हो)

इन संस्कारों के साथ-साथ कुछ लोकाचार भी जुड़ गये हैं, जैसे विवाह से पूर्व सगाई, मण्डप, मिलनी आदि। बालक/ बालिका के किशोरावस्था आने पर कैशोर्य कर्म, वा कन्या सुभगकरण कर्म, आदि। जन्म दिवस, विवाह दिवस का मनाया जाना भी मानव समाज में महत्वपूर्ण स्थान ले चुका है। इसी प्रकार देश, काल और परिस्थितियों के कारण कुछ सामाजिक रीतियाँ एवं अनुष्ठान सामाजिक मर्यादाओं के अनिवार्य अंग हो गये हैं।

इस पुस्तक में हमारा प्रयास यह है कि विभिन्न संस्कारों का समय तथा उन-उन संस्कारों के अवसर पर दिये जाने वाले आशीर्वादों का संकलन प्रस्तुत किया जावे और अन्य सामाजिक रीतियों एवं अनुष्ठानों की पूर्ण विधि दी जावे।

संस्कारों को करने कराने के लिये महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा निर्मित 'संस्कारविधि'[१] पर्याप्त है। सुगमता और सरलता की दृष्टि से इसी पर आधारित 'संस्कारों की सरल विधि' (सम्पादक—श्री यशपाल आर्य)[२] एक अच्छा प्रयास है। महर्षि दयानन्द सरस्वती की संस्कारविधि का अंग्रेज़ी अनुवाद[३] भी उपलब्ध है।

संस्कारों के विषय में मुख्य बातें यह हैं—

१. प्रत्येक बालक/ बालिका के आठ वर्ष तक होते (११) एक से ग्यारह संस्कार हो जाने चाहिये। इसका सीधा उत्तरदायित्व माता-पिता अथवा अभिभावकों पर है।
२. अन्त्येष्टि संस्कार को छोड़कर अन्य समस्त संस्कारों में बृहद् यज्ञ (सामान्य प्रकरण) की क्रिया करना अनिवार्य है। केवल

१. संस्कारविधि (प्रामाणिक संस्करण)—प्रकाशक: रामलालकपूर ट्रस्ट, देवली, सोनीपत (हरयाणा)-१३१००१
२. संस्कारों की सरल विधि—प्रकाशक: वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, पोस्ट रायपुर, जिला-देहरादून।
३. Sanskar Vidhi (English): Sarvadeshika Arya Pratinidhi Sabha, Asaf Ali Road, New Delhi-2
Vedic Vision (English) Dr. Satyavrat Siddhantalankar, Vijaya Krishan Lakhanpal, W-77A, G.K.-I, New Delhi-48.

पूर्णाहुति प्रकरण, संस्कार विषयक मन्त्रों से आहुतियाँ देने के बाद वा मुख्य होम के पश्चात् पूरा किया जावेगा।

३. अन्त्येष्टि संस्कार को छोड़कर समस्त संस्कारों तथा मंगल कार्यों में महा वामदेव्यगान का गायन आवश्यक है।

संस्कारों में आशीर्वाद

१. गर्भाधान संस्कार
२. पुंसवन संस्कार
३. सीमन्तोन्नयन संस्कार

ओं वीरसूस्त्वं भव, जीवसूस्त्वं भव, जीवपत्नी त्वं भव।
अर्थात् तू वीर माता, भरी गोदवाली, सदा सौभाग्यवती रहे।

४. जातकर्म संस्कार

१. ओम् स त्वाह्ने परिददात्वहस्त्वा रात्र्यै परिददातु रात्रिस्त्वाहोरात्राभ्यां परिददात्वहोरात्रौ त्वार्द्धमासेभ्यः परिदत्तामर्द्धमासास्त्वा मासेभ्यः परिददतु मासास्त्वर्तुभ्यः परिददत्वृतवस्त्वा संवत्सराय परिददतु संवत्सरस्त्वायुषै जरायै परिददात्वसौ।
नोट : 'असौ' के स्थान पर शिशु का सम्बोधनान्त नाम बोलना है।

२. ओम् अंगादंगात् सꣳस्रवसि हृदयादधि जायसे। प्राणंते प्राणेन सन्दधामि जीव मे यावदायुषम्॥

३. ओम् अङ्गादङ्गात् संभवसि हृदयादधि जायसे। वेदो वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शतम्॥

४. ओम् अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भव। आत्माऽसि पुत्र मा मृथाः स जीव शरदः शतम्॥
ओम पशूनां त्वा हिंकारेणाभिजिघ्राम्यसौ। (इस मन्त्र से बालक का शिर सूंघना है)

५. नामकरण संस्कार	जातकर्म संस्कार का आशीर्वाद का पहला मन्त्र सम्पूर्ण तथा ''हे बालक (नाम लें) त्वमायुष्मान् वर्चस्वी तेजस्वी, प्रतापी, पुरुषार्थी, परोपकारी, श्रीमान् सुनामा भूयाः।'' ''हे बालिके (नाम लें) त्वमायुष्मती, वर्चस्विनी, तेजस्विनी, धर्मशीला, पुरुषार्थिनी, प्रतापी, परोपकारिणी श्रीमती, सुनाम्नी भूयाः।''
६. निष्क्रमण संस्कार	हे बालक/ बालिके! (नाम लें) त्वं जीव शरदः शतं वर्धमानः/वर्धमाना॥
७. अन्नप्राशन संस्कार	हे बालक! (नाम लें) त्वमन्नपतिः अन्नादो वर्धमानो भूयाः। हे बालिके (नाम लें) त्वमन्नपती अन्नादा वर्धमाना भूयाः।
८. चूडाकर्म (मुण्डन) संस्कार	ओं त्वं जीव शरदः शतं वर्धमानः, गोमान् अश्ववान्, प्रजावान् भूया॥ ओं त्वं जीव शरदः शतं वर्धमाना, गोमती, अश्ववती, प्रजावती भूयाः॥
९. कर्णवेध संस्कार	(बालक) हे बालक (नाम लें)! त्वं जीव शरदः शतं वर्द्धमानः वर्चस्वी, तेजस्वी श्रीमान नीरोगो भूयाः॥ कर्णवेध तथा नासिका वेध संस्कार (बालिका) हे बालिके! (नाम लें) त्वं जीव शरदः शतं वर्द्धमाना वर्चस्विनी, तेजस्विनी, श्रीमती, नीरोगा भूयाः॥
१०. उपनयन या यज्ञोपवीत संस्कार	हे बालक! (नाम लें) त्वं जीव शरदः शतं वर्द्धमान्, आयुष्मान्, तेजस्वी वर्चस्वी, विद्यावान्, गुणवान् भूया। हे बालिके! (नाम लें) त्वं जीव शरदः

	शतं वर्द्धमाना, आयुष्मती, तेजस्विनी, वर्चस्विनी, विद्यावती, गुणवती भूयाः॥
११. वेदारम्भ या विद्यारम्भ संस्कार	**आचार्य/ आचार्या द्वारा—** आयुष्मान् विद्यावान् भव सौम्य॥ वा आयुष्मती विद्यावती भव सौम्ये॥ **अन्यों द्वारा—** हे बालक! त्वमीश्वरकृपया विद्वान् शरीरात्मबलयुक्तः कुशली वीर्यवान् अरोगः सर्वा विद्या अधीत्याऽस्मान् दिदृक्षुः सन्नागम्याः। हे बालिके! त्वमीश्वरकृपया विदुषी शरीरात्माबलयुक्ता कुशलिनी वीर्यवती सुवासिनी अरोगा सर्वा विद्या अधीत्याऽस्मान दिदृक्षुः सत्यागम्याः॥
१२. समावर्तन संस्कार	आचार्य/आचार्या द्वारा तैत्तिरीय आरण्यक के आधार पर उपदेश।
१३. विवाह संस्कार	ओं सौभाग्यमस्तु। ओं शुभं भवतु। ओं स्वस्ति, ओं स्वस्ति, ओं स्वस्ति॥
१४. वानप्रस्थ संस्कार	केवल मंगलकामनाएँ।
१५. संन्यास संस्कार	केवल मंगलकामनाएँ।
१६. अन्त्येष्टि संस्कार	मृतक की आत्मा की शांति और सद्गति के लिये ईश्वर से प्रार्थना।

संस्कार-बधाई-गीत—१

बधाई हो! बधाई हो!

जातकर्म—

यह शुभ दिन आज का आना, बधाई हो!
हुआ है जन्म बालक का, बधाई हो....!!
है जैसा रूप बालक का, प्रभु दे इसको गुण वैसे।
हो जीवन दीर्घ बालक का, बधाई हो....!! यह शुभ....

नामकरण—

यह शुभ दिन आज का आना, बधाई हो बधाई हो!
रखा है नाम बालक का, बधाई....!!
है जैसे नाम का बालक, प्रभु दे इसको गुण वैसे।
बने यह जग में गुणशाली, बधाई....!! यह शुभ....

अन्नप्राशन—

यह शुभ दिन आज का आना, बधाई हो बधाई हो!
कराया अन्नप्राशन है, बधाई हो....!!
यह खावे और खिलावे भी, प्रभु दे इसको यह बुद्धि।
सदा फूले-फले बालक, बधाई हो....!! यह शुभ....

मुण्डन—

यह शुभ दिन आज का आना, बधाई हो बधाई हो!
हुआ संस्कार मुण्डन है, बधाई हो....!!
बढ़े-फूले-चमके, प्रभु दे इसको बलबुद्धि।
हो लम्बी उम्र बालक की, बधाई हो....!! यह शुभ....

कर्णभेद—

यह शुभ दिन आज की आना, बधाई हो बधाई हो।
हुआ है कर्ण वेधन, बधाई हो....!!
सुने यह वेद की वाणी, करे यह कर्म देवों के।
हो जीवन शुद्ध सात्त्विक ही, बधाई हो....!! यह शुभ....

उपनयन—

यह शुभ दिन आज का आना, बधाई हो बधाई हो!
हुआ है उपनयन इसका, बधाई हो....!!
बने विद्वान् और शिक्षित, प्रभु दो इसको यह बुद्धि।
बनावे आर्य सब जग को, बधाई हो....!! यह शुभ....

जन्मदिन—

यह शुभ दिन आज का आना, बधाई हो बधाई हो!
मनाया 'जन्म दिन' इसका, बधाई हो....!!
करे यह उन्नति सब विध, प्रभो आशीष दो इसको।
करे जीवन सफल अपना, बधाई हो....!! यह शुभ

निम्न पंक्तियाँ प्रत्येक अवसर पर बोली जानी हैं—

सुखी माता-पिता इसके, सदा देखें सुखी इसको।
हो लम्बी आयु बालक की, बधाई हो....!! यह शुभ....
बड़ों की और गुरु आज्ञा, धरे सिर पर हमेशा यह।
करे यह कुल को उजियारा, बधाई हो....!! यह शुभ
प्रभु दो बुद्धि ऐसी कि, करे उपकार सब जग का।
करे यह देश की सेवा, करे यह धर्म की सेवा।
करे यह दीन की सेवा, बधाई हो....!! यह शुभ....

संस्कार बधाई गीत—२

दिवस यह हर्ष का आया, शुभं भवतु शुभं भवतु।
मगन मन झूम यह गाए, शुभं भवतु शुभं भवतु॥
मधुर बहती पवन शीतल, जो टकराई हिमालय से।
पलट कर शब्द यह आया, शुभं भवतु....॥
भरे उल्लास में उड़ते, हुए लवलीन पक्षीगण।
हैं गाते गीत मन-मीठे, शुभं भवतु....॥
उषा की फैलती किरणे, तेरे माथे का चुम्बन ले,
लिखें यह दिव्यवाणी में, शुभं भवतु....॥
सजा सुन्दर जो यह चेहरा, खुशी की रोशनी भरकर।
रहे ऐसा बरस सौ तक, शुभं भवतु....॥
जहाँ आओ वहाँ फूलो-फलो, ऐ नूरे नज़र
सभी के प्यार की ज्योति, शुभं भवतु....॥
जहाँ भी तू कदम रक्खे, उठे खुशबू मुहब्बत की।
कुलों दोनो को तारे तू, शुभं भवतु....॥
बने तेजस्वी वर्चस्वी, यशस्वी और सदाचारी।
जगत में मान-पद पाओ, शुभं भवतु....॥
प्रभु हरदम सहाई हों, हितैषी हों सभी जग के।
पड़े न दुःख की छाया, शुभं भवतु....॥
मिले आशीष ईश्वर का, रहे आनन्द जीवन-भर।
गुणों का तू बने सागर, शुभं भवतु....॥
सदा दिन यह रहे आता, हजारों वर्ष की आयु।
चढ़ो उत्कर्ष के नभ पर, शुभं भवतु....॥

(ख) लोकाचार/सामाजिक पद्धतियाँ

जन्म दिवस

[आयुष्टोम होम]

ध्यान रहे कि पाश्चात्य-सभ्यता के ढंग पर वर्ष की संख्यानुसार मोमबत्तियाँ जलाना, उन्हें फूँक मारकर बुझाना, केक काट जन्म-दिवस मनाना अनार्य रीति है। आर्यों की रीति **'तमसो मा ज्योतिगर्मय'** अर्थात् **अन्धकार से प्रकाश की ओर जाने की है, अग्नि को बुझाने की नहीं—'सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्।'** अतः उचित यह है कि उस दिन यज्ञवेदी के पास वर्ष-संख्यानुसार, यदि सामर्थ्य है, तो घृतदीप जलाये जावें।

इसी प्रकार यदि परिपक्व आयु के स्त्री-पुरुष अपना जन्म-दिवस मनाना चाहें, तो उन्हें उस दिन गत-जीवन पर दृष्टिपात करके अपने गुण-अवगुण व उपलब्धि-अनुपलब्धि [हानि-लाभ] पर विचार करना चाहिए और भविष्य में अभ्युदय की प्राप्ति के लिए शुभ संकल्प कर, उन्नायक परमात्मा से 'श्रद्धा, मेधा, यश, प्रज्ञा, श्रीः, आयु और बल' की प्रार्थना करना चाहिए। इससे उनका वैयक्तिक जीवन भी नवीन उत्साह से पूरित होगा, और सामाजिक जीवन में पारस्परिक-सम्बन्ध भी मधुर होंगे।

जिस दिन सन्तान का वा अपना जन्म हुआ हो,* उस दिन सन्तान का पिता यज्ञ वेदी पर पूर्वाभिमुख अपने दाहिने भाग में पत्नी को बैठाकर अपनी पत्नी के दक्षिण-भाग में सन्तान को बैठाए। अपना जन्म-दिवस हो, तो भी पत्नी को दक्षिण बाज़ू ही बैठाए।

बृहद् यज्ञ की समस्त क्रियाओं को करके (पूर्णाहुति प्रकरण को छोड़कर) इन मन्त्रों से पहले परमेश्वर का उपस्थान करें।

ओम् उप॑ प्रि॒यं पनि॑प्रतं॒ युवा॑नमाहुती॒वृध॑म्।
अग॑न्म॒ बिभ्र॑तो॒ नमो॑ दी॒र्घमायुः॑ कृणोतु मे॥ १ ॥

—अथर्व ७।३२।१

* जन्मदिवस यथासम्भव देशी तिथि के अनुसार मनाया जाना चाहिये।

ओं विश्वे मे देवा सर्वे मे देवाः शान्तिः॥

—अथर्व० ११।९।१४

ओं सं मा॒यम॒ग्निः सि॑ञ्चतु प्र॒जया॑ च॒ धने॑न च दी॒र्घमायुः॑ कृणोतु मे॥ २॥

—अथर्व० ७।३३।२

मुख्य होम मन्त्राः

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य की आहुतियाँ देवें—

ओम् आ नो॑ भ॒द्राः क्रत॑वो यन्तु वि॒श्वतोऽद॑ब्धासो॒ऽअप॑रीतासऽउ॒द्भिद॑ः। दे॒वा नो॒ यथा॒ सद॒मिद् वृ॒धेऽअस॒न्नप्रा॑युवो रक्षि॒तारो॑ दि॒वेदि॑वे स्वाहा॑॥१॥ —यजुः० २५।१४

ओं दे॒वानां॑ भ॒द्रा सु॒म॒तिर्ऋ॑जूय॒तां दे॒वाना॑ᳬरा॒तिर॒भि नो॒ निव॑र्त्तताम्। दे॒वाना॑ᳬस॒ख्यमुप॑सेदिमा व॒यं दे॒वा न॒ऽआयुः॒ प्रति॑रन्तु जी॒वसे॑ स्वाहा॑॥ २॥ —यजुः० २५।१५

ओं भ॒द्रं कर्णे॑भिः शृणुयाम देवा भ॒द्रं प॑श्येमा॒क्षभि॒र्यज॑त्राः। स्थि॒रैरङ्गै॑स्तुष्टु॒वाᳬस॑स्त॒नूभि॒र्व्य॒शेमहि दे॒वहि॑तं॒ यदायुः॑ स्वाहा॑॥३॥

—यजुः० २५।२१

ओं तच्चक्षु॑र्दे॒वहि॑तं पु॒रस्ता॑च्छु॒क्रमु॒च्चर॑त्। पश्ये॑म श॒रद॑ः श॒तं जीवे॑म श॒रद॑ः श॒तᳪ शृणु॑याम श॒रद॑ः श॒तं प्र ब्र॑वाम श॒रद॑ः श॒तमदी॑नाः स्याम श॒रद॑ः श॒तं भूय॑श्च श॒रद॑ः श॒तात् स्वाहा॑॥४॥

—यजुः० ३६।२४

तत्पश्चात् स्थालीपाक की अग्नि, वायु, आदित्य, चन्द्रमा व विश्वेदेवा के नाम की आहुतियाँ देवें—

ओम् अग्न॒ऽआयूᳬ॑षि पवस॒ऽआ सु॒वोर्ज॒मिषं॑ च नः।
आ॒रे बा॑धस्व दु॒च्छुना॑म् स्वाहा॑॥१॥ —यजुः० ३५।१६

ओम् आयु॑ष्मानग्ने ह॒विषा॑ वृधा॒नो घृ॒तप्र॑तीको घृ॒तयो॑निरेधि। घृ॒तं पी॒त्वा मधु॒ चारु॒ गव्यं॑ पि॒तेव॑ पु॒त्रम॒भि र॑क्षतादि॒मान्त्स्वाहा॑ ॥२॥

—यजुः० ३५।१७

ओं नवो॑नवो भवसि॒ जाय॑मा॒नोऽह्नां॑ के॒तुरु॒षसा॑मे॒ष्यग्र॑म्। भा॒गं दे॒वेभ्यो॒ वि द॑धास्या॒यन्प्र च॑न्द्रमस्तिरसे दी॒र्घमायुः॑ स्वाहा॑ ॥ ३ ॥

—अथर्व० ७।८१।२

ओं वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे। प्र ण आयूँषि तारिषत् स्वाहा॥ ४॥ —ऋ० १०।१८६।१

ओम् उत वात पितासि न उत भ्रातोत नः सखा। स नो जीवातवे कृधि स्वाहा॥ ५॥ —ऋ० १०।१८६।२

ओम् आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजां त्वष्टरधिनिधेह्यस्मै। रायस्पोषं सवितरा सुवास्मै शतं जीवाति शरदस्तवायम् स्वाहा॥ ६॥
—अथर्व० २।२९।२

ओं सविता पश्चातात्सविता पुरस्तात्सवितोत्तरात्तात् सविताधरात्तात्। सविता नः सुवतु सर्वतातिं सविता नो रासतां दीर्घमायुः स्वाहा॥ ७॥ —ऋ० १०।३६।१४

यदि बालक/बालिका की देशी तिथि और जिस नक्षत्र में जन्म हुआ हो, पता है तो एक आहुति उस तिथि से, दूसरी आहुति तिथि के देवता से, तीसरी आहुति नक्षत्र से और चौथी आहुति नक्षत्र के देवता से देना चाहिये।* यह चारों घृत आहुतियाँ होंगी।

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य की आहुतियाँ देवें—

ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् स्वाहा॥१॥ —यजुः० ३।६२

ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। त्रेधामृतस्य चक्षणं त्रीण्यायूँषि तेऽ करम् स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० ५।२८।७

ओं सं मा सिञ्चन्तु मरुतः सं पूषा सं बृहस्पतिः। सं मायमग्निः सिञ्चतु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा॥ ३॥
—अथर्व० ७।३३।१

ओं सं मा सिञ्चन्त्वादित्याः सं मा सिञ्चन्त्वग्नयः। इन्द्र समस्मान् सिञ्चतु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा॥ ३॥

ओं सं मा सिञ्चन्त्वरुषः समर्का ऋषयश्च ये। पूषा समस्मान् सिञ्चतु प्रजया धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा॥ ४॥

ओं सं मा सिञ्चतु पृथिवी सं मा सिञ्चन्तु या दिशः। अन्तरिक्षं समस्मान् सिञ्चतु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा॥ ५॥

---

* तिथि और नक्षत्र के देवता के लिए देखें—''संस्कारविधि'' (नामकरण संस्कार)।

ओं सं मा सिञ्चन्तु प्रदिशः सं मा सिञ्चन्तु या दिशः। आशाः समस्मान् सिञ्चन्तु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा॥ ६॥

ओं सं मा सिञ्चन्तु कृष्टयः सं मा सिञ्चन्त्वोषधीः। सोम समस्मान् सिञ्चन्तु प्रजयाच धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा॥ ७॥

ओं सं मा सिञ्चन्तु नद्यः सं मा सिञ्चन्तु सिन्धवः। समुद्र समस्मान् सिञ्चन्तु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा॥ ८॥

ओं सं मा सिञ्चन्त्वापः सं मा सिञ्चन्तु कृष्टयः। सत्यं समस्मान सिञ्चतु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा॥ ९॥
—पैप्पलादशाखा अथर्व० ६।१८।२, ३, ५-९

इसके पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके महावामदेव्य गान करें।

बालक/बालिका को आशीर्वाद

तत्पश्चात् ऋत्विग् को दक्षिणा देकर, कार्यार्थ आए मनुष्यों को यथायोग्य आदर-सत्कार करके विदा करें। सब लोग जाते समय निम्न मन्त्रों से बालक को शुभाशीर्वाद दें—

ओं शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमु वसन्तान्। शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः॥ १॥
—ऋग्० १०।१६१।४; तु०—अथर्व० ३।११।४

ओं साग्रं वर्षशतं जीव पिब खाद च मोद च।
आयुर्बलं यशः प्रज्ञां प्राप्नुयाः शुभसम्पदाम्॥ २॥
ओम् एह्याश्मानमा तिष्ठाश्मा भवतु ते तनूः।
कृण्वन्तु विश्वे देवा आयुष्टे शरदः शतम्॥ ३॥

विशेष उसी प्रकार जैसा नामकरण संस्कार में पृष्ठ १५५ पर वर्णित है।

प्रौढ़ जनों की प्रार्थना

तत्पश्चात् यजमान निम्न मन्त्रों से हाथ जोड़कर परमात्मा का उपस्थान करे।

ओं जातवेदो यशोऽस्मासु धेहि प्रजाभिरग्ने अमृतवमश्याः। यस्मै त्वं सुकृते जातवेद उ लोकमग्ने कृण्वः स्योनम्॥ १॥

ओम् इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे। पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्॥ २॥

—ऋग्० २।२१।६

प्रौढ़ जनों के लिये शुभकामना

ओं समास्त्वाग्न ऋतवो वर्द्धयन्तु संवत्सरा ऋषयो यानि सत्या। सं दिव्येन दीदिहि रोचनेन विश्वा आ भहि प्रदिशश्चतस्रः॥ १॥

—यजुर्वेद २७।१; अथर्ववेद २।६।१

ओं शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्तान्छतमु वसन्तान्। शतं त इन्द्रो अग्निः सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषाहार्ष-मेनम्॥ २॥ —अथर्व० ३।११।४; तु०—ऋग्० १०।१६१।४

रोग-व्याधि निवारणाय आयुष्काम यज्ञानुष्ठानम्

बृहद यज्ञ की सम्पूर्ण विधि करके (पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर) निम्न मन्त्रों से घृत-शाकल्य की विशेष ५१ आहुतियाँ देवें—

मुख्य होम मन्त्राः

ओम् आमे सुपक्वे शबले विपक्वे यो मा पिशाचो अशने ददम्भ। तदात्मना प्रजया पिशाचा वि यातयन्तामगदो३यमस्तु स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० ५।२९।६

ओं सोमस्येव जातवेदो अंशुरा प्यायतामयम्। अग्ने विरप्शिनं मेध्यमयक्ष्मं कृणु जीवतु स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० ५।२९।१३

ओं यत्ते माता यत्ते पिता जामिर्भ्राता च सर्जतः। प्रत्यक्सेवस्व भेषजं जरदष्टिं कृणोमि त्वा स्वाहा॥ ३॥ —अथर्व० ५।३०।५

ओं मा बिभेर्न मरिष्यसि जरदष्टिं कृणोमि त्वा। निरवोचमहं यक्ष्ममङ्गेभ्यो अङ्गज्वरं तव स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० ५।३०।८

ओम् अङ्गभेदो अङ्गज्वरो यश्च ते हृदयामयः। यक्ष्मः श्येनइव प्रापप्तद्वाचा साढः परस्तराम् स्वाहा॥ ५॥ —अथर्व० ५।३०।९

ओं मा ते प्राण उप दसन्मो अपानोऽपि धायि ते। सूर्यस्त्वाधिपतिर्मृत्योरुदायच्छतु रश्मिभिः स्वाहा॥ ६॥

—अथर्व० ५।३०।१५

ओं शीर्षक्तिं शीर्षामयं कर्णशूलं विलोहितम्। सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ ७॥

ओं कर्णाभ्यां ते कङ्कूषेभ्यः कर्णशूलं विसल्पकम्। सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ ८॥

ओं यस्य हेतोः प्रच्यवते यक्ष्मः कर्णत आस्यतः। सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ ९॥

ओं यः कृणोति प्रमोतमन्धं कृणोति पूरुषम्। सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ १०॥

ओम् अङ्गभेदमङ्गज्वरं विश्वाङ्ग्यं विसल्पकम्। सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ ११॥

ओं यस्य भीमः प्रतीकाश उद्वेपयति पूरुषम्। तक्मानं विश्वशारदं बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ १२॥

ओं य ऊरू अनुसर्पत्यथो एति गवीनिके। यक्ष्मं ते अन्तरङ्गेभ्यो बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ १३॥

ओं यदि कामादपकामाद्धृदयाज्जायते परि। हृदो बलासमङ्गेभ्यो बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ १४॥

—अथर्व० ९।८।१-८

ओं हरिमाणं ते अङ्गेभ्योऽप्वामन्तरोदरात्। यक्ष्मोधामन्तरात्मनो बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ १५॥

ओम् आसो बलासो भवतु मूत्रं भवत्वामयत्। यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् स्वाहा॥ १६॥

ओं बहिर्बिलं निर्द्रवतु काहाबाहं तवोदरात्। यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् स्वाहा॥ १७॥

ओम् उदरात्ते क्लोम्नो नाभ्या हृदयादधि। यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् स्वाहा॥ १८॥

ओं याः सीमानं विरुजन्ति मूर्धानं प्रत्यर्षणीः। अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् स्वाहा॥ १९॥

ओं या हृदयमुपर्षन्त्यनुतन्वन्ति कीकसाः। अहिं सन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् स्वाहा॥ २०॥ —अथर्व० ९।८।९-१४

ओं हरिमाणं ते अङ्गेभ्योऽ प्वामन्तरोदरात्। यक्ष्मोधामन्तरात्मनो बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ २१॥

ओं याः पार्श्वे उपर्षन्त्यनुनिक्षन्ति पृष्टीः। अहिं सन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् स्वाहा॥ २२॥

ओं यास्तिरश्चीरुपर्षन्त्यर्षणीर्वक्षणासु ते। अहिं सन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् स्वाहा॥ २३॥

ओं या गुदा अनुसर्पन्त्यान्त्राणि मोहयन्ति च। अहिं सन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् स्वाहा॥ २४॥

ओं या मज्ज्ञो निर्धयन्ति परूंषि विरुजन्ति च। अहिं सन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् स्वाहा॥ २५॥

ओं ये अङ्गानि मदयन्ति यक्ष्मासो रोपणास्तव। यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् स्वाहा॥ २६॥

—अथर्व० ९।८।९, १५-१९

ओं हरिमाणं ते अङ्गेभ्योऽ प्वामन्तरोदरात्। यक्ष्मोधामन्तरात्मनो बहिर्निर्मन्त्रयामहे स्वाहा॥ २७॥

ओं विसल्पस्य विद्रधस्य वातीकारस्य वालजेः। यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् स्वाहा॥ २८॥

ओं पादाभ्यां ते जानुभ्यां श्रोणिभ्यां परि भंससः। अनूकादर्षणीरुष्णिहाभ्यः शीर्ष्णो रोगमनीनशम् स्वाहा॥ २९॥

ओं सं ते शीर्ष्णः कपालानि हृदयस्य च यो विधुः। उद्यन्नादित्य रश्मिभिः शीर्ष्णो रोगमनीनशोऽ ङ्गभेदमशीशमः स्वाहा॥ ३०॥

—अथर्व० ९।८।९, २०-२२

ओम् अनु सूर्यमुदयतां हृद्द्योतो हरिमा च ते। गो रोहितस्य वर्णेन तेन त्वा परि दध्मसि स्वाहा॥ ३१॥

ओं परि त्वा रोहितैर्वर्णैर्दीर्घायुत्वाय दध्मसि। यथा ऽ यमरपा असदथो अहरितो भुवत् स्वाहा॥ ३२॥

ओं या रोहिणीर्देवत्याइ गावो या उत रोहिणीः। रूपंरूपं वयोवयस्ताभिष्ट्वा परि दध्मसि स्वाहा॥ ३३॥

ओं शुकेषु ते हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि। अथो हारिद्रवेषु ते हरिमाणं नि दध्मसि स्वाहा॥ ३४॥ —अथर्व० १।२२।१-४

ओम् अस्थिस्त्रंसं परुस्त्रंसमास्थितं हृदयामयम्। बलासं सर्वं नाशयाङ्गेष्ठा यश्च पर्वसु स्वाहा॥ ३५॥

ओं निर्बलासं बलासिनः क्षिणोमि मुष्करं यथा। छिनदम्यस्य बन्धनं मूलमुर्वार्वाइव स्वाहा॥ ३६॥

ओं निर्बलासेतः प्र पताशुंङ्गः शिशुको यथा। अथो इटइव हायनोप द्राह्यवीरहा स्वाहा॥ ३७॥ —अथर्व० ६।१४।१-३

ओम् इमं मे अग्ने पुरुषं मुमुग्ध्ययं यो बद्धः सुयतो लालपीति। अतोऽ धि ते कृणवद्भागधेयं यदानुन्मदितोऽ सति स्वाहा॥ ३८॥

ओम् अग्निष्टे नि शमयतु यदि ते मन उद्युतम्। कृणोमि विद्वान्भेषजं यथानुन्मदितोऽ ससि स्वाहा॥ ३९॥

ओं देवैनसादुन्मदितमुन्मत्तं रक्षसस्परि। कृणोमि विद्वान्भेषजं यदानुन्मदितोऽ सति स्वाहा॥ ४०॥

ओं पुनस्त्वा दुरप्सरसः पुनरिन्द्रः पुनर्भगः। पुनस्त्वा दुर्विश्वे देवा यथानुन्मदितोऽ ससि स्वाहा॥ ४१॥

—अथर्व० ६।१११।१-४

ओं जीवतां ज्योतिरभ्येह्यर्वाङा त्वा हरामि शतशारदाय। अवमुञ्चन्मृत्युपाशानशस्तिं द्राघीय आयुः प्रतरं ते दधामि स्वाहा॥ ४२॥

ओम् अस्मै मृत्यो अधि ब्रूहीमं दयस्वोदितो इयमेतु। अरिष्टः सर्वाङ्गः सुश्रुज्जरसा शतहायन आत्मना भुजमश्नुताम् स्वाहा॥ ४३॥

ओम् आरादरातिं निर्ऋतिं परो ग्राहिं क्रव्यादः पिशाचान्। रक्षो यत्सर्वं दुर्भूतं तत्तमइवाप हन्मसि स्वाहा॥ ४४॥

ओं सो ऽरिष्ट न मरिष्यसि न मरिष्यसि मा बिभेः। न वै तत्र म्रियन्ते नो यन्त्यधमं तमः स्वाहा॥ ४५॥

ओं सर्वो वै तत्र जीवति गौरश्वः पुरुषः पशुः। यत्रेदं ब्रह्म क्रियते परिधिर्जीवनाय कम् स्वाहा॥ ४६॥

ओं परि त्वा पातु समानेभ्योऽ भिचारात्सबन्धुभ्यः। अमम्रिर्भवामृतोऽतिजीवो मा ते हासिषुरसवः शरीरम् स्वाहा॥ ४८॥

—अथर्व० ८।२।२, ८, १२, २४-२६

ओं पार्थिवस्य रसे देवा भगस्य तन्वो ३ बले। आयुष्य ऽमस्मा अग्निः सूर्यो वर्च आ धाद् बृहस्पतिः स्वाहा॥ ४९॥

—अथर्व० २।२९।१

ओं शुक्रो ऽसि भ्राजो ऽसि। स यथा त्वं भ्राजता भ्राजोऽस्येवाहं भ्राजता भ्राज्यासम् स्वाहा॥ ५०॥ —अथर्व० १७।१।२०

ओम् उत्त्वा द्यौरुत्पृथिव्युत्प्रजापतिरग्रभीत्।
उत्त्वा मृत्योरोषधयः सोमराज्ञीरपीपरन् स्वाहा॥ ५१॥

—अथर्व० ८।१।१७

अब पाँच स्थालीपाक की आहूति इन मन्त्रों से दें—

ओम् उत्क्रामातः पुरुष माव पत्था मृत्योः पड्बीशमवमुञ्चमानः। मा च्छित्था अस्माल्लोकादग्नेः सूर्यस्य संदृशः स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० ८।१।४

ओं तुभ्यं वातः पवतां मातरिश्वा तुभ्यं वर्षन्त्वमृतान्यापः। सूर्यस्ते तन्वे ३ शं तपाति त्वां मृत्युर्दयतां मा प्र मेष्ठाः स्वाहा॥ २॥

—अथर्व० ८।१।५

ओं मा ते मनस्तत्र गान्मा तिरो भून्मा जीवेभ्यः प्र मदो मानु गाः पितृन्। विश्वेदेवा अभि रक्षन्तु त्वेह स्वाहा॥ ३॥

—अथर्व० ८।१।७

ओं ते त्वा रक्षन्तु ते त्वा गोपायन्तु तेभ्यो नमस्तेभ्यः स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० ८।१।१४

ओं व्य ऽवात्ते ज्योतिरभूदप त्वत्तमो अक्रमीत्। अप त्वन्मृत्युं निर्ऋतिमप यक्ष्मं नि दध्मसि स्वाहा॥ ५॥ —अथर्व० ८।१।२१

तत्पश्चात् इन मन्त्रों से ग्यारह घृताहुति दें—

ओम् उदेनं भगो अग्रभीदुदेनं सोमो अंशुमान्। उदेनं मरुतो देवा उदिन्द्राग्नी स्वस्तये स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० ८।१।२

ओम् इह तेऽ सुरिह प्राण इहायुरिह ते मनः। उत्त्वा निर्ऋत्याः पाशेभ्यो दैव्या वाचा भरामसि स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० ८।१।३

ओं पश्येम शरदः शतम् स्वाहा॥ ३॥
ओं जीवेम शरदः शतम् स्वाहा॥ ४॥
ओं बुध्येम शरदः शतम् स्वाहा॥ ५॥
ओं रोहेम शरदः शतम् स्वाहा॥ ६॥

ओं पूषेम शरदः शतम् स्वाहा॥ ७॥
ओं भवेम शरदः शतम् स्वाहा॥ ८॥
ओं भूयेम शरदः शतम् स्वाहा॥ ९॥
ओं भूयसीः शरदः शताम् स्वाहा॥ १०॥

—अथर्ववेद १९।६७।१-८

ओं सत्यामाशिषं कृणुता वयोधै कीरिं चिद्ध्यवथ स्वेभिरेवैः। पश्चा मृधो अप भवन्तु विश्वास्तद्रोदसी शृणुतं विश्वमिन्वे स्वाहा॥ —अथर्व० २०।९१।११

सब जनों द्वारा दीर्घायुष्य की कामना

उपस्थित सब जने यजमान के उत्तम स्वास्थ्य व दीर्घायुष्य की कामना निम्न मन्त्रों से करें—

ओम् अस्मै मृत्यो अधि ब्रूहीमं दयस्वोदितो ३यमेतु। अरिष्टः सर्वाङ्गः सुश्रुज्जरसा शतहायन आत्मना भुजमश्नुताम्॥ १॥

—अथर्व० ८।२।८

ओम् आयुष्य ऽमस्मा अग्निः सूर्यो वर्च आ धाद् बृहस्पतिः॥ २॥ —अथर्व० २।२१।१

ओम् अस्मिन्निन्द्रो नि दधातु नृम्णमिमं देवासो अभिसंविशध्वम्। दीर्घायुत्वाय शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासत्॥ ३॥

—अथर्व० ८।५।२१

ओम् इन्द्रावरुणा सौमनसमदृप्तं रायस्पोषं यजमानेषु धत्तम्। प्रजां पुष्टिं भूतिमस्मासु धत्तं दीर्घायुत्वाय प्र तिरतं न आयुः॥ ४॥

—ऋक्० ८।५९।७

ओं प्रजापतेरावृतो ब्रह्मणा वर्मणाहं कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च। जरदष्टिः कृतवीर्यो विहायाः सहस्रायुः सुकृतश्चरेयम्॥ ५॥ —अथर्व० १७।१।२७

पुण्याहवाचन=स्वस्तिवाचन

अन्त में पूर्णाहुति प्रकरण यथाविधि पूरा कर, तथा वामदेव्यगान करके यज्ञ में सम्मिलित हुए व्यक्तियों और ऋत्विजों को यथाशक्ति भोजन, दान-दक्षिणा आदि देकर विदा करे। और सब लोग जाते समय ऋत्विजों-सहित निम्न मन्त्रों से रोगी यजमान के प्रति शुभ कामना प्रकट करें—

ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥१॥

—यजुः० ३६।२४

ओं सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्। दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये॥ २॥

—ऋ० १०।६३।१०

ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥३॥

—यजुः० २५।२१

ओं देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳरातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानाꣳसख्यमुपसेदिमा वयं देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥४॥

—यजुः० २५।१५

दत्तकस्वीकरण-विधि
(गोद लेने की रस्म)

यदि किसी स्त्री-पुरुष के सन्तान न हो तो उत्तम मार्ग है—नियोग[1] द्वारा एक-दूसरे के लिए दो तक सन्तान पैदा कर लेना। मध्यम मार्ग है, किसी 'बालक/बालिका' को गोद ले लेना। इसमें भी ज्ञात-कुल की सन्तान को, अज्ञात कुल के सन्तान की अपेक्षा, गोद लेना अच्छा है।

दत्तक की आयु योग्यता

सर्वोत्तम यह है कि उपनयन-संस्कार किए जाने से पूर्व ही किसी बालक-बालिका को दत्तक-रूप से ग्रहण करना चाहिए। ऋषि दयानन्द के मतानुसार दत्तक की आयु आठ वर्ष से कम होनी चाहिए, क्योंकि वे ८वें वर्ष में सन्तान का यज्ञोपवीत मानते हैं।

१. नियोग वेदविहित है, परन्तु चूँकि समाज में इस समय प्रचलित नहीं है, इसलिए इसकी विधि नहीं दी जा रही है। परन्तु टेस्ट-ट्यूब बेबी तथा मानव क्लोनिंग जैसी जोखिम भरी विधियों की तुलना में परस्पर सहमति से 'नियोग' अच्छा ही है।

दत्तक का उपनयन गोद लेनेवाले माता-पिता के घर में किया जाना सर्वोत्तम है। क्योंकि गोत्र बदल जाता है, गोत्र-परिवर्तन-विधि भी अवश्य करनी/करानी चाहिए।

१. स्व-वर्णस्थ या अपने से उत्तम वर्णस्थ बालक को गोद लेना चाहिए।

२. विशेष स्थिति में 'अनाथ-सन्तानों' के गोद लिये जाने पर आयु का प्रतिबन्ध ढीला किया जा सकता है।

३. किसी कारण बड़ी उम्रवाले को गोद लेना हो, तो भी विवाहित स्त्री-पुरुष को गोद नहीं लिया जा सकता। परन्तु न्याय व्यवस्थानुसार, विवाहित स्त्री या पुरुष को अपनी सम्पत्ति का स्वामी-अधिकारी बनाया जा सकता है।

यह गोद लेना 'दत्तक-स्वीकरण' कहा जाता है। जो गोद लिया जाता है, उसे 'दत्तक' कहते हैं। अमुक बालक या अमुक बालिका को दत्तक बनाने से पूर्व, यह बात भली-भाँति देख लेनी चाहिए कि इसको दत्तक बनाया जा सकता है या नहीं।

पश्चात् दोनों पक्ष एक नागरिक भवन या धर्म-मन्दिर में एकत्र हों। दत्तक लेनेवाले स्त्री-पुरुष यजमान बनें, और सन्तान देनेवाले माता-पिता या अनाथालय के संचालक भी प्रीतिपूर्वक उसमें भाग लें। यजमान पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठें। दत्तक देनेवाले माता-पिता दक्षिण में उत्तराभिमुख बैठें। पत्नी पति के दक्षिण बाजू बैठे।

यज्ञारम्भ

'दत्तक' को प्रातःकाल स्नान करा, उत्तम शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहना, माता-पिता अपने मध्य में दक्षिण बाजू बैठावें। पश्चात् यजमान ऋत्विग्वरण से लेकर बृहद् यज्ञ की सम्पूर्ण विधि (पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर) पूरी करें।

यजमान द्वारा 'दत्तक-स्वीकरण' संकल्प

पश्चात् निम्न मन्त्र से प्रतिग्रहीता यजमान तीन-तीन आचमन करे—

ओम् आ मागन् यशमा संसृजा वर्चसा।
तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टं तनूनाम्॥

पश्चात् यजमान दत्तक की ओर देखता हुआ निम्न मन्त्र का पाठ कर संकल्प करे—

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ॥ १॥ —यजुः० १।५

ओ३म्। तत्सत् परमात्मने सच्चिदानन्दाय नमो नमः। अद्य ....वैक्रमाब्दे ....शकाब्दे ....दयानन्दाब्दे ....मासस्य ....तिथौ दिनाङ्के वा ....प्रदेशस्य ....ख्ये नगरे, ...स्थाने, ...गोत्रोत्पन्नः, सपत्नीकः, ...नाम्नः, पुत्रः, ...नाम्नः, पौत्रः, ...नामाऽहं, गोत्रोत्पन्नस्य, ...नाम्नः, पुत्रस्य, ...नाम्नानः पौत्रस्य, ...नामानं/नाम्नीं पुत्रं/पुत्रीं, चतुर्वर्गसाधनार्थ, वंशविवृद्धयर्थं च दत्तकत्वेन स्वीकरणार्थ संकल्पं करोमि। प्रीयतामनेनाऽग्निदेवः सविता परमात्मा प्रीतिभावनः॥

दत्तकजनक तथा यजमान द्वारा प्रतिग्रहण-संकल्प

पश्चात् यथाविधि आचमन कर दत्तक के माता-पिता दत्तक लेनेवाले की ओर देख, निम्न संकल्प करें—

ओ३म्। तत्सत् परमात्मने...., नामाऽहं ....गोत्रोत्पन्नाय, सपत्नीकाय, ...नाम्नः पुत्राय, ...नाम्नः पौत्राय, नामानं/ नाम्नीं पुत्रं/ पुत्रीं—जनं सालंकृतं दैव्यं, कुल-वंशसमृद्धये। श्रीमतेऽस्मै प्रयच्छामि, मोक्षकामार्थधर्मणे॥ प्रतिगृह्यताम्॥

ऐसा कहकर दत्तक को अपने पास से उठावे। उस समय यजमान-दम्पती निम्न वचन कहें—

आत्ममनसस्तृप्त्यर्थं पितृणां तारणाय च। पुत्रपौत्रधनैश्वर्याद्या-युरारोग्यवृद्धये। प्रतिगृह्णामि ते बालं मोक्षकामार्थधर्मणे॥

और निम्न मन्त्र को बोल दत्तक को आत्मीय दृष्टि से देखें—

ओं मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे॥ १॥

उस समय पुरोहित निम्न मन्त्र से 'दत्तक' को प्रतिग्रहीता यजमान के पास जाने का संकेत करे—

सीद त्वं मातुरस्याऽउपस्थे॥ —यजुः० १२।१५

हे बालक! तू इस माता [-पिता] के गोद में स्थित हो।

पश्चात् यजमान उसे पुष्पमाला पहिना, निम्न मन्त्रों को बोल, दोनों हाथों से दत्तक को स्वीकार करें, और अपने पास [छोटा हो, तो गोद में] बैठावें।

ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्या-माददे॥ १॥

ओम् आ मागन् यशसा संसृज वर्चसा॥ २॥

स्थालीपाक-आहुतियाँ

पश्चात् अग्नि को प्रदीप्त करके निम्न चार मन्त्रों से स्थालीपाक की चार आहुति यजमान देवे—

ओं कोऽदात्कस्माऽअदात्कामोऽदात्कामायादात्।
कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते स्वाहा॥ ३॥
—यजुः० ७।४८

ओं कस्त्वा विमुञ्चति स त्वा विमुञ्चति कस्मै त्वा विमुञ्चति तस्मै त्वा विमुञ्चति। पोषाय रक्षसां भागोऽसि स्वाहा॥ ४॥ —यजुः० २।२३

ओं कस्त्वा युनक्ति स त्वा युनक्ति कस्मै त्वा युनक्ति तस्मै त्वा युनक्ति। कर्मणे वां वेषाय वाम् स्वाहा॥ ५॥ —यजुः० १।६

ओं यो भूतानामधिपतिर्यस्मिँल्लोकाऽअधि श्रिताः। यऽईशे महतो महाँस्तेन गृह्णामि त्वामहं मयि गृह्णामि त्वामहम् स्वाहा॥ ६॥
—यजुः० २०।३२

परमेश्वर-उपस्थान, यज्ञसमाप्ति

पश्चात् यजमान निम्न मन्त्र से परमेश्वर का उपस्थान करे—

ओं अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मेऽराधीदमहं
यऽएवाऽस्मि सोऽस्मि॥ —यजुः० २।२८

पश्चात् बृहद् यज्ञ की पूर्णाहुति प्रकरण की विधि सम्पूर्ण कर यज्ञ समाप्त करें, और महावामदेव्यगान करके संस्कार में आई स्त्रियाँ वा दत्तक के जनक माता-पिता, ऋत्विग, सम्बन्धी, इष्टमित्र सब मिलके दत्तक को आशीर्वाद दें—

ओं त्वम् अस्मिन् गृहे जीव शरदः शतं बर्द्धमानः। आयुष्मान् तेजस्वी वर्चस्वी गुणवान् पुरुषार्थी प्रतापी श्रीमान् धीमान् सुप्रजा भूयाः॥

पुत्री के लिए निम्न आशीर्वाद देवें—

ओं त्वम् अस्मिन् गृहे जीव शरदः शतं वर्द्धमाना। आयुष्मती तेजस्विनी गुणवती पुरुषार्थिनी परोपकारिणी श्रीमती सुभगा भूयाः॥

इति दत्तक-स्वीकरण-विधिः॥

अक्षरारम्भ-विधिः

(बालक / बालिका)

तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिमधूदकम्॥

—अथर्व० ॥ तु०—मनु:० २।१०७

विद्यावान् शिक्षित के लिए सरस्वती दूध, मधु और सोम देती रहती है॥ इसलिए प्रत्येक स्त्री-पुरुष को अपनी सन्तान को शिक्षा-विद्यायुक्त बनाना योग्य है॥

सामान्य भाषा में अक्षरारम्भ को **'पट्टी-पूजन' या पाटीपूजन** भी कहते हैं। आजकल तीन-चार वर्ष में ही सन्तान को 'शिशु शिक्षण केन्द्रों' में, तथा पाँचवें-छठे वर्ष में विद्यालय-पाठशालाओं में भेजने को परिपाटी चल पड़ी है। गृह पर शिक्षित माता-पिता भी सन्तान को स्वयं अक्षराभ्यास प्रारम्भ नहीं कराते। यह ठीक नहीं। ऋषि दयानन्द के लिखे अनुसार समुचित यह है कि—''माता पाँचवें वर्ष के प्रारम्भ होने तक सन्तानों को बोध देकर, पाँचवे वर्ष में पिता को सौंप दे, और पिता भी तीन वर्ष पर्यन्त शिक्षा देकर, पुत्रों को आचार्य [=गुरु, अध्यापक] को, और आचार्या[=स्त्री-अध्यापिका] को, कन्याओं को ब्रह्मचर्य से विद्याग्रहण के लिए सौंप दें।''

भूमण्डल के सब स्त्री-पुरुषों को चाहिए कि अपनी सन्तान को शिक्षा विद्या का आरम्भ 'देववाणी' अर्थात् संस्कृतभाषा से, और अक्षराम्भ 'देवनागरी' अक्षरों से करें। क्योंकि, संस्कृतभाषा ही सब मानवों की आदिमातृ-भाषा तथा सब भाषाओं की जननी है, और देवनागरी-वर्णमाला सबसे अधिक वैज्ञानिक है।

जिस दिन अक्षरारम्भ कराना हो, उस दिन बालक/बालिका को स्नान करा, उत्तम शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहना, माता-पिता अपने दक्षिण बाजू या मध्य में बैठा, यज्ञवेदी पर बैठें। यजमानपत्नी पति के दक्षिण पार्श्व में बैठे।

मेधा-प्रार्थना

अग्निहोत्र प्रारम्भ करने से पूर्व ऋत्विक आचार्य या अभिभावकों को चाहिए कि वे सन्तान से निम्न मन्त्र बुलवा उसका भाव समझा दें—

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥

—यजु:० ३।१४

''हे सर्वज्ञ परमेश्वर! हे शिक्षाप्रदाता पितृगण! हे विद्याप्रदाता आचार्य! विश्व के सब देव अर्थात् धार्मिक-विद्वान् तथा पितरः=देश-राष्ट्र-कुल के रक्षक धार्मिक ज्ञानीगण जिस मेधा अर्थात् बुद्धि, विचारधारा, ज्ञानविज्ञान की उपासना करते हैं, उसी मेधा से मुझे भी 'मेधावी'=बुद्धिमान्, ज्ञानी-विज्ञानी, शिक्षा-विद्यावान्, सभ्य-सुसंस्कृत, धार्मिक विद्वान् बनाना।''

पश्चात् वृहद् यज्ञ (पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर) यथाविधि करें, उसके पश्चात् निम्न ६ मन्त्रों से घृत और शाकल्य की आहुति दिलवायें।

मुख्य होम मन्त्राः

ओं यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना स्वाहा॥ १॥

ओं पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् स्वाहा॥ २॥

ओं पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघा हि घृतश्चुतः।
ऋषिभिः संभृतो रसो ब्राह्मणेष्वमृतं हितम् स्वाहा॥ ३॥

ओं पावमानीर्दधन्तु न इमं लोकमथो अमुम्।
कामान्त्समर्धयन्तु नो देवीर्देवैः समाहृताः स्वाहा॥ ४॥

ओं येन देवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा।
तेन सहस्त्रधारेण पावमानीः पुनन्तु नः स्वाहा॥ ५॥

ओं पावमानीः स्वस्त्ययनीस्ताभिर्गच्छति नान्दनम्।
पुण्याँश्च भक्षान् भक्षयत्यमृतत्वं च गच्छति स्वाहा॥ ६॥

—सामवेद १२९८-१३०३

गुरुमन्त्र अर्थात् गायत्री मन्त्रोपदेश

पश्चात् पिता-माता व अध्यापक अपने सन्तान को अर्थ सहित गायत्री मन्त्र का उपदेश करें। और १०८ बार या कम से कम ११ बार गायत्री मन्त्र से आहुति देवें।

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा॥ —यजु:० ३६।३

इसके पश्चात् बृहद यज्ञ की पूर्णाहुति प्रकरण की शेष विधि पूरी कर महावामदेव्यगान करें।

तदन्तर बालक/बालिका के कण्ठ में सुन्दर पुष्पमाला डाल, उसे खड़ा कर निम्न मन्त्र बोले—

ओम् एह्यश्मानमा तिष्ठाश्मा भवतु ते तनूः।
कृण्वन्तु विश्वे देवा आयुष्टे शरदः शतम्॥

—अथर्व० २।१३।४

'हे बालक! इस (अश्मानं) ब्रह्मचर्य और तप के कठिन स्थान पर तू मर्यादा-पूर्वक आ, और स्थित हो जा। तेरा शरीर पत्थर की तरह दृढ़ हो जावे। सब देव अर्थात् अग्नि, वायु, आदित्य तथा देव-ऋषि, पितर और वसु, रुद्र, आदित्यसंज्ञक विद्वान् तेरी आयु को सौ वर्ष की करें।'

पुनः उससे सब सज्जनों का 'नमस्ते' द्वारा अभिनन्दन करावे।

पश्चात् माता-पिता, आचार्य, सम्बन्धी, इष्टमित्र, सब उपस्थित सज्जन मिलके निम्न मन्त्र को बोल—

ओम मेधां ते देवः सविता मेधां देवी सरस्वती। मेधां ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्त्रजौ॥ —आश्व० गृ० १।१५।२

निम्न वचन से आशीर्वाद देवें—

हे बालक! त्वं जीव शरदः शतं वर्धमानः। आयुष्मान् तेजस्वी वर्चस्वी धार्मिक गुणवान् विद्यावान् भूयाः।

बालिका को निम्न वचन से आशीर्वाद देवें—

हे बालिके! त्वं जीव शरदः शतं वर्धमाना। आयुष्मती तेजस्विनी वर्चस्विनी धार्मिकी गुणवती विद्यावती भूयाः।

इसके साथ ही बालक/ बालिका को सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुल्लास के आधार पर उपदेश कर दिया जावे।

कैशोर्य-कर्म-विधिः
(बालक)

'स्त्री' को प्रथम बार 'रजस्वला' या पुष्पवती=सुवासिता होना, और किशोर बालक के गुह्यांग, वक्षस्थल व दाढ़ी-मूँछ के रूप में बालों का आना दोनों की कैशोर्य दशा के आगमन का संकेत होता है। इस समय से दोनों के जीवन में, आचार-विचार, आहार-विहार, हावभाव, वेशभूषा सबमें परिवर्तन आने लगता है। दोनों में 'स्व+तन्त्र' के भाव अर्थात् 'स्त्रीत्व' और 'पुरुषत्व' का भाव जाग जाता है।

ऐसे समय में, माता-पिता का कर्त्तव्य है कि वे इनको प्रवृत्ति-रुचि देखकर, जिस-जिस 'गुण-कर्म-स्वभाववाला' बनाना हो, वैसा-वैसा बनाने की योजना करें। मनु महाराज ने (२।१८) इसे 'तनु का ब्राह्मीकरण' कहा है अर्थात् ''स्वाध्याय, व्रत, होम, ज्ञान-कर्म-उपासनारूप सकल वेदविद्या के ग्रहण, होम....सम्पूर्ण शिल्पविद्या, ओषधिविज्ञान आदि रूप यज्ञों के सेवन से, ब्रह्मयज्ञादि पञ्चमहायज्ञों और अग्निष्टोमादि यज्ञों तथा ज्येष्ठ-श्रेष्ठ जनों की नित्य सेवा, विद्वानों का संग-सत्कार, परोपकारादि दानरूप सत्कर्म करते हुए, दुष्टाचार-असत्य का त्याग कर श्रेष्ठाचार-सत्य में वर्त्तने से, (ब्राह्मीयं क्रियते तनुः) यह मानव-शरीर ब्राह्मी अर्थात् वेद और परमेश्वर की भक्ति का आधार तथा वीर्यशाली बनाया जाता है।''

इस समय किशोर-अवस्था में जिस 'द्विजत्व' का बीजारोपण 'वेदारम्भ' के समय किया गया था, अब उसका अंकुर फूटता है, और उसके परिपक्व होने तक की दशा प्राप्त होने तक उसके सावधानी से पालन-पोषण की आवश्यकता होती है। उसके लिए समावर्त्तन से पूर्व तक ऐसी शिक्षा-विद्या की व्यवस्था करनी पड़ेगी कि उसका स्वभाव यदि ब्रह्मकर्म का है, तो वह ब्राह्मण बन सके। यदि उसका स्वभाव क्षात्रकर्म का है, तो वह क्षत्रिय बन सके, और यदि उसका स्वभाव विट्-कर्म का है, तो वह वैश्य बन सके।

इस किशोर-वय:प्राप्ति पर उनका संस्कार करना, उन्हें परिष्कृत करना, उनके जीवन की दिशा बनाना आवश्यक है। यह विधि बालक सन्तान के किशोरावस्था प्रारम्भ होने अर्थात् पन्द्रहवें-सोलहवें वर्ष

में करनी चाहिए। उत्तरायण शुक्लपक्ष में किसी शुभ दिन प्रातःकाल यह कृत्य करें।

यज्ञ सम्बन्धी सब व्यवस्था करने के पश्चात्—

यज्ञ-आरम्भ

आरम्भ में चार शरावे ले, एक में चावल, दूसरे में यव, तीसरे में उर्द और चौथे शरावे में तिल भरके वेदी के उत्तर में पृथक् धर देवें।

तत्पश्चात् कर्मकर्त्ता परमात्मा का ध्यान करके किशोर के पृष्ठभाग में बैठके, वेदि के दक्षिण दिशा में बैठे नाई की ओर प्रथम देखके—

ओम् आयमगन्त्सविता क्षुरेणोष्णेन वाय उदकेनेहि। आदित्या रुद्रा वसव उन्दन्तु सचेतसः सोमस्य राज्ञो वपत प्रचेतसः॥ १ ॥

—अथर्व० ६।६८।१

इस मन्त्र का जप करके किशोर के पृष्ठभाग में बैठा पिता या कर्मकर्त्ता, किञ्चित उष्ण और किञ्चित् शीतजल दो पात्रों में से लेके, एक पात्र में मिला देवे।

तत्पश्चात् थोड़ा शीतोष्ण जल, थोड़ा माखन अथवा दही की मलाई लेके—

ओम् अदितिः श्मश्रु वपत्वाप उन्दन्तु वर्चसा।
चिकित्सतु प्रजापतिर्दीर्घायुत्वाय चक्षसे॥ २ ॥

—अथर्व० ६।६८।२

ओं सवित्रा प्रसूता दैव्या आप उन्दन्तु ते तनूं दीर्घायुत्वाय वर्चसे॥ २ ॥ —पार० २।१।९

इन दो मन्त्रों को बोलके, बालक के शिर के बालों में तीन बार हाथ फेरके केशों को भिगोवे। तत्पश्चात् कंघा लेके केशों को सुधार के इकट्ठा करे, अर्थात् केश बिखरे न रहें।

पश्चात् निम्न मन्त्र को बोलके, उस्तरे को दाहिने हाथ में लेवे—

ओं शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽअस्तु मा मा हिंसीः। —यजुः० ३।६३

तत्पश्चात् निम्न दो मन्त्रों को बोलके, उस उस्तरे और उन कुशाओं को केशों के समाप ले जाके—

ओम् ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनंहिंसीः॥१॥

—यजुः० ४।१

ओं निवर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय॥२॥ —यजुः० ३।६३

पुनः निम्न मन्त्र को बोलके कुशसहित उन दक्षिण बाजू के केशों को काटे—

ओं येनावपत्सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो वरुणस्य विद्वान्।
तेन ब्रह्माणो वपतेदमस्य गोमानश्ववानयमस्तु प्रजावान्॥ १ ॥

—अथर्व० ६।६८।३

और वे काटे हुए केश और दर्भ शमीवृक्ष के पत्र-सहित उन सब को लड़के का पिता, या लड़के की माँ एक शरावा में रक्खे। और केश-छेदन करते समय जो केश उड़ा हो, उसको गोबर से उठाकेशरावा में, अथवा उसके पास रक्खे। तत्पश्चात् इसी प्रकार—

ओं येन पूषा बृहस्पतेर्वायोरिन्द्रस्य चावपत्। तेन ते वपामि ब्रह्मणा जीवातवे जीवनाय दीर्घायुष्ट्वाय वर्चसे॥

इस मन्त्र से ऐसे ही पीछे के केश काटे। पश्चात् आगे के केश काटते समय—

ओं येन भूरिश्चरा दिव ज्योक् च पश्चाद्धि सूर्यम्। तेन ते वपामि ब्रह्मणा जीवातवे जीवनाय सुश्लोक्याय स्वस्तये॥

यह मन्त्र बोलके केशछेदन करे। तत्पश्चात्—

ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्॥ —यजुः० ३।६२

इस मन्त्र को बोलके शिर के पीछे के केश एक बार कैंची से काटके, इसी **(ओं त्र्यायुषं०)** मन्त्र को बोलते जाना, और औंधे हाथ के पृष्ठ से बालक के शिर पर हाथ के फेरके सन्तान की मंगल कामना करे। तत्पश्चात् उस्तरा नाई के हाथ में देके—

ओं यत् क्षुरेण मर्चयता सुपेशसा वप्ता वपसि केशान्। सुन्धि शिरो माऽस्यायुः प्रमोषीः॥ —आश्व० गृ० १।१७।१५

इस मन्त्र को पिता बोलके नापित से पथरी पर उस्तरे की धार तेज़ कराके, नापित से कहे कि इस शीतोष्ण जल से बालक का शिर अच्छे प्रकार कोमल हाथ से भिगोकर, सावधानी और कोमल हाथ

से क्षौर करे, कहीं उस्तरा न लगने पावे।

इतना कहके कुण्ड से उत्तर दिशा में नापित को ले जा, उसके सम्मुख बालक को पूर्वाभिमुख बैठाके केश-मुण्डन शुरू करावे। जितने केश रखने हों, उतने ही केश रक्खे। अथवा एक बार सब केश कटवा देवे; क्योंकि दूसरी बार के केश उपर्युक्त प्रकार से रखने से अच्छे होते हैं। परन्तु शिखा अवश्य रखावे।

जब क्षौर हो चुके, तब कुण्ड के पास पड़ा वा धरा हुआ देने के योग्य पदार्थ वा शरावा आदि, कि जिनमें प्रथम अन्न भरा था, नापित को देवे। और मुण्डन किए हुए सब केश, दर्भ, शमीपत्र और गोबर नाई को देवे। और नाई केश, दर्भ, शमीपत्र और गोबर को जंगल में ले जा, गढ़ा खोदके उसमें सब डाल, ऊपर से मिट्टी से दाब देवे, अथवा गोशाला, नदी व तालाब के किनारे पर उसी प्रकार केशादि को गाड़ देवे, ऐसा नापित से कह दे। अथवा किसी को साथ भेज देवे, वह उससे उक्त प्रकार करा लेवे। कार्यकर्त्ता यजमान यथायोग्य उसको धन वा वस्त्र भी देवे।

स्नान-क्रिया

क्षौर हुये पश्चात् बालक मक्खन अथवा दही की मलाई हाथ में लगा, उसे शिर पर लगाके, सुगन्धित शुद्ध ओषधियुक्त जल से निम्न मन्त्र को बोलके स्नान करे—

ओं तेन मामभिषिञ्चामि श्रियै यशसे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय॥

(ख) **उत्तर विधि**—पश्चात् उत्तम स्वदेशी वस्त्र पहनाकर संस्कार्य बालक को पिता अपने साथ ले, उसे यज्ञ-मण्डप पर लावे। वह माता-पिता दोनो के मध्य में, वेदी के पश्चिम भाग में शुभासन पर पूर्वाभिमुख बैठे। माता उसके दक्षिण बाजू बैठे। आचार्य अथवा गुरु या उपाध्याय तथा अन्य ऋत्विग् लोग भी यथाविधि अपने-अपने आसन पर बैठें। पश्चात् आचार्य—

नवीन वस्त्र-धारण

ओं युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः। तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो३ मनसा देवयन्तः॥

इस मन्त्र को बोलके दो शुद्ध कोपीन, दो अंगोछे और सुन्दर एक उत्तरीय, और दो सुन्दर कटिवस्त्र ब्रह्मचारी को देवे। और निम्न

मन्त्र को बोलके बालक को वे सुन्दर वस्त्र और उपवस्त्र पहनावे—

ओं येनेन्द्राय बृहस्पतिर्वासः पर्यदधादमृतम्।
तेन त्वा परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे॥

आचमन-अंगस्पर्श, यज्ञोपवीत-धारण

पश्चात् सब जने यथाविधि आचमन-अंगस्पर्श करें। और आचार्य यथाविधि शिष्य को निम्न मन्त्र बोल नया यज्ञोपवीत धारण करावे—

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।
आयुषे दीर्घायुत्वाय बलाय ब्रह्मवर्चसे॥

—पार०गृ०सू० २।२।११

और किशोर वह यज्ञोपवित निम्न वचन (यजुः० ३४।५२ तु०) बोलकर धारण करे—

ओं ब्रह्म तेजोऽभिवृद्धयै तन्म आ बध्नामि।
शतशारदायायुष्मान् जरष्टिर्यथासम्॥

"हे यज्ञरूप ब्रह्मणस्पति परमात्मन! हे विद्वान् सज्जनों! ब्रह्मवर्चस् की वृद्धि के लिए इस ब्रह्मसूत्र का धारण करता हूँ कि मैं शतशारदायुषी, दीर्घायुष्मान् होऊँ॥"

ऋत्विग्वरण, यज्ञारम्भ

पश्चात् ऋत्विग्वरण से लेकर सामान्य प्रकरणोक्त वृहद् यज्ञ की सब क्रिया आघारावाज्यभागाहुतिपर्यन्त यथाविधि करें।

सत्यव्रत की पञ्चाज्याहुतियाँ

तत्पश्चात् निम्न पाँच आज्याहुति बालक के हाथ से दिलावें। ये सत्यव्रत ग्रहण कराने के निमित्त हैं—

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयम्। तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात्सत्यमुपैमि स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥ १॥

ओं वायो व्रतपते० स्वाहा॥ इदं सूर्याय—इदं न मम॥ २॥

ओं सूर्य व्रतपते० स्वाहा॥ इदं सूर्याय—इदं न मम॥ ३॥

ओं सूर्य व्रतपते० स्वाहा॥ इदं सूर्याय—इदं न मम॥ ४॥

ओं व्रताना व्रतपते० स्वाहा ॥ इदं व्रतपतये—इदं न मम ॥ ५ ॥

तीन जलाञ्जलि-प्रोक्षण

पश्चात् निम्न मन्त्र को पढ़के गुरु वा आचार्य शिष्य-बालक की हस्ताञ्जलि पकड़—

ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां हस्तं गृह्णाम्यसौ ॥ —आश्व० गृ० १।२०।४

अपनी हस्ताञ्जलि जल से भरके, निम्न मन्त्र को पढ़के अपनी अञ्जलि का जल बालक की अञ्जलि में छोड़के, बालक की हस्ताञ्जलि अंगुष्ठसहित पकड़के, पुनः बालक की हस्ताञ्जलि का जल नीचे पात्र में छुड़ा देवे।

ओं तत्सवितुर्वरेणीमहे वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठं सर्वधातमं तुरं भगस्य धीमहि ॥ —ऋक्० १०।८२।१

पुनः इसी प्रकार दूसरी बार और तीसरी बार विधि करे।

सूर्यदर्शन व आचार्यप्रदक्षिणा

तत्पश्चात् यज्ञवेदी से बाहर निकल सूर्य के सामने खड़े रह देखके, आचार्य निम्न दो मन्त्रों को पढ़के बालक को सूर्यावलोकन करावे—

ओं देव सवितरेष ते ब्रह्मचारी तं गोपाय स मा मृत ॥ १ ॥

ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥२॥

—यजुः० ३६।२४

तत्पश्चात् बालक-सहित आचार्य सभामण्डप में आ, यज्ञकुण्ड की उत्तर बाजू की ओर बैठके, निम्न दो मन्त्र पढ़े—

ओं युवा सुवासाः परिवीत आगात्स उ श्रेयान्भवति जायमानः ॥ १ ॥ —ऋ० ३।८।४

ओं सूर्यस्यावृतमन्वावर्तस्व, असौ ॥ २ ॥

और बालक आचार्य की प्रदक्षिणा करके आचार्य के सम्मुख यथापूर्व बैठे।

परस्पर हृदय-स्पर्श-पूर्वक प्रतिज्ञा

पश्चात् निम्न मन्त्र को बोलके आचार्य, सम्मुख रहे बालक के हृदय पर अपना दक्षिण हाथ रखके—

ओं तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो३ मनसा देवयन्तः ॥

—ऋ० ३।८।४

पुनः आचार्य निम्न प्रतिज्ञामन्त्र को बोले—

ओं मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनुचित्तं ते अस्तु।
मम वाचमेकमना जुषस्व बृहस्पतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्॥

—पार०गृ०सू० १।८।८

"हे शिष्य! तेरा चित्त मेरे चित्त के अनुकूल सदा रहे। तू मेरी वाणी को एकाग्र मन हो प्रीति से सुनकर उसके अर्थ को सेवन किया कर और आज से तेरी प्रतिज्ञा के अनुकूल बृहस्पति परमात्मा तुझको मुझसे युक्त करे।"

"हे आचार्य! आपके हृदय को मैं अपनी उत्तम शिक्षा और विद्या की उन्नति में धारण करता हूँ। मेरे चित्त के अनुकूल आपका चित्त सदा रहे। आप मेरी वाणी को एकाग्र होके सुनिये और परमात्मा मेरे लिए आपको सदा नियुक्त रक्खे।"

अग्निसञ्चय और कुण्ड-प्रदक्षिणा

तत्पश्चात् युवा ब्रह्मचारी अग्राङ्कित वचन से कुण्ड की अग्नि को कुण्ड के मध्य में इकट्ठा कर, यज्ञकुण्ड की प्रदक्षिणा करे—

ओं यथा त्वमग्ने सुश्रवा असि। एवं मां सुश्रवः सौश्रवसं कुरु। ओं यथा त्वमग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपा असि; एवमहं मनुष्याणां वेदस्य निधिपो भूयासम्॥

त्रिसमिदाधान

तत्पश्चात् बालक कुण्ड के दक्षिण की ओर उत्तराभिमुख खड़ा रहकर घृत में भिगोके एक समिधा हाथ में ले, उसे वेदिस्थ अग्नि के मध्य में निम्न मन्त्र पढ़कर छोड़ देवे। इसी प्रकार दूसरी और तीसरी समिधा छोड़े—

ओम् अग्नये समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे। यथा त्वमग्ने समिधा समिध्यसऽएवमहामायुषा मेधया वर्चसा प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन [अन्नाद्येन] समिन्धे जीवपुत्रो ममाचार्यो

मेधाव्यहमसान्यनिराकरिष्णुर्यशस्वी तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यन्नादो भूयासꣳ स्वाहा।

अग्नि से हस्त-ताप, अंगस्पर्श

तत्पश्चात् बालक वेदि के पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठके वेदि के अग्नि पर दोनों हाथों को थोड़ा-सा तपाके, हाथ में जल लगा, निम्न सात मन्त्रों से सात बार किञ्चित् हथेली उष्ण कर, जल स्पर्श करके सारा मुख स्पर्श करे—

ओं तनूपा अग्नेऽसि तन्वं मे पाहि॥ १॥
ओम्, आयुर्दा अग्नेऽस्यायुर्मे देहि॥ २॥
ओं वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि॥ ३॥
ओम् अग्ने यन्मे तन्वाऽ ऊनं तन्म आपृण॥ ४॥ यजुर्वेद॥
ओं मेधां मे देवः सवित आ दधातु॥ ५॥
ओं मेधां मे देवी सरस्वती आ दधातु॥ ६॥
ओं मेधां मे अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ॥ ७॥

—पार० गृ० २।४।७

तत्पश्चात् निम्न ५ मन्त्रों से उक्त प्रमाण अंगस्पर्श करे—

ओं वाक च म आप्यायताम्॥ १॥
इस मन्त्र से मुख द्वार,
ओं प्राणश्च म आप्यायताम्॥ २॥
इस मन्त्र से नासिका द्वार,
ओं चक्षुश्च म आप्यायताम्॥ ३॥
इस मन्त्र से दोनों नेत्र,
ओं श्रोत्रञ्च म आप्यायताम्॥ ४॥
इस मन्त्र से दोनों कान,
ओं मनश्च म आप्यायताम्॥ ५॥
इस मन्त्र से हृदय,
ओं यशो बलञ्च म आप्यायताम्॥ ६॥
इस मन्त्र से दोनों बाहुओं को स्पर्श करे।

तत्पश्चात् निम्न ६ मन्त्रों से बालक परमेश्वर का उपस्थान करे—

ओं मयि मेधां प्रजां मय्यग्निस्तेजो दधातु॥ १॥
ओं मयि मेधां मयि प्रजां मयीन्द्र इन्द्रियं दधातु॥ २॥

ओं मयि मेधां मयि प्रजां मयि सूर्यो भ्राजो दधातु॥ ३॥
ओं यत्ते अग्ने तेजस्तेनाहं तेजस्वी भूयासम्॥ ४॥
ओं यत्ते अग्ने वर्चस्तेनाहं वर्चस्वी भूयासम्॥ ५॥
ओं यत्ते अग्ने हरस्तेनाहं हरस्वी भूयासम्॥ ६॥

अग्नि-प्रदीपन

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से अग्नि को प्रदीप्त करें—

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥

स्थालीपाकाहुति चार

तत्पश्चात् मिष्ठ भात या खिचड़ी को बालक आचार्य को होम और भोजन के लिए देवे। पुनः आचार्य उस भात में से आहुति के अनुमान [=अनुपत] भात को स्थाली में लेके, उसमें घी मिला निम्न मन्त्रों से तीन आहुति देवे—

ओं सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषꣳ स्वाहा। इदं सदसस्पत्ये—इदं न मम॥ १॥

—यजुः० ३२।१३

ओं तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा। इदं सवित्रे—इदं न मम॥ २॥ —यजुः० ३।३५

ओम् ऋषिभ्यः स्वाहा॥ इदं ऋषिभ्यः—इदं न मम॥ ३॥

यज्ञ-समाप्ति, पूर्णाहुति

तत्पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके—

ओं सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा॥

मन्त्र से तीन पूर्णाहुति देकर महावामदेव्यगान करें।

आशीर्वाद

तत्पश्चात् बालक खड़ा होकर, हाथ जोड़कर सबको 'नमस्ते' से अभिवादन कर, निम्नमन्त्रों से संकल्प कर आशीर्वाद की कामना करे—

ओं देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानां रातिरभि नो नि वर्तताम्। देवानां सख्यमुप सेदिमा वयं देवा न आयुः प्र तिरन्तु जीवसे॥ १॥

—ऋ० १।८९।२

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु॥२॥

—यजुः० ३२।१४

ओं श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः। श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि॥ ३॥ —ऋ० १०।१५१।१

तत्पश्चात् माता-पिता, आचार्य, सम्बन्धी, इष्ट-मित्र सब मिलके बालक को निम्न प्रकार आशीर्वाद देवें—

"हे बालक! त्वं जीव शरदः शतं वर्द्धमानः। तेजस्वी वर्चस्वी ओजस्वी वीर्यवान् विद्यावान् धार्मिकः भूयाः॥"

२. कन्या-सुभगकरण-विधिः

प्रथम विधि—प्रथमवार रजस्वला-स्नान

जब कन्या प्रथम बार रजस्वला हो तो उसके माता-पिता को चाहिए कि तत्काल उसको पृथक बैठा, उसका आहार-व्यवहार सब बदल दें। पश्चात् चौथे दिन व फिर सातवें दिन स्नान करावें, और हाथ-पैर के नख भी कटा दें। निम्न मन्त्र से कन्या जलघट को ले—

ओं ये अप्स्वन्तरग्नयः प्रविष्टा गोह्य उपगोह्यो मयूषो मनोहास्खलो विरुजस्तनू दुषुरिन्द्रियहा अति तान् विजहामि, यो रोचनस्तमिह गृह्णामि॥ —पार० २।६।१०

निम्न दो मन्त्रों को बोल स्नान करे—

ओं येन श्रियमकृणुतां येनावमृशताꣳसुराम्। येनाक्ष्यावभ्यसिञ्चतां यद्वां तदश्विना यशः॥ १॥ —पार० २।६।१२

ओं तेन मामभिषिञ्चामि श्रिये यशसे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय॥ २॥ —पार० २।६।११

यज्ञारम्भ

जिस दिन कन्या को स्नान कराना हो, उससे पूर्व यज्ञ की सब तैयारी करें। पुष्पमाला व शृंगारसाधन-सामग्री व आभूषणादि पास रखें, कन्या को नवीन शुद्ध स्वदेशी वस्त्र पहना, यज्ञवेदी पर कार्यकर्ता या माता-पिता अपने दक्षिण बाजू या मध्य में बैठावें। पुनः ऋत्विग्वरण, आचमन-अंगस्पर्श करके कन्या को नवीन यज्ञोपवीत धारण करावें।

पश्चात् यथाविधि बृहद् यज्ञ प्रमाणे अग्न्याधान से लेकर आघारावाज्य-भागाहुति-पर्यन्त सब क्रिया करें।

तत्पश्चात् आठ मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ कन्या से घृत की दिलावें—

मुख्य होम मन्त्राः

ओम् ऋतमग्ने प्रथमं जज्ञ ऋते सत्यं प्रतिष्ठितम्। यदियं कुमार्यभिजाता तदियमिह प्रतिपद्यताम्। यत्सत्यं तद् दृश्यतां स्वाहा॥ —आश्व० गृ० १।५।५

ओम् इमामग्निस्त्रायतां गार्हपत्यः प्रजामस्यै नयतु दीर्घमायुः। अशून्योपस्था जीवतामस्तु माता पौत्रमानन्दमभिबुध्य ताभियँ स्वाहा॥

ओं यच्च वर्चो अक्षेषु सुरायां च यदाहितम्।
यद्गोष्वश्विना वर्चस्तेनेमां वर्चसावतं स्वाहा॥ ३॥

—अथर्व० १४।१।३५

ओं यदन्तरं तद्बाह्यं यद्बाह्यं तदन्तरम्।
कन्या ⌈नां विश्वरूपाणां मनो गृभायौषधे स्वाहा॥ ४॥

—अथर्व० २।३०।४

ओम् अधः पश्यस्व मोपरि सन्तरां पादकौ हर।
मा ते कशप्लकौ दृशन्स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ स्वाहा॥ ५॥

—ऋ० ८।३३।१९

ओम् इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति। एता तेऽअघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मां सुकृतं ब्रूतात् स्वाहा॥६॥ —यजुः० ८।४३

ओं ब्रह्मचर्येण कन्या३ युवानं विन्दते पतिम्।
अनड्वान्ब्रह्मचर्येणाश्वो घासं जिगीर्षति स्वाहा॥ ७॥

—अथर्व० ११।५।१८

ओम् इयमग्ने नारी पतिं विदेष्ट सोमो हि राजा सुभगां कृणोति। सुवाना पुत्रान्महिषी भवाति गत्वा पतिं सुभगा वि राजतु स्वाहा॥ ८॥ —अथर्व० २।३६।३

दोषनिवारक होम

तत्पश्चात् निम्न दो मन्त्रों से घृत-सिंचित भात से आहुति दें—

ओम् अङ्गादङ्गाद्वयमस्या अप यक्ष्मं नि दध्मसि स्वाहा॥ १॥

—अथर्व० १४।२।६९

ओं यत्त आत्मनि तन्वां घोरमस्ति यद्वा केशेषु प्रतिचक्षणे वा। सर्वं तद्वाचाप हन्मो वयं देवस्त्वा सविता सूदयतु स्वाहा॥ २॥

—अथर्व० १।१८।३

यज्ञसमाप्ति

बृहद् यज्ञ की पूर्णाहुति प्रकरण को पूरा करके यज्ञ को यथाविधि समाप्त करें।

कन्या-अलंकरण

तत्पश्चात् चक्षु, मुख और नासिका के छिद्रों का निम्न वचन से कन्या स्पर्श करे—

ओम् प्राणापानौ मे चर्पय चक्षुर्मे तर्पय श्रोत्रं मे तर्पय॥ ३॥

पश्चात् निम्न मन्त्र से कंघे से बालों को सँवारे—

ओं कृत्रिमः कण्टकः शतदन्य एषः।
अपास्याः केश्यं मलमप शीर्षण्यं लिखात्॥ ४॥

—अथर्व० १४।२।६८

पश्चात् निम्न वचनों से सुन्दर अतिश्रेष्ठ उप-वस्त्र अर्थात् ओढ़नी धारण करे—

ओं परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि।
शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभि संव्ययिष्ये॥
ओं यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पतिः।
यशो भगश्च मा विदत् यशो प्रतिपद्यताम्॥

पश्चात् निम्न वचन से माला ग्रहण कर माला धारण करे और उस समय स्त्रियाँ कन्या की वेणी को सजावें।

ओं या आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै कामायेन्द्रियाय।
ता अहं प्रति गृह्णामि यशसा च भगेन च॥

पश्चात् निम्न वचन से अलंकार धारण करे—

ओम् अलंकरणमसि भूयोऽलङ्करणं भूयात्॥

पुनः निम्न वचन से आँखों में अंजन करे—

ओं वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दा असि चक्षुर्मे देहि॥

पश्चात् निम्न मन्त्र-भाग बोले—

ओं भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः॥

पुनः निम्न वचन से दर्पण में मुख अवलोकन करे—

ओं सुचक्षा अहमक्षीभ्यां भूयासꣳसुर्वचा मुखेन।
सुश्रुत् कर्णाभ्यां भूयासम्॥ १॥ —पा० ३।६।१९

ओं मधुमन्मे निक्रमणं मधुमन्मे परायणम्।
वाचा वदामि मधुमद्भूयासं मधुसंदृशः॥ २॥

—अथर्व० १।३४।३

[परमेश्वर का उपस्थान]

पश्चात् कन्या के माता-पिता, अभिभावक इस मन्त्र से परमेश्वर का उपस्थान करें—

ओं यत्ते वासः परिधानं यां नीविं कृणुषे त्वम्।
शिवं ते तन्वे३ तत्कृण्मः संस्पर्शेऽद्रूक्ष्णमस्तु ते॥ ३॥

—अथर्व० ८।२।१६

कन्या द्वारा नमस्कार व कन्या को आशीर्वाद

पश्चात् महावामदेव्यगान करके कन्या के माता-पिता सब बन्धु-बान्धवों, इष्टमित्रों से कन्या के लिए शुभकामना की प्रार्थना करें। कन्या व माता-पिता हाथ जोड़कर सबको नमस्कार करें, और माता-पिता निम्न मन्त्र बोलें—

ओं सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत।
सौभाग्यमस्यै दत्त्वा दौर्भाग्यैर्विपरेतन॥ १॥

—अथर्व० १४।२।२८

ओं या दुर्हार्दो युवतयो याश्चेह जरतीरपि।
वर्चो न्वस्यै सं दत्ताथास्तं विपरेतन॥ २॥

—अथर्व० १४।२।२९

सब जने अग्राङ्कित मन्त्रों से कन्या को उज्ज्वल-भविष्य का आशीर्वाद देवें।

ओं नवोनवो भवसि जायमानोऽ ह्नां केतुरुषसामेष्यग्रम्।
भागं देवेभ्यो वि दधास्यायन्प्र चन्द्रमस्तिरसे दीर्घमायुः॥ १ ॥

—अथर्व० १४।१।२४

ओम् इमां त्वमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु॥ २ ॥

—ऋक० १०।८५।४५

ओं यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगासति॥ ३ ॥

—ऋ० १०।८५।२५

॥ इति कैशोर्यकर्म-कन्यासुभगकरण-विधिः॥

प्रायश्चित्त-विधिः

धर्माचरण-सम्बन्धी वैयक्तिक दोष व पाप हो जाने पर, जैसे असत्यभाषण-चोरी आदि, व 'काम-क्रोध-लोभ-मोह' सम्बन्धी दोष हो जाने पर, तथा वर्णानुकूल नियत-कर्म न कर अन्य वर्ण के कर्म करने पर, जैसे अध्यापनवृत्ति के साथ-साथ कोई वैश्य-कर्म करने पर माने जानेवाले सामाजिक दोष हो जाने पर, उससे मन पर पड़े दुष्प्रभाव को हटाने का प्रयत्न करना चाहिए। उसके लिए सन्ध्या व अग्निहोत्र करते समय प्रतिदिन—

१. पृ० ६५-६६ पर लिखे **'शिवसंकल्प'** के मन्त्रों का बार-बार अर्थपूर्वक जप करना चाहिए।

२. निम्न मन्त्रों से पाप को दूर करने का दृढ़ संकल्प करना चाहिए—

ओं परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि। परेहि न त्वा कामये वृक्षां वनानि सं चर गृहेषु गोषु मे मनः॥ १ ॥

—अथर्व० ६।४५।१

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद्भद्रन्तन्नऽआ सुव॥ २॥ —यजुः० ३०।३

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम॥२॥

—यजुः० ४०।१६

ओं यच्चक्षुषा मनसा यच्च वाचोपारिम जाग्रतो यत्स्वपन्तः। सोमस्तानि स्वधया नः पुनातु स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० ६।९६।३

ओम् उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः। उतागश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः॥ ५ ॥ —ऋ० १०।१३७।१

ओं द्यावापृथिवी अनु मा दीधीथां विश्वे देवासो अनु मा रभध्वम्। अङ्गिरसः पितरः सोम्यासः पापमार्छत्वपकामस्य कर्ता॥ ६ ॥ —अथर्व० २।१२।५

शुद्धि-संस्कार-विधिः

१. संस्कार के विना शुद्धि

जो 'शुद्धि-संस्कार-विधि' यहाँ दी गई है, वह देश-काल के अनुकूल परिस्थिति में ही करना चाहिए। अनुकूल दशा न होने पर, बाह्य व्यापार अर्थात् संकेतित विधि को संक्षिप्त करके, प्रतिकूल स्थिति में 'गायत्री-मन्त्र' से या 'ओंकारध्वनिप्रकाशक शङ्खध्वनि' से, तथा 'ओ३म्' कहलवाकर गायत्री का उपदेश देनेमात्र से, या [कइयों के मतानुसार] आचमन कराने-मात्र से शुद्धि कर देना चाहिए। यदि शुद्धि करानेवाले व्यक्तियों की संख्या अधिक हो, या कई ग्रामों के मनुष्य मिलकर एक-साथ शुद्ध होना चाहें, तो बुद्धिमान् पुरोहित को देश-कालानुसार यथोचित व्यवस्था कर लेनी चाहिए। और यज्ञोपवीत के अधिकारियों को यज्ञोपवीत अवश्य दे देना चाहिए।

शुद्धि-क्रिया का आरम्भ

जिस 'आर्येतर' [हिन्दू या आर्य-भिन्न] व्यक्ति की शुद्धि करके आर्य या हिन्दू बनाना हो, उससे संस्कार करने से पहले एक लिखित प्रार्थना-पत्र जो आगे दिया जा रहा है, अवश्य ले लेना चाहिए।

शुद्धि के लिए प्रार्थना-पत्र

ओं दैव्याय कर्मणे शुन्धध्वं देवयज्याये॥ —यजुः० १।१३

अर्थ—हे आर्य विद्वानो! दिव्य सत्कर्म तथा श्रेष्ठ परोपकाररूपी यज्ञ करने के लिए मेरी शुद्धि कीजिए।

ओं पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा॥ —यजुः० १९।३९

अर्थ—हे विद्वान् पुरुषो! मुझे शुद्ध करो। विज्ञान और प्रीति से मेरी बुद्धियों को पवित्र करो। संसार के समस्त प्राणियो! मुझको पवित्र जीवन दो। हे वेदों के प्रचारक आचार्य! हे अणु-अणु में व्याप्त समस्त संसार के संचालक अग्रणी प्रभो! मुझे शुद्ध पवित्र करो।

सेवा में—

श्रीमान् मन्त्री जी!

आर्यसमाज................

श्रीमन्! (या भगवन्!)

मैं..............................नामवाला............................का पुत्र...स्थान का वासी, आर्यवैदिक-धर्म को निर्दोष सर्वश्रेष्ठ बुद्धियुक्त तथा सर्वप्राचीन, सत्य सनातन धर्म मानता व समझता हुआ, हृदय की स्वतः प्रेरणा से प्रसन्नतापूर्वक, बिना किसी लोभ, भय व दबाव के, सर्वान्तर्यामी प्रभु को साक्षी रखकर स्वयं/अथवा परिवार-सहित शुद्ध होकर आर्य-हिन्दु संघ में आना चाहता हूँ। मेरा शुद्धि-संस्कार कराकर मुझे आर्य-वैदिकधर्म में दीक्षित कर अनुगृहीत कीजिए।

तिथि............... विनीत प्रार्थी

वार................. ....

हस्ताक्षर उपस्थित प्रतिष्ठित व्यक्तियों के

हस्ताक्षर मन्त्री................ हस्ताक्षर प्रधान............

तत्पश्चात् शुद्ध होने वाले व्यक्ति को स्नान आदि कर यज्ञ वेदी पर आकर सबको 'नमस्ते' करके अपना पूरा नाम, अपने पिता-पितामह का नाम, अपनी पूर्वजाति व मत का नाम, अपने व्यवसाय का निर्देश, अपने ग्राम व डाकखाना और जिले का नाम, तथा वंश-परिचय संक्षिप्त रूप में सबके सामने कहे। साथ ही अपने शुद्ध होने के कारण को स्पष्ट शब्दों में निस्संकोच बतलावें।

शुद्धि-स्वीकृति

पश्चात् शुद्धि-संस्कारकर्त्ता उपस्थित जनसमूह के समक्ष उसके प्रार्थना-पत्र को पढ़कर सुनावे। और सबसे पूछे—

''क्या इस व्यक्ति को शुद्ध करके सत्य-सनातन वैदिक धर्म में दीक्षित कर लिया जावे ?''

उपस्थित-जनता की ओर से यह उत्तर मिलने पर कि—''हाँ! शुन्धध्वम्=**इसको शुद्ध करके वैदिक धर्म में प्रविष्ट कर लिया जावे।''** तदन्तर आगे शुद्धि-संस्कार प्रारम्भ करे।

शुद्धि के निमित्त देवप्रार्थना व मार्जन

पुरोहित नीचे लिखे मन्त्रों का शुद्धि-प्रार्थी व्यक्ति से उच्चारण कराके देव-प्रार्थना करावे। अर्थ भी संक्षेप में समझा देवे। मन्त्रों को बोलते समय शुद्धि-प्रार्थी के ऊपर कुछ जल के छींटे भी देता जावे—

ओं पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा॥१॥
ओं पवित्रेण पुनीहि मा शुक्रेण देव दीद्यत्।
अग्ने क्रत्वा क्रतूँऽ रनु॥२॥
ओं यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा।
ब्रह्म तेन पुनातु मा॥३॥
ओं पवमानः सोऽअद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः।
यः पोता स पुनातु मा॥४॥ —यजुः० १९।३९-४२

आचमन

पश्चात् निम्न तीन मन्त्रों से तीन आचमन करावें—

ओम् इदमापः प्रवहतावद्यं च मलं च यत्। यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्च शेपेऽअभीरुणम्। आपो मा तस्मादेनसः पवमानश्च मुञ्चतु॥१॥ इससे एक। —यजुः० ६।१७

ओम् आपोऽअस्मान् मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु। विश्वꣳहि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूतऽएमि। दीक्षातपसोस्तनूरसि॥२॥ इससे दूसरा। —यजुः० ४।२

और—

ओम् अरिप्रा आपो अप रिप्रमस्मत्। प्रास्मदेनो दुरितं सुप्रतीकाः प्र दुष्वप्न्यं प्र मलं वहन्तु॥ ३॥ —अथर्व० १०।५।२४

इससे तीसरा आचमन करें।

पुनः निम्न मन्त्रांशो से निम्न प्रकार अंगस्पर्श करें—

ओं वाङ् म आसन्। इस मन्त्र-खण्ड से मुख पर।

ओं नसोः प्राणः। इससे नासिका के दोनों छिद्रों पर।

ओं चक्षुरक्ष्णोः। इससे दोनों आँखों पर।

ओं श्रोत्रं कर्णयोः। इससे दोनों कानों पर।

ओं अपलिताः केशाः। इससे शिर-कपाल पर।

ओम् अशोणा दन्ताः। इससे दाँतों पर।

ओं बहु बाह्वोर्बलम्। इससे दोनों बाहुओं पर।

ओम् ऊर्वोरोजो जङ्घयोर्जवः। इससे दोनों जंघाओं पर।

ओं पादयोः प्रतिष्ठाः। इससे दोनों चरणों पर। और–

ओम् अरिष्टानि मे सर्वात्मानिभृष्टः॥ ४॥

—अथर्व० १९।६०।१, २

इससे सारे शरीर पर जल प्रेक्षण करें।

यज्ञोपवीत-धारण

तदन्तर शुद्धिप्रार्थी से निम्न वचन बुलवाये—

ओं ब्रह्मधर्ममागाम्। उप मा नयस्व॥

''हे विद्वन्! मैं 'ब्रह्मधर्म=आर्यधर्म', [वेदमत] को ग्रहण करता हूँ। मुझे उपनयन-सूत्र दीजिए।''

तत्पश्चात् पुरोहित निम्न मन्त्र से यज्ञोपवीत के अधिकारी, शुद्धिप्रार्थी के बाएँ कन्धे के ऊपर, कण्ठ के पास से सिर बीच में निकाल, दाहिने हाथ के नीचे बगल में निकाल, कटिप्रदेश तक यज्ञोपवीत धारण करावे—

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥ १॥
ओं यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि॥ २॥
सत्यधर्माय दृष्टये॥ ३॥

नाम-परिवर्तन

पश्चात् यदि शुद्ध्यर्थी का नाम परिवर्तन करना हो, तो उसकी इच्छानुसार कर दें।

प्रणव तथा गायत्री-मन्त्रोपदेश

साथ ही प्रणव व गायत्री-मन्त्र का उच्चारण करा, मन्त्र का अर्थ भी सुना व समझा दें—

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥१॥ —यजुः० ३६।३

यज्ञ-आरम्भ

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ प्रमाणे 'ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना' से लेकर आघारावाज्यभागाहुति पर्यन्त विधि करें।

प्रधान-होम

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य की आहुति दिलवावें—

ओं यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम्।
अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः स्वाहा॥१॥
ओं यदि दिवा यदि नक्तमेनाꣳसि चकृमा वयम्।
वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः स्वाहा॥२॥
ओं यदि जाग्रद्यदि स्वप्नऽएनाꣳसि चकृमा वयम्।
सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः स्वाहा॥३॥
ओं यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यदर्ये यदेनश्चकृमा वयं यदेकस्याधि धर्मणि तस्यावयजनमसि स्वाहा॥४॥

—यजुः० २०।१४-१७

उपर्युक्त मन्त्रों के पश्चात्, यदि कोई जन्म से वेद-विरोधी न हो, किसी कारणवश पतित [वेद-विरोधी ईसाई, यवन आदि मत में प्रविष्ट] हो गया हो, और वैदिकधर्मियों में प्रविष्ट होना चाहे, तो उससे संस्कारकर्त्ता ऋत्विक निम्नलिखित दो मन्त्रों का उच्चारण कराके एक-एक मन्त्र से एक-एक आहुति घृत व शाकल्य की दिलावें—

ओं यद्विद्वांसो यदविद्वांस एनांसि चकृमा वयम्।
यूयं नस्तस्मान्मुञ्चत विश्वे देवाः सजोषसः स्वाहा॥ १॥

—अथर्व० ६।११५।१

ओं यच्चक्षुषा मनसा यच्च वाचोपारिम जाग्रतो यत्स्वपन्तः।
सोमस्तानि स्वधया नः पुनातु स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० ६।९६।३

सत्यव्रत-ग्रहण अर्थात् व्रताहुति

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से घृत व शाकल्य की आहुति दिलायें—

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि स्वाहा॥ १॥ —यजुः० १।५

यज्ञ-समाप्ति

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ का शेष भाग पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके, महावामदेव्यगान से यज्ञ समाप्त करें।

मंगलकामना, अभ्यागत-सत्कार

पुनः शुद्ध हुआ व्यक्ति निम्न मन्त्र से परमेश्वर का उपस्थान कर, 'ब्राह्मधर्म'=वेदमत अर्थात् आर्यधर्म में स्थिर रहने का संकल्प करे—

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मेऽराधीदमहं
यऽएवाऽस्मि सोऽस्मि॥ —यजुः० २।२८

अर्थ—हे न्याययुक्त नियत कर्म के पालन करनेहारे! सत्यस्वरूप परमेश्वर! आपने जो कृपा करके मेरे इस व्रत को अच्छे प्रकार सिद्ध किया है, उसको मैंने पूरा किया है; आगे भी उसे करने में मैं समर्थ होऊँ। जो भी, जैसा भी मैं हूँ, हे परमात्मन्! तुम्हारे समक्ष हूँ। आप अनुग्रह कीजिए कि जैसा भी मैं हूँ, वैसा ही इस व्रत को निभाने में समर्थ होऊँ।

और सब सज्जन निम्न मन्त्र से उसे सत्कर्म में सदा स्थिर रहने की प्रेरणा करें—

ओं क्रतो स्मर। क्लिबे स्मर। कृतꣳस्मर॥ —यजुः० ४०।११

हे कर्मशील पुरुष! सदा ओम् निज नामवाले ईश्वर को स्मरता रह। अपने सामर्थ्य को भी स्मरते रहना। अपने अब तक के 'कृत' का भी स्मरण रखना कि उसे मैंने छोड़ दिया है।

ओम् अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा॥ —ऋ० ७।५७।४

हे प्रजाजनों! तुम्हारी 'सुमति' और 'निष्ठा' इसमें बनी रहे॥

ओं कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥
—यजुः० ४०।२

तत्पश्चात् शुद्ध हुआ व्यक्ति, धार्मिक गृहस्थ विद्वान् ऋत्विग् को प्रणाम कर, वस्त्रदान-दक्षिणा से उसका यथायोग्य सत्कार करे। फिर अन्य उपस्थित सज्जनों, व इष्ट-मित्र व बन्धु-बान्धवों को भी नमस्कार कर, उनका भी यथायोग्य सत्कार कर, सबको विदा करे। सबको चाहिए कि वे उसके साथ सदा और सर्वथा धर्मानुसार प्रीतिपूर्वक-यथायोग्य [समादर-समानता का] व्यवहार करें॥

इति शुद्धि-संस्कार-विधिः॥

उद्योग, व्यापार, वाणिज्य कल्प आदि

जब किसी व्यक्ति ने 'वाणिज्य' के लिए दुकान, कारखाना, शिल्प आदि व्यापार सम्बन्धी कार्य को प्रारम्भ करना हो तो उस दिन निम्न विधि करें—

यज्ञारम्भ

जो दिन पण्यस्थापन का निश्चित किया हो, उस दिन प्रात:काल यजमान शुद्ध सुगन्धित जल से स्नान कर, उत्तम स्वदेशी वस्त्र धारण कर, यज्ञवेदी में शुभासन पर, अपनी पत्नी को दक्षिण बाजू बैठा, बृहद् यज्ञ की ऋत्विग्वरण से लेकर आघारावाज्यभागाहुति-पर्यन्त सब क्रिया करें।

रयिमान् बनने का संकल्प

पश्चात् पुरोहित यजमान से निम्न मन्त्र बुलवावे—

ओं नाभिरहं रयीणां नाभिः समानानां भूयासम्॥ १॥
—अथर्व० १६।४।१

१. मैं धनों का केन्द्र अर्थात् निधि, और स्थितिवालों=सखा जनों में प्रमुख हो जाऊँ।

ओं मूर्धाहं रयीणा मूर्धा समानानां भूयासम्॥ २॥
—अथर्व० १६।३।१

२. मैं धनियों का सिरमौर, और समान गुण-कर्म-स्वभाववाले जनों में शिरोमणि बनूँ।

पश्चात् पुरोहित वणिक् यजमान को समझावे—

ओं शतहस्त समाहर सहस्रहस्त सं किर। कृतस्य कार्यऽस्य चेह स्फातिं समावह॥ ३ ॥ —अथर्व० ३।२४।५

३. हे दो हाथवाले पुरुष! तू सौ हाथवाला होकर धनैश्वर्य संगृहीत कर, परन्तु हज़ार हाथवाला बनकर त्याग कर। अपने 'कृत' और 'क्रियमाण' दोनों के उत्तम विस्तार=फल को अच्छी प्रकार प्राप्त कर। और—

ओम् उद्यानं ते पुरुष नावयानम्॥ ४॥ —अथर्व० ८।१।६

४. हे पुरुष! सदा तेरी उन्नति (व्यापार में वृद्धि) होवे, कभी अवनति (व्यापार में हानि) न हो।

ओं तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥५॥

ओं कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः॥ ६ ॥

—यजुः० ४०।१, २

ईश्वर का उपस्थान

पश्चात् निम्न मन्त्र से यजमान 'सब धनों के दाता' परमात्मा का उपस्थान करे—

ओं दिवो वा विष्णऽउत वा पृथिव्या महो वा विष्णऽ उरोरन्तरिक्षात्। उभा हि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणादोत सव्याद्विष्णवे त्वा ॥१॥ —यजुः० ५।१९

मुख्य होम मन्त्राः

पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत और शाकल्य की आहुति देवें—

ओम् अन्नानां पतये नमः स्वाहा॥१॥

ओं क्षेत्राणां पतये नमः स्वाहा॥२॥ —यजुः० १६।१८

ओम् औषधीनां पतये नमः स्वाहा॥३॥

ओं नमो मन्त्रिणे वाणिजाय स्वाहा॥४॥ —यजुः० १६।१९

ओं नमऽआयच्छद्भ्यो नमो विसृजद्भ्यः स्वाहा॥५॥

ओं नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च स्वाहा॥६॥

—यजुः० १६।२२, २३, ३२

ओं नमो द्विजाय च शूद्राय च पञ्चजनाय च स्वाहा॥ ७॥

ओम् इन्द्रमहं वणिजं चोदयामि स न ऐतु पुरएता नो अस्तु। नुदन्नरातिं परिपन्थिनं मृगं स ईशानो धनदा अस्तु मह्यं स्वाहा॥ ८ ॥

—अथर्व० ३।१५।१

ओं ये पन्थानो बहवो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति। ते मा जुषन्तां पयसा घृतेन यथा क्रीत्वा धनमाहराणि स्वाहा॥ ९ ॥

—अथर्व० ३।१५।२

ओं शुनं नो अस्तु प्रपणो विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं मा कृणोतु। इदं हव्यं संविदानौ जुषेथां शुनं नो अस्तु चरितमुत्थितं च स्वाहा॥ १० ॥ —अथर्व० ३।१५।४

ओं येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः। तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोऽ ग्ने सातघ्नो देवान्हविषा नि षेध स्वाहा॥ ११ ॥ —अथर्व० ३।१५।५

ओं येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः। तस्मिन्म इन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः स्वाहा॥ १२ ॥ —अथर्व० ३।१५।६

ओं पृणीयादिन्नाधमानाय तव्यान्द्राघीयांसमनु पश्येत पन्थाम्। ओ हि वर्तन्ते रथ्येव चक्रान्यमन्यमुप तिष्ठन्त रायः स्वाहा॥ १३ ॥

—ऋ० १०।११७।५

ओं मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य। नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी स्वाहा॥ १४ ॥ —ऋ० १०।११७।६

ओम् अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः। तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः स्वाहा॥ १५ ॥ —ऋ० १०।३४।१३

ओं पिबतं च तृष्णुतं चा च गच्छतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तं स्वाहा॥ १६ ॥ —ऋ० ८।३५।१०

ओं जयतं च प्र स्तुतं च प्र चावतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तं स्वाहा॥ १७॥ —ऋ० ८।३५।११

ओं हतं च शत्रून्यततं च मित्रिणः प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तं स्वाहा॥ १८ ॥ —ऋ० ८।३५।१२

ओम् एमं पन्थामरुक्षाम सुगं स्वस्तिवाहनम्। यस्मिन्वीरो न रिष्यत्यन्येषां विन्दते वसु स्वाहा॥ १९ ॥ —अथर्व० १४।२।८

ओम् अक्रन् कर्म कर्मकृतः सह वाचा मयोभुवा। देवेभ्यः कर्म कृत्वास्तं प्रेत सचाभुवः स्वाहा॥२०॥ —यजुः० ३।४७

ओं पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरापत। वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज शतक्रतो स्वाहा॥२१॥ —यजुः० ३।४९

ओं देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि ते दधे। निहारं च हरासि मे निहारं निहराणि ते स्वाहा॥२२॥ —यजुः० ३।५०

पापी-लक्ष्मी-निवारण होम

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत और शाकल्य की आहुति दें—

ओम् अनृणा अस्मिन्ननृणाः परस्मिन्तृतीये लोके अनृणाः स्याम। ये देवयानाः पितृयाणाश्च लोकाः सर्वान्पथो अनृणा आ क्षियेम स्वाहा॥ १ ॥ —अथर्व० ६।११७।३

ओं प्र पतेतः पापि लक्ष्मि नश्येतः प्रामुतः पत। अयस्मयेनाङ्केन द्विषते त्वा सजामसि स्वाहा॥ इदं लक्ष्म्यै—इदं न मम॥ १ ॥

—अथर्व० ७।११५।१

ओं या मा लक्ष्मीः पतयालूरजुष्टाभिचस्कन्द वन्दनेव वृक्षम्। अन्यत्रास्मत्सवितस्तामितो धा हिरण्यहस्तो वसु नो रराणः स्वाहा॥ इदं लक्ष्म्यै—इदं न मम॥ २ ॥ —अथर्व० ७।११५।२

ओम् एकशतं लक्ष्म्यो मर्त्यस्य साकं तन्वा जनुषोऽधि जाताः। तासां पापिष्ठा निरितः प्र हिण्मः शिवा अस्मभ्यं जातवेदो नि यच्छ स्वाहा॥ इदं लक्ष्म्यै—इदं न मम॥ ३ ॥ —अथर्व० ७।११५।३

ओम् एता एना व्याकरं खिले गा विष्ठिताइव। रमन्तां पुण्या लक्ष्मीर्याः पापीस्ता अनीनशं स्वाहा॥ इदं लक्ष्म्यै—इदं न मम॥ ४ ॥

—अथर्व० ७।११५।४

ओम् अनृणा अस्मिन्ननृणाः परस्मिन्तृतीये लोके अनृणाः स्याम। ये देवयानाः पितृयाणाश्च लोकाः सर्वान्पथो अनृणा आ क्षियेम स्वाहा॥ १ ॥ —अथर्व० ६।११७।३

स्थालीपाकाहुति

तत्पश्चात् निम्न दो मन्त्रों से स्थालीपाक की दो आहुति दें—

ओं यन्मे किञ्चिदुपेप्सितमस्मिन् कर्मणि वृत्रहन्।
तन्मे समृध्यतां सर्वं जीवितः शरदः शतं स्वाहा॥ १ ॥
ओं सम्पत्तिर्भूमिर्वृष्टिर्ज्यैष्ठ्यं श्री प्रजामिहावतु स्वाहा॥ २ ॥

—पार० गृ० २।१७

यज्ञ समाप्ति

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ का पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करें। यज्ञ समाप्ति पर महावामदेव्यगान करें।

मंगल-कामना

तत्पश्चात् वणिक् अर्थात् यजमान परमात्मा का स्मरण कर निम्न मन्त्रों से उससे मंगल की कामना करे—

ओम् अथा नो विश्वा सौभगान्यावह॥ १ ॥ —ऋक्०॥

हे भगवन्! हमें 'ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य= अनासक्ति' रूप सौभाग्य प्राप्त कराइए।

ओं कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः। गोजिद्भूयासमश्वजिद्धनंजयो हिरण्यजित्॥ २ ॥ —अथर्व० ७।५०।८

हे भगवन्! (कृतम्) किया हुआ धर्मानुकूल पुरुषार्थ (मे दक्षिणे हस्ते) मेरे दाहिने हाथ में, और (जयः) तेरे अनुग्रह से उसकी सफलता (मे सव्य आहितः) मेरे बाएँ हाथ में स्थित हो। मैं (गोजित्) भूमि अथवा गवादि पशु जीतनेवाला, (अश्वजित्) राष्ट्र अथवा अश्वादि वाहन प्राप्त करनेवाला, (धनञ्जयः) धन को जीतनेवाला, तथा (हिरण्यजित्) हितकारी रमणीय सुवर्णादि जीतनेवाला (भूयासम्) तेरी कृपा से रहूँ/होऊँ/बनूँ।

ओं सोमो अस्मभ्यं काम्यं बृहन्तं रयिं ददातु वीरवन्तमुग्रम्॥

—ऋ० ९।९७।२१

सोम-गुण-सम्पन्न परमात्मा हमारे लिए कमनीय, बड़े धन को देवे, जो कि तेजस्वी सन्तानों को बनानेवाला हो।

ओं वसुमद्धिरण्यवत् वयं स्याम भुवनेषु जीवसे॥ ४॥

—साम० उत्त० २। मं० ३ (४)

हे भगवन्! हम आपकी कृपा से इस संसार में धन-धान्य, ऐश्वर्य से परिपूर्ण हों, और दीर्घजीवी हों।

जाते समय सब लोग निम्न मन्त्रों से यजमान के लिए मंगलकामना करें—

ओम्....इषमूर्जं यजमानाय धेहि॥ ५ ॥ —यजुः० १२।५८

हे परमेश्वर! इस यजमान को धन-धान्य और बल से युक्त करो।

ओम् इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे। पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्॥ ६ ॥

—ऋ० २।२१।६

हे ऐश्वर्यशाली परमात्मन्! इस यजमान के लिए उत्तम धन, चतुर पुरुष की बुद्धि, सौभाग्य, धनों की वृद्धि, शारीरिक नीरोगता अर्थात् उत्तम आरोग्य, मधुरवाणी और अच्छे दिन आपकी कृपा से प्राप्त हों॥

इति वाणिज्यकल्प-विधिः॥

शाला कर्म विधि

'शाला' उसको कहते हैं—जो मनुष्य और पश्वादि के रहने अथवा पदार्थ रखने के अर्थ गृह वा स्थान-विशेष बनाते हैं। मनुष्यों के निवास व अन्य लौकिक नाना व्यवहार साधने के लिए स्थानविशेष बनाए जाते हैं। निवास के निमित्त **गृह**; विद्याध्ययन व अन्वेषणादि के निमित्त **कलाशाला**, **महाविद्यालय**, **ग्रन्थालय** आदि; पूजा व धर्म-कर्म के निमित्त **मन्दिर** आदि; जनसामान्य के विश्राम व सामाजिक कर्म आदि के निमित्त **धर्मशाला**, **विवाहस्थल**, **नगर-भवन** [=टाउन हाल], **प्रपा** [प्याऊ] **चिकित्सालय** आदि; खान-पान, आमोद-प्रमोद आदि के निमित्त **भोजनालय** [होटल], **विश्रान्तिगृह**, **नाट्य-भवन** आदि; राज्य-शासनादि कर्मों के निमित्त **सचिवालय**, **विधानभवन**, **संसदभवन** आदि; और इसी प्रकार नाना प्रकार के व्यापारादि के निमित्त **कारखाना**, **दुकान**, **औषधालय** आदि विविध शालाएँ बनाई जाती हैं।

शाला-निर्माण से सम्बद्ध दो प्रकार के कर्म होते हैं। प्रथम—प्रारम्भ करते समय 'शिलान्यास'; और द्वितीय—शाला बन जाने पर **गृह-प्रतिष्ठा व गृह-प्रवेश** दोनों की विधियाँ इस प्रकार हैं—

१. शिलान्यास-विधिः

भूमि-शोधन

सर्वप्रथम निम्न प्रकार से भूमिशोधन करे-करावे—

१. खननात्—कुदाली, सब्बल, फावड़ा आदि द्वारा खोदने से।

२. दहनात्—वहाँ के घास-फूँस को अग्नि द्वारा जलाने से।

३. अभिमर्शनात्—तीर्थ अर्थात् पवित्र नदियों के जलों द्वारा मन्त्रपूर्वक हाथ से छिड़काव करने से; अथवा मृत्तिका (मिट्टी) को हाथों से ऊपर-नीचे कर, उसमें से पत्थर आदि निकाल देने से।

४. गोभिराक्रमणात्—गौओं को उस भूमि पर कुछ समय बैठाने से। और—

५. उपलेपनात्—गोमय-लेपन से।

यज्ञ आरम्भ

जिस दिन शाला का निर्माण प्रारम्भ करना हो, उस दिन सर्वप्रथम **'शिलान्यास'** या **'शिला स्थापन'** किया जाता है। किसी धार्मिक विद्वान् वयोवृद्ध से शिलान्यास कराना चाहिए। उस दिन प्रातः सूर्योदय के समय, उस शोधित स्थल पर यज्ञ-मण्डप तैयार करके बृहद् यज्ञ अन्तर्गत **संकल्प-पाठ, ऋत्विग्वरण** से लेकर **आघारावाज्यभागाहुति** पर्यन्त सब विधि पूर्ण करें। यजमान सपत्नीक यज्ञ में वेदी पर पश्चिम दिशा में पूर्वाभिमुख बैठे। पत्नी पति के दक्षिण बाज़ू में बैठे।

जलप्रसेचन, शिलान्यास या शिलास्थापना

तत्पश्चात् कार्यकर्त्ता गृहपति इष्टमित्र हितैषी बन्धुबान्धवों के सहित जहाँ शिला=पत्थर रखना हो, वहाँ आवे। सर्वप्रथम **ओं नमो मात्रे पृथिव्यै** (यजुः० ९।२२) कह, उस स्थान के मूल में निम्न चार मन्त्रों से शुद्ध जल या नारियल के जल से सेचन करे—

ओम् इमामुच्छ्रयामि भुवनस्य नाभिं वसोर्द्धारां प्रतरणीं वसूनाम्। इहैव ध्रुवां निमिनोमि शालां क्षेमे तिष्ठतु घृतमुक्षयमाणा॥ १॥ —पार०गृ०सू० ३।४।४

इस मन्त्र से पूर्व भाग में।

ओम अश्वावती गोमती सूनृतावत्युच्छ्रयस्व महते सौभगाय। आ त्वा शिशुराक्रन्दत्वा गावो धेनवो वाश्यमानाः॥ २॥

—पार०गृ०सू० ३।४।४

इस मन्त्र से दक्षिण भाग में।

ओम् आ त्वा कुमारस्तरुण आ वत्सो जगदैः सह। आ त्वा परिस्रुतः कुम्भ आ दध्नः कलशैरुप। क्षेमस्य पत्नी बृहती सुवासा रयिं नो धेहि सुभगे सुवीर्यम्॥ ३॥ —पार०गृ०सू० ३।४।४

इस मन्त्र से पश्चिम भाग में। और—

ओम् अश्वावद् गोमदूर्जस्वत् पर्णं वनस्पतेरिव। अभि नः पूर्यताꣳ रयिरिदमनुश्रेयो वसानः॥ ४॥ —पार०गृ०सू० ३।४।४

इस मन्त्र से उत्तर-भाग के सामने जल छिड़कावे। पश्चात् घर के बड़े=पितृजन भी वहाँ जलसेचन करें।

पश्चात् उस स्थान-विशेष पर, स्वयं यजमान [अथवा शिलान्यास करनेवाला पुरुष, अर्थात् जिससे पत्थर रखवाना हो, वह] पहले सीमेण्ट-रेत-रोड़ी या चूना-रोड़ी-मिला पदार्थ वहाँ डाले। फिर यदि ऐसी पेटिका बनी हो, जिसमें वेदचतुष्टय आदि बन्द किये गए हों, तथा गृह-परिचय-पत्रिका वा परिवार-चित्र हों, उसको [वायु-अग्नि-जल-मृत्तिका से सुरक्षित अविकारी बना] उस स्थान पर रक्खें। यह पेटिका अच्छी तरह से बन्द होना चाहिए, ताकि उसके अन्दर जल या वायु के प्रवेश सर्वथा न हो सके। पश्चात् उस पर पुनः सीमेण्ट-रेता-रोड़ी-मिश्रित माल डालें। पश्चात् निम्न मन्त्रों से 'भूमि-पूजन' करें—

ओं स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी॥ १॥

—यजुः० ३५।२१

ओं दृꣳहस्व देवि पृथिवि स्वस्तये॥ २॥ —यजुः० ११।६९

ओं ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं जगत्। ध्रुवासः पर्वता इमे शालामिमां ध्रुवां कुरु॥ ३॥

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र बोलकर शिलान्यास करें—

ओं स्योनं ध्रुवं प्रजायै धारयामि तेऽ श्मानं देव्याः पृथिव्या उपस्थे। तमा तिष्ठानुमाद्या सुवर्चा दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु॥ ४॥ —अथर्व० १४।१।४७

तत्पश्चात् सब लोग यज्ञ-स्थान पर आकर बैठ जावें। यजमान दम्पती **बृहद् यज्ञ की समस्त क्रियाएँ (पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर) सम्पन्न करें**। फिर इन मन्त्रों से आहुतियाँ देवें—

मुख्य होम मन्त्राः

ओम् उपमितां प्रतिमितामथो परिमितामुत। शालाया विश्ववाराया नद्धानि वि चृतामसि स्वाहा॥ १॥

—अथर्व० ९।३।१

ओं हविर्धानमग्निशालं पत्नीनां सदनं सदः। सदो देवानामसि देवि शाले स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० ९।३।७

ओम् अन्तरा द्यां च पृथिवीं च यद् व्यचस्तेन शालां प्रति गृह्णामि त इमाम्। यदन्तरिक्षं रजसो विमानं तत्कृण्वेऽहमुदरं शेवधिभ्यः। तेन शालां प्रति गृह्णामि तस्मै स्वाहा॥ ३॥

—अथर्व० ९।३।१५

ओम् ऊर्जस्वती पयस्वती पृथिव्यां निमिता मिता। विश्वान्नं बिभ्रती शाले मा हिंसीः प्रतिगृह्णतः स्वाहा॥ ४॥

—अथर्व० ९।३।१६

ओं ब्रह्मणा शालां निमितां कविभिर्निमितां मिताम्। इन्द्राग्नी रक्षतां शालाममृतौ सोम्यं सदः स्वाहा॥ ५॥

—अथर्व० ९।३।१९

ओं या द्विपक्षा चतुष्पक्षा षट्पक्षा या निमीयते। अष्टापक्षां दशपक्षां शालां मानस्य पत्नीमग्निर्गर्भ इवा शये स्वाहा॥ ६॥

—अथर्व० ९।३।२१

ओं प्रतीचीं त्वा प्रतीचीनः शाले प्रैम्यहिंसतीम्। अग्निर्ह्यन्तरापश्चर्तस्य प्रथमा द्वाः स्वाहा॥ ७॥ —अथर्व० ९।३।२२

ओं मा नः पाशं प्रति मुचो गुरुर्भारो लघुर्भव। वधूमिव त्वा शाले यत्रकामं भरामसि स्वाहा॥ ८॥ —अथर्व० ९।३।२३

यज्ञ-समाप्ति

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ का पूर्णाहुति प्रकरण श्रद्धापूर्वक पूरा करके महावामदेव्यगान का गायन करें, तथा यजमान के लिए इन मन्त्रों से **मंगलकामना** करें।

ओम् इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे। पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्॥

—ऋ० २।२१।६

ओं सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ओं स्वस्ति ओं स्वस्ति, ओं स्वस्ति।

२. गृह प्रवेश कर्म विधि

जब शाला या घर बन चुके तब [सबसे प्रथम] घर की शुद्धि-सफाई अच्छे प्रकार करा, चारों दिशाओं में बाहर के द्वारों में चार वेदी, और एक वेदी घर के मध्य में बनावें।

नियत आसनों पर ऋत्विज, अध्वर्यु और ब्रह्मा को बिठा कर गृहपति यजमान पत्नी सहित पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठे। पत्नी पति के दक्षिण बाज़ू में बैठे।

ध्वज-स्थापन

पश्चात् निष्क्रम्यद्वार, जिस द्वार से मुख्यतः निकलना और प्रवेश करना होवे, अर्थात् जो मुख्य द्वार हो, उसके समीप ब्रह्मा-सहित यजमान बाहर ठहरकर **'ओं भूर्भुवः स्वः'** इस मन्त्र का उच्चारण करके, द्विज अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य के घर से लाई अग्नि को, अथवा—वहीं घृत का दीपक जला, उससे कपूर में लगा, उस अग्नि को किसी पात्र [या इसी प्रयोजन के लिए निर्मित छोटे हवनकुण्ड] में धर, उसमें छोटी-छोटी लकड़ी लगाके यजमान और पुरोहित उस पात्र या हवनकुण्ड को दोनों हाथों से उठा इस मन्त्र से एक आहुति दे—

ओम् अच्युताय भौमाय स्वाहा॥ १ ॥ —पार० गृ० ३।४।३

फिर निम्न मन्त्र से परमेश्वर का उपस्थान कर, ध्वजा का स्तम्भ, जिसमें ओम्-ध्वजा लगाई हो, खड़ा करे। और घर के ऊपर चारों कोणों पर वैसी ही चार ध्वजा खड़ी करे। तथा कार्यकर्त्ता गृहपति स्तम्भ खड़ा करके उसके मूल में शुद्ध जल या [नारियल के जल] से सेचन करे, जिससे वह दृढ़ जमी रहे।

ओम् आदित्या रुद्रा वसवः सुनीथा द्यावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम्। सजोषसो यज्ञमवन्तु देवा ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम्॥ २ ॥ —ऋ० ३।८।८

पुनः पूर्व द्वार के सामने बाहर जाकर—

ओम् इमामुच्छ्रयामि भुवनस्य नाभिं वसोर्धारां प्रतरणीं वसूनाम्। इहैव ध्रुवां निमिनोमि शालां क्षेमे तिष्ठतु घृत-मुक्षयाणा॥ १ ॥

इस मन्त्र से पूर्व द्वार के सामने,

ओम् अश्वावती गोमती सूनृतावत्युच्छ्रयस्व महते सौभगाय। आत त्वा शिशुराक्रन्दत्वा गावो धेनवो वाश्यमाना॥ २ ॥

इस मन्त्र से दक्षिण-द्वार के सामने,

ओम् आ त्वा कुमारस्तरुणा आ वत्सो जगदैःसह। आ त्वा परिस्रुतः कुमम्भ आ दध्नः कलशैरुप। क्षेमस्य पत्नी बृहती सुवासा रयिं नो धेहि सुभगे सुवीर्यम्॥ ३ ॥

इस मन्त्र से पश्चिम-द्वार के सामने, और—

ओम् अश्वावद् गोमदूर्जस्वत् पर्णं वनस्पतेरिव। अभि नः पूर्यतां रयिरिदमनुश्रेयो वसानः॥ ४॥

इस मन्त्र से उत्तर-द्वार के सामने जल छिटकावे।

—पारस्कर गृह्यसूत्र ३।४।४

गृह-प्रवेश

तत्पश्चात् सब द्वारों पर पुष्प और पल्लव तथा कदली-स्तम्भ वा कदली के पत्ते भी द्वारों की शोभा के लिए लगाके, पश्चात् गृहपति—

हे ब्रह्मन्! प्रविशामि॥ ५ ॥ ऐसा वाक्य बोले और ब्रह्मा—

वरं भवान् प्रविशतु॥ ६ ॥ ऐसा प्रत्युत्तर देवे और—

ब्रह्मा की अनुमति से यजमान—

ओम् ऋचं प्रपद्ये शिवं प्रपद्ये॥ ७॥ —यजुः० ३६।१

इस वाक्य को बोलकर मुख्य द्वार से भीतर प्रवेश करे। उस समय, गोघृत गरम कर, छानकर, सुगन्ध मिलाकर रखा हो, उसको पात्र में लेके, जिस द्वार से प्रथम प्रवेश करे, उसी द्वार से [उष्ण घृत सहित] प्रवेश करके—

चतुर्दिक-वेदियों में यज्ञ-प्रारम्भ

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ की विधि में लिखे अनुसार स्विष्टकृत् आहुतिपर्यन्त सब विधि, चारों दिशाओं में निर्मित द्वारस्थ वेदियों में करें।

पूर्वद्वारस्थ वेदी के उत्तर-भाग में कलश-स्थापन

पुनः पूर्वदिशास्थ द्वारस्थ वेदी में अग्नि को प्रज्वलित करके, उसी वेदी के उत्तर-भाग में एक कलश स्थापन कर पृ० ७० में लिखे

प्रमाणे स्थालीपाक बनावे।

मध्यशालास्थ वेदी में अग्न्याधान

पश्चात् पृथक् अर्थात् स्वयं गृहपति, निष्क्रम्यद्वार के समीप जा ठहरकर, ब्रह्मादि [ऋत्विग्-गण] सहित मध्यशाला में प्रवेश करके, यथाविधि ब्रह्मादि को दक्षिणादि आसनों पर [यथाभिमुख] बैठा, स्वयं पत्नी को दक्षिण बाजू कर, पूर्वाभिमुख बैठ के यथाविधि आचमन, अङ्गस्पर्श करके—

ओं भूर्भुवः स्वः ॥ मन्त्र से अग्नि प्रदीपन कर—

ओं भूर्भुवः स्वुर् द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे॥१॥
—यजुः० ३।५

इस मन्त्र से अग्न्याधान कर, निम्न मन्त्र पढ़के अग्नि को प्रदीप्त करें—

ओं उद् बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥२॥ —यजुः० १५।५४

तत्पश्चात् त्रिसमिदाधान से लेकर बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत आघारावाज्यभागाहुतयः तक समस्त क्रियाएँ श्रद्धापूर्वक सम्पन्न करे।

चतुर्दिक कुण्डों में विशेष आहुतियाँ

पुनः पूर्वदिशास्थ वेदी के समीप आ, अग्नि को प्रज्वलित कर, उस कुण्ड में निम्न दो मन्त्रों से एक-एक मन्त्र करके दो घृताहुति देवे—

ओं प्राच्या दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा ॥ १ ॥
ओं देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः स्वाहा ॥ २ ॥

पुनः वैसे ही निम्न दो मन्त्रों से दक्षिण-दिशा-द्वारस्थ वेदी में—

ओं दक्षिणाया दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा ॥ १ ॥
ओं देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः स्वाहा ॥ २ ॥

पुनः वैसे ही निम्न दो मन्त्रों से पश्चिम-दिशा-द्वारस्थ वेदी में—

ओम् प्रतीच्या दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा ॥ १ ॥
ओं देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः स्वाहा ॥ २ ॥

पुनः वैसे ही दो मन्त्रों से उत्तर-दिशा-द्वारस्थ वेदी में—

ओम् उदीच्या दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा ॥ १ ॥
ओं देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः स्वाहा ॥ २ ॥

मध्यशालास्थ वेदी में विशेष आहुतियाँ

पुनः मध्यशालास्थ वेदी के समीप जाके, स्व-स्व दिशा में यजमान और सब ऋत्विक् बैठके निम्न तीन मन्त्रों से मध्य वेदी में आज्याहुति [तथा शाकल्य की आहुति] देवें—

ओं ध्रुवाया दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा ॥ ओं देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः स्वाहा ॥ १ ॥

ओम् ऊर्ध्वाया दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा ॥ ओं देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः स्वाहा ॥ २ ॥

ओं दिशोदिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा ॥ ओं देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः स्वाहा ॥ ३ ॥

गृह की मध्यशाला में विशेष यज्ञ

तत्पश्चात् संसृत घी अर्थात् जो गरम कर छान, जिसमें कस्तूरी आदि सुगन्ध मिलाया हो, पात्र में लेके सब ऋत्विजों के सामने एक-एक पात्र भरके रखें और निम्न मन्त्रों से चार आज्याहुति देवें—

ओं वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः। यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे स्वाहा ॥ १ ॥ —ऋ० ७।५४।१

ओं वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो। अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान्प्रति नो जुषस्व स्वाहा ॥ २ ॥
—ऋ० ७।५४।२

ओं वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या। पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः स्वाहा ॥ ३ ॥
—ऋ० ७।५४।३

ओम् अमीवहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्याविशन्। सखा सुशेव एधि नः स्वाहा ॥ ४ ॥ —ऋ० ७।५५।१

मध्यवेदी में स्थालीपाक की आहुतियाँ

जो स्थालीपाक अर्थात् भात बनाया हो, उसको दूसरे कांसे के पात्र में लेके, उस पर यथायोग्य घृत सेचन करके, अपने-अपने

सामने रखें, और पृथक्-पृथक् थोड़ा-थोड़ा लेकर निम्न छह मन्त्रों से उसकी मध्यवेदीस्थ कुण्ड में छह आहुतियाँ देवें—

ओम् अग्निमिन्द्रं बृहस्पतिं विश्वाँश्च देवानुपह्वये। सरस्वतीञ्च वाजीञ्च वास्तु मे दत्त वाजिनः स्वाहा॥ १॥

ओं सर्प देवजनान्त्सर्वान् हिमवन्तं सुदर्शनम्। वसूँश्च रुद्रानादित्यानीशानं जगदैः सह। एतान्त्सर्वान् प्रपद्येऽहं वास्तु मे दत्त वाजिनः स्वाहा॥ २॥

ओं पूर्वाह्णमपराह्णं चोभे मध्यन्दिना सह। प्रदोषमर्धरात्रं च व्युष्टां देवी महापथाम्। एतान्त्सर्वान् प्रपद्येऽहं वास्तु मे दत्त वाजिनः स्वाहा॥ ३॥

ओं कर्तारञ्च विकर्तारं विश्वकर्माणमोषधीश्च वनस्पतीन्। एतान्त्सर्वान् प्रपद्येऽहं वास्तु मे दत्त वाजिनः स्वाहा॥ ४॥

ओं धातारं च विधातारं निधीनां च पतिं सह। एतान्त्सर्वान् प्रपद्येऽहं वास्तु मे दत्त वाजिनः स्वाहा॥ ५॥

ओं स्योनं शिवमिदं वास्तु दत्तं ब्रह्मप्रजापती। सर्वाश्च देवताश्च स्वाहा॥ ६॥ —पार० गृ० ३।४।८

'पत्र-तृण-गोमय-मधु-यव मिश्रित' पदार्थ से चतुर्दिक् प्रोक्षण

कांस्यपात्र में उदुम्बर=गूलर और पलाश के पत्ते, शाड्वल=तृण-विशेष गोमय, दही, मधु, घृत, कुशा और यव को लेके उन सब वस्तुओं को मिलाकर गृहपति वेदी से उठकर बाहर जाकर—

ओं श्रीश्च त्वा यशश्च पूर्वे संधौ गोपायेताम्॥ १॥

इस मन्त्र से पूर्व-द्वार,

ओं यज्ञश्च त्वा दक्षिणा च दक्षिणे संधौ गोपायेताम्॥ २॥

इस मन्त्र से दक्षिण-द्वार,

ओम् अन्नञ्च त्वा ब्राह्मणश्च पश्चिमे संधौ गोपायेताम्॥ ३॥

इस मन्त्र से पश्चिम-द्वार, और—

ओम् ऊर्क् च त्वा सूनृता चोत्तरे संधौ गोपायेताम्॥ ४॥

इससे उत्तर-द्वार के समीप उनको बिखेरे और जल-प्रोक्षण करे।

परमेश्वर का उपस्थान

ओम् अग्निः केताऽऽआदित्यः सुकेता, तौ प्रपद्ये, ताभ्यां नमोऽस्तु, तौ मा पुरस्ताद् गोपायेताम्॥ १॥

—पार० गृह्य० ३।४।१४

इससे पूर्व दिशा में पूर्वाभिमुख हो परमात्मा का उपस्थान करके,

ओम् अहः गोपायमानं रात्री रक्षमाणा, ते प्रपद्ये, ताभ्यां नमोऽस्तु, ते मा दक्षिणतो गोपायेताम्॥ २॥

इससे दक्षिण-द्वार के सामने दक्षिणाभिमुख होके जगदीश का उपस्थान करके,

ओम् अन्नं दीदिविः प्राणो जागृविः, तौ प्रपद्ये, ताभ्यां नमोऽस्तु, तौ मा पश्चात् गोपायेताम्॥ ३॥

इससे पश्चिम-द्वार के सामने पश्चिमाभिमुख होके [अन्नपति] सर्वरक्षक परमात्मा का उपस्थान करके,

ओम् चन्द्रमा अस्वप्नो वायुरनवद्राणः, तौ प्रपद्ये, ताभ्यां नमोऽस्तु, तौ मोत्तरतो गोपायेताम्॥ ४॥

—पार० गृह्य० ३।४।१५-१७

इससे उत्तर-द्वार के सामने उत्तराभिमुख खड़े रहके, शान्तिदाता परमेश्वर का उपस्थान करे।

ओं धर्मस्थूणाराजः श्रीसूर्यामहोरात्रे द्वारफलके। इन्द्रस्य गृहा वसुमन्तो वरूथिनस्तानहं प्रपद्ये सह प्रजया पशुभिस्सह। यन्मे किञ्चिदस्त्युपहूतः सर्वगणः सखा यः साधुसंमतस्तां त्वा शाले नमोऽस्तु अरिष्टवीरा गृहा नः सन्तु सर्वतः॥ ५॥

इस मन्त्र से चारों दिशाओं में उत्तराभिमुख ही खड़ा रहके, सर्वाधिष्ठाता परमात्मा का उपस्थान करे।

यज्ञ-समाप्ति, पूर्णाहुति

तत्पश्चात् मध्यशाला में जो वेदी हो, वहाँ आकर समिधाओं से अग्नि को प्रदीप्त कर, दैनिक यज्ञ तथा पूर्णाहुति प्रकरण बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत पूरा करें।

पुनः सामवेदोक्त महावामदेव्यगान करके, सुपात्र वेदवित् धार्मिक होता आदि सपत्नीक ब्राह्मण, तथा इष्ट-मित्र और सम्बन्धियों को

उत्तम भोजन करा, यथायोग्य सत्कार करके, ऋत्विजों को दक्षिणा दें, पुरुषों को पुरुष और स्त्रियों को स्त्री प्रसन्नतापूर्वक विदा करें। और वे जाते समय गृहपति और गृहपत्नी आदि को आशीर्वाद दें।

ओम् इमे गृहा मयोभुव ऊर्जस्वन्तः पयस्वन्तः।
सर्वे भवन्तोऽत्राऽऽनन्दिताः सदा भूयासुः॥

आप सब यहाँ इस सुखदायी, सजीव और दूध-भरे घर में 'अभ्युदय और निःश्रेयस' को प्राप्त करें।

ओं सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिः।
ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितो जनः॥

—ऋ० ७।५५।५

अर्थ—इस घर में माता-पिता, कुत्ता व रखवाला, घरवालों का बड़ा रक्षक बुजुर्ग, सब सम्बन्धी जन, और अड़ोस-पड़ोस के लोग सुख की नींद सोवें।

—:०:—

उपवन, बाग़, बगीचा स्थापन

शिलान्यास विधि के अनुसार ही सारे कार्य करें। पूर्णाहुति प्रकरण से पूर्व निम्न मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ और दें—

ओम् आयने ते परायणे दूर्वा रोहन्तु पुष्पिणीः।
उत्सो वा तत्र जायतां ह्रदो वा पुण्डरीकवान् स्वाहा॥ १॥

—अथर्व० ६।१०६।१

ओम् अपामिदं न्ययनं समुद्रस्य निवेशनम्।
मध्ये ह्रदस्य नो गृहाः पराचीना मुखा कृधि स्वाहा॥ २॥

—अथर्व० ६।१०६।२

ओं हिमस्य त्वा जरायुणा शाले परि व्ययामसि।
शीतह्रदा हि नो भुवोऽग्निष्कृणोतु भेषजं स्वाहा॥ ३॥

—अथर्व० ६।१०६।३

प्रपा, अर्थात् प्याऊ, वापी, कूप (कुआँ) या तालाब की स्थापना/उद्घाटन विधि

बृहद यज्ञ की विधि के अनुसार सब क्रियाएँ आघारावाज्य-भागाहुति-पर्यन्त करके निम्न मन्त्रों से घृत व होमशाकल्य से आहुति दें।

ओम् ऊर्जस्वती पयस्वती पृथिव्यां निमिता मिता।
विश्वान्नं बिभ्रती शाले मा हिंसीः प्रतिगृह्णतः स्वाहा॥ १॥

—अथर्व० ९।३।१६

ओम् अप्स्व१न्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये।
देवा भवत वाजिनः स्वाहा॥ २॥ —ऋ० १।२३।१९

ओं पयः पृथिव्यां पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् स्वाहा॥ ३॥

—यजुः० १८।३६

ओं यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः।
उशतीरिव मातरः स्वाहा॥४॥ —यजुः० ३६।१५

ओं तस्माऽअरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा च नः स्वाहा॥५॥ —यजुः० ३६।१६

ओं समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि।
सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः स्वाहा॥ ६॥

—अथर्व० ३।३०।६

इसके पश्चात् बृहद यज्ञ का शेष भाग (पूर्णाहुति प्रकरण) पूरा करके, प्रपा का उद्घाटन इस प्रकार करें—

गृहपति यजमान, उद्घाटनकर्त्ता व ब्रह्मा-सहित, 'प्रपा' के उस पार्श्व में जावे, जिस पर पानी पिलाने का प्रबन्ध हो। इस समय इष्टमित्र बन्धुजन भी साथ जावें। पश्चात् निम्न मन्त्र बोलकर—

ओं देवा ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम्॥ —ऋ० ३।८।८

उद्घाटनकर्त्ता ध्वजारोहण करे। कार्यकर्त्ता यजमान समीप में जल सेचन कर॥ पश्चात् यजमान व उद्घाटनकर्त्ता—

हे ब्रह्मन्! उद्घाटयामि॥ ऐसा वचन कहे, और ब्रह्मा—
वरं भवान् उद्घाटयतु॥ इस वचन से अनुज्ञा देवे,
और उद्घाटनकर्त्ता—
ओं ऋचं प्रपद्ये, शिवं प्रपद्ये, जीवनं प्रपद्ये॥

मैं ज्ञान-रस को प्राप्त करूँ; आनन्दरस को प्राप्त करूँ; जीवनरस को प्राप्त करूँ (तु०—यजुः० २०।२२)।

इस वचन को बोलकर उद्घाटन करे, और स्वयं सब को पानी पिलावे। सब जन निम्न मन्त्र को बोलते हुए जल-पान करें—

ओम् आपो अद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि। पयस्वानग्न आ गहि तं मा सं सृज वर्चसा॥ १॥ —ऋ० १।२३।२३

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये। शँयोरभि स्रवन्तु नः॥२॥ —यजुः० ३६।१२

१. आज हमने जलों का अनुकूल प्रयोग किया है। इनके आनन्ददायक रस का अच्छे प्रकार पान किया है। जल से मिली हे जीवनाग्ने! तू मुझे प्राप्त हो, और तेज व दीप्ति से भली प्रकार मुझे युक्त कर।

२. ये दिव्य गुण-युक्त जल हमारे अभीष्टों की पूर्ति और पालन के लिए शान्तिदायक होवे, और ये दुःखशमन व रोगनिवारण के लिए चारों ओर झरते-बरसते-बहते रहें।

सभी उपस्थित जन प्रपा बनानेवाले का—
ओं सत्या सफलाः सन्तु यजमानस्य कामाः॥
ओं शमस्तु, भद्रमस्तु, कल्याणमस्तु।
कहकर धन्यवाद करें, और प्रपा स्थापित करनेवाला व्यक्ति सब उपस्थित जनों को सम्मानसहित विदा करे॥

गौशाला स्थापना एवं उद्घाटन विधि

यथाविधि बृहद यज्ञ करें, किन्तु पूर्णाहुति प्रकरण से पूर्व निम्न मन्त्र से गौ माता की स्तुति करें। गोघृत से ही यज्ञ, गौ दुग्ध से खीर (स्थालीपाक) और प्रसाद में गो दुग्ध से बने पदार्थ वितरित किये जायें—

ओं यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्। भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु॥
—अथर्व० ४।२१।६

निम्न मन्त्रों से **'मुख्य होम'** विशेष शाकल्य व गोघृत से करे—

ओं व्रजं कृणुध्वं स हि वो नृपाणो वर्म सीव्यध्वं बहुला पृथूनि। पुरः कृणुध्वमायसीरधृष्टा मा वः सुस्रोच्चमसो दृंहता तं स्वाहा॥ १॥ —ऋग्० १०।१०१।८; अथर्व० १९।५८।४

ओं सं वो गोष्ठेन सुषदा सं रय्या सं सुभूत्या।
अहर्जातस्य यन्नाम तेना वः सं सृजामसि स्वाहा॥ २॥
—अथर्व० ३।१४।१

ओम् आज्यं बिभर्ति घृतमस्य रेतः साहस्रः पोषस्तमु यज्ञमाहुः। इन्द्रस्य रूपमृषभो वसानः सो अस्मान्देवाः शिव ऐतु दत्तः स्वाहा॥ ३॥ —अथर्व० ९।४।७

ओम् अन्तरिक्षं दिवं भूमिमादित्यान्मरुतो दिशः। लोकान्त्स सर्वानाप्नोति यो ददाति शतौदनाम् स्वाहा॥ ४॥
—अथर्व० १०।९।१०

ओम् इहैव गाव एतनेहो शकेव पुष्यत।
इहैवोत प्र जायध्वं मयि संज्ञानमस्तु वः स्वाहा॥ ५॥
—अथर्व० ३।१४।४

पुनः निम्न मन्त्रों से स्थालीपाक की विशेष आहुति दें—

ओं याः सरूपा विरूपा एकरूपा यासामग्निरिष्ट्या नामानि वेद। या अङ्गिरसस्तपसेह चक्रुस्ताभ्यः पर्जन्य महि शर्म यच्छ स्वाहा॥ १॥ —ऋ० १०।१६९।२

ओं सं सं स्रवन्तु पशवः समश्वाः समु पूरुषाः। सं धान्यस्य या स्फातिः संस्राव्येण हविषा जुहोमि स्वाहा॥ २॥
—अथर्व० २।२६।३

ओम् इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽ इन्द्राय भागं प्रजावतीरन-मीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशंसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि स्वाहा॥ ३॥ —यजुः० १।१

तत्पश्चात् बृहद यज्ञ की शेष विधि पूरी कर पूर्णाहुति प्रकरण पूरा कर प्रपा-स्थापन विधि में लिखे उद्घाटन विधि को सम्पन्न करें। उसके पश्चात् सब मिल कर परमेश्वर का उपस्थान निम्न मन्त्रों से करें और विदा हों—

ओं गावः सन्तु प्रजाः सन्त्वथो अस्तु तनूबलम्। तत्सर्वमनु मन्यन्तां देवा ऋषभदायिने॥ १ ॥ —अथर्व० ९।४।२०

ओं पयः पृथिव्यां पयऽओषधीषु पयो दिव्युन्तरिक्षे पयो धाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥३६॥ —यजुः० १८।३६

गुरुकुल/स्कूल/विद्यालय/वेदालय का शिलान्यास

शिलान्यास विधि पृष्ठ २०१ से २०३ तक का विधिवत् पालन करें, तत्पश्चात् गायत्री मन्त्र से परमेश्वर का उपस्थान करें।

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ —यजुः० ३६।३

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से **मुख्य होम** करें—

ओं यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना स्वाहा॥ १ ॥
ओं पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् स्वाहा॥ २ ॥
ओं पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघा हि घृतश्चुतः।
ऋषिभिः संभृतो रसो ब्राह्मणेष्वमृतं हितम् स्वाहा॥ ३ ॥
ओं पावमानीर्दधन्तु न इमं लोकमथो अमुम्।
कामान्त्समर्धयन्तु नो देवीर्देवैः समाहृताः स्वाहा॥ ४ ॥
ओं येन देवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा।
तेन सहस्त्रधारेण पावमानीः पुनन्तु नः स्वाहा॥ ५ ॥

ओं पावमानीः स्वस्त्ययनीस्ताभिर्गच्छति नान्दनम्।
पुण्यांश्च भक्षान् भक्षयत्यमृतत्वं च गच्छति स्वाहा॥ ६ ॥

—सामवेद १२९८-१३०३

बृहद् यज्ञ का शेष भाग पूरा कर, पूर्णाहुति करके महावामदेव्य गान का गायन करें।

गुरुकुल/स्कूल/विद्यालय/वेदालय/पुस्तकालय आदि की उद्घाटन विधि

गृह प्रवेश कर्म विधि (पृष्ठ २०५ से २०६) का विधिवत् पालन ध्वज स्थापन-पर्यन्त करें। उस समय निम्न मन्त्र से उस स्थलविशेष के चारों ओर [दक्षिण से पूर्व की ओर] जल प्रोक्षण करे—

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदतु॥

—यजुः० ९।१

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत 'आघारावाज्यभागाहुति पर्यन्त सब विधि करके, निम्न मन्त्रों से 'मुख्य होम' की आहुतियाँ विशेष शाकल्य व घृत से देवें—

मुख्य होम मन्त्राः

ओं पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धियावसुः स्वाहा॥ १ ॥ —ऋ० १।३।१०
ओं चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम्।
यज्ञं दधे सरस्वती स्वाहा॥ २ ॥ —ऋ० १।३।११
ओं महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना।
धियो विश्वा वि राजति स्वाहा॥ ३ ॥ —ऋ० १।३।१२
ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥४॥

—यजुः० ३२।१४

ओं मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा ॥५॥

—यजुः० ३२।१५

ओं चत्वारि वाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः। गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति स्वाहा॥ ६ ॥ —ऋ० १।१६४।४५

ओम् आदित्या रुद्रा वसवः सुनीथा द्यावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम्। सजोषसो यज्ञमवन्तु देवा ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम् स्वाहा॥ ७ ॥ —ऋ० ३।८।८

तत्पश्चात् अग्रांकित मन्त्रों से **स्थालीपाक** की तीन आहुति देवें—

ओं सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषꣳस्वाहा॥ इदं सदसस्पतये—इदन्न मम॥ १ ॥

—यजुः० ३२।१३

ओं तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा। इदं सवित्रे—इदन्न मम॥ २ ॥ —यजुः० ३।३५

ओम् ऋषिभ्यः स्वाहा। इदं ऋषिभ्यः—इदन्न मम॥ ३ ॥

यज्ञसमाप्ति-पूर्णाहुति

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ का शेष भाग अर्थात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा कर तथा प्रपा-स्थापन विधि में लिखे उद्घाटन विधि को सम्पन्न कर इन मन्त्रों से स्तुति करें।

ओं विश्वजित् त्रायमाणायै मा परि देहि।
त्रायमाणे द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद्यच्च नः स्वम्॥ १ ॥

—अथर्व० ६।१०७।१

ओं त्रायमाणे विश्वजिते मा परि देहि।
विश्वजिद् द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद्यच्च नः स्वम्॥ २ ॥

—अथर्व० ६।१०७।२

ओं विश्वजित्कल्याण्यै मा परि देहि।
कल्याणि द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद्यच्च नः स्वम्॥ ३ ॥

—अथर्व० ६।१०७।३

ओं कल्याणि सर्वविदे मा परि देहि।
सर्वविद् द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद्यच्च नः स्वम्॥ ४ ॥

—अथर्व० ६।१०७।४

तत्पश्चात् सब लोग निम्न दो मन्त्रों से परमेश्वर का उपस्थान कर समारोह स्थल से विदा लें।

ओं अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ विद्यायाꣳरताः॥१॥

—यजुः० ४०।१२

ओं विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयꣳसह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते॥ २॥

—यजुः० ४०।१४

धर्मशाला प्रतिष्ठापन विधि

बृहद यज्ञ की सम्पूर्ण विधि अष्टाज्याहुति मन्त्रों तक विधिवत् पूर्ण करके निम्न मन्त्रों से **मुख्य होम** की विशेष शाकल्य और घृत से आहुतियाँ दें—

ओं अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय स्वाहा॥ १ ॥ —ऋ० ५।६०।५

ओं जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसं स्वाहा॥ २ ॥ —अथर्व० १२।१।४५

ओं स्योना पृथिवि भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथः स्वाहा॥ ३ ॥ —ऋ० १।२२।१५

ओम् इमा याः पञ्च प्रदिशो मानवीः पञ्च कृष्टयः। वृष्टे शापं नदीरिवेह स्फातिं समावहान् स्वाहा॥ ४॥

—अथर्व० ३।२४।३

ओं सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते स्वाहा॥ ५ ॥ —ऋ० १०।१९१।२

ओं समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि स्वाहा॥ ६ ॥

—ऋ० १०।१९१।३

ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति स्वाहा॥ ७॥ —ऋ० १०।१९१।४

ओं समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः स्वाहा॥ ८॥

—अथर्व० ३।३०।६

तत्पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा कर महावामदेव्यगान का गायन करें और धर्मशाला निर्माण कराने वालों का अभिनन्दन कर मंगलकामनाओं के साथ शान्ति पाठ करें।

आर्यसमाज वा किसी भी संस्था का स्थापना दिवस

आर्यसमाज वा किसी भी संस्था या संगठन की शक्ति का आधार है—''एकता''। अतः एकता के मन्त्र ही किसी भी संस्था के स्थापना दिवस पर मुख्य होम के अंग अनिवार्यतः होने चाहिएँ।

पहले बृहद् यज्ञ की सम्पूर्ण विधि (पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर) निम्न मन्त्रों से घृत तथा शाकल्य की आहुति संस्था के अधिकारीगण देवें।

मुख्य होम मन्त्राः

ओं सं जानीध्वं सं पृच्यध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते स्वाहा॥ १॥

—अथर्व० ६।६४।१

ओं सं वः पृच्यन्तां तन्वः सं मनांसि समु व्रता।
सं वोऽयं ब्रह्मणस्पतिर्भगः सं वो अजीगमत् स्वाहा॥ २॥

—अथर्व० ६।७४।१

ओं ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः। अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोमि स्वाहा॥ ३॥ —अथर्व० ३।३०।५

ओं समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः स्वाहा॥ ४॥

—अथर्व० ३।३०।६

ओं सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान्। देवाइवामृतं रक्षमाणाः सायंप्रातः सौमनसो वो अस्तु स्वाहा॥ ५॥

—अथर्व० ३।३०।७

ओं सं वो मनांसि सं व्रता समाकूतीर्नमामसि।
अमी ये विव्रता स्थन तान्वः सं नमयामसि स्वाहा॥ ६॥

—अथर्व० ६।९४।१

ओं समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि स्वाहा॥ ७॥

—ऋ० १०।१९१।३

ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति स्वाहा॥ ८॥

—ऋ० १०।१९१।४

ओं तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा॥ ९॥ —ऋ० ३।६२।१०

ओं दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे स्वाहा॥१८॥ —यजुः० ३६।१८

पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके महावामदेव्यगान तथा शान्तिपाठ से यज्ञ का समापन करें।

मध्याह्न में स्वसामर्थ्यानुसार सात्त्विक और रोचक पाक सम्पन्न करके सब प्रीतिपूर्वक एकत्र मिलकर भोजन करें तथा अपने आश्रित सेवकों आदि को भी उससे सत्कृत करें।

स्थापना दिवस पर सार्वजनिक सभाएँ सायंकाल की जावें, जहाँ पर संस्था द्वारा किये गये व किये जाने वाले कार्यों की जानकारी दी जावे।

—:o:—

विवाह सम्बन्धी लोकाचार वा पद्धतियाँ

वाग्दान (सगाई) की विधि

वधू-वर संयुक्त विधि

वाग्दान का दिन व समय, तथा आचार्य या स्वगृह जिस स्थान पर करना हो, उस स्थान का निश्चय हो जाने पर, दोनों पक्षों के उत्तम विद्वान् स्त्री-पुरुषों की सभा करके, विवाहेच्छु स्त्री व पुरुष, जो कि **शुद्ध स्वदेशी वेशभूषा से अलंकृत और यज्ञोपवीत धारण किए हों,** दोनों को एकत्र बिठावें, और दोनों परस्पर निम्न मन्त्र बोल संवाद करें, कि—

ओम् ऋतमग्रे प्रथमं जज्ञ ऋते सत्यं प्रतिष्ठितम्। यदियं कुमार्य्यभिजाता तदियमिह प्रतिपद्यताम्। यत्सत्यं तद् दृश्यताम्॥ १॥ —आश्व० गृ० १।५।५

भाव यह है कि—''जैसे पुरुष और प्रकृति के योग से सब विश्व उत्पन्न होता है, वैसे ही स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध से संसार चलता है। हम दोनों कुमार और कुमारी इस समय विवाह करने की सत्य प्रतिज्ञा करते हैं; हम दोनों एक-दूसरे को प्राप्त होवें, और [आप सबके सामने संकल्प करते हैं कि] हम ऐसा देखेंगे कि जिससे इस स्त्री की जो मूल उत्पादक शक्ति है, वह सफल होवे; और अपनी इस प्रतिज्ञा को सत्य करने के लिए दृढ़ोत्साही रहें।

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत ऋत्विग्वरण से लेकर आघारावाज्यभागाहुति पर्यन्त सामान्य विधि सम्पन्न करें।

मुख्य होम मन्त्राः

फिर घृत-मिश्रित मीठे भात के शाकल्य से चार आहुतियाँ निम्न मन्त्रों से दोनों देवें—

ओम् आस्थापयन्त युवतिं युवानः शुभे निमिश्लां विदथेषु पज्राम् स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥ १॥ —ऋ० १।१६७।६

ओम् उप यमेति युवतिः सुदक्षं दोषा वस्तोर्हविष्मती घृताची। उप स्वैनमरमतिर्वसूयुः स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥ २॥

—ऋ० ७।१।६

ओं रेवती रमध्वमस्मिन्योनावस्मिन् गोष्ठेऽस्मिँल्लोकेऽस्मिन् क्षये। इहैव स्त मापगात स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥ ३॥

—यजुः० ३।२१

ओं यो रेवान् योऽअमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्द्धनः। स नः सिषक्तु यस्तुरः स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥ ४॥

—यजुः० ३।२९

स्वयंवरण

तत्पश्चात् स्त्री-पुरुष दोनों को आमने-सामने बैठाकर, पिता या आचार्य या पुरोहित प्रथम वधू से निम्न मन्त्र बुलवावे—

ओम् अपश्यं त्वा मनसा चेकितानं तपसो जातं तपसो विभूतम्। इह प्रजामिह रयिं रराणः प्र जायस्व प्रजया पुत्रकाम॥ १॥

—ऋ० १०।१८३।१

पश्चात् निम्न मन्त्र से वधू, वर को अँगूठी पहनावे—

ओं यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यं शतानीकाय सुमनस्यमानाः। तत्ते बध्नाम्यायुषे वर्चसे बलाय दीर्घायुत्वाय शतशारदाय॥ २॥

—अथर्व० १।३५।१

तत्पश्चात् वर से निम्न मन्त्र बुलवावे—

ओम् अपश्यं त्वा मनसा दीध्यानां स्वायां तनू ऋत्व्ये नाधमानाम्। उप मामुच्चा युवतिर्बभूयाः प्र जायस्व प्रजया पुत्रकामे॥ ३॥ —ऋ० १०।१८३।२

पश्चात् उसी प्रकार **ओं यदा बध्नन् दाक्षायणाः** इस मन्त्र से वर द्वारा वधू को अँगूठी धारण करवावें।

पुनः पुरोहित, वर से कहलावे—

ओं यस्तेऽङ्कुशो वसुदानो बृहन्निन्द्र हिरण्ययः।
तेना जनीयते जायां मह्यं धेहि शचीपते॥ ४॥

—अथर्व० ६।८२।३

पश्चात् पुरोहित, कन्या के पिता से कहलावे—

ओम् अभ्रातृघ्नीं वरुणापशुघ्नीं बृहस्पते।
इन्द्रापतिघ्नीं पुत्रिणीमास्मभ्यं सवितर्वह॥५॥

—अथर्व० १४।१।६२

वधू-वर को उपदेश

पुनः पुरोहित, दोनों को समझावे कि तुम दोनों ऐसा संकल्प करो—

ओं त्वष्टा जायामजनयत्त्वष्टास्यै त्वां पतिम्।
त्वष्टा सहस्रमायूंषि दीर्घमायुः कृणोतु वाम्॥१॥

—अथर्व० ६।७८।३

ओं सं वां मनांꣳसि सं व्रता समु चित्तान्याकरम्॥२॥

—यजुः० १२।५८

तत्पश्चात् पुनः पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके यज्ञ समाप्त करके महावामदेव्यगान करें।

यज्ञादि के समय वा पश्चात् '**यदाबध्नन्**' मन्त्र बोल वधू-वर दोनों परस्पर सुवर्णमुद्रिका आदान-प्रदान करें; उसी समय वरपक्ष के लोग, देशकालानुरूप लोकाचार के अनुसार कन्या के लिए जो फल-वस्त्र-आभूषण आदि लाए हों, वे कन्या को अर्पित करें। सौभाग्यवती गृह-वधुएँ कन्या को टीका लगावें। उसी प्रकार 'वधूपक्ष' के पुरुष भी वर के लिए वस्त्र-आभूषण-फल-मिष्ठान्नादि भेंट करें। वधू का भाई अपनी अनामिका व अंगुष्ठ से वर के मस्तक पर तिलक लगावे।

वाग्दान विधि (लोकाचारानुसार)

वर-गृह में—यदि आचार्य या स्वगृह में किसी एक ही स्थान में दोनों को एकत्र बिठा, एक ही बार वाग्दान-विधि न करके, लोकाचारानुसार पृथक्-पृथक् स्थानों में वाग्दान-क्रिया करनी हो, तो जिस दिन दोनों पक्ष के पितर अपने सन्तानों का सम्बन्ध [नाता, सगाई, रिश्ता] स्थिर अर्थात् वाग्दान=वाङ् निश्चय करना चाहें, और वधू-पक्ष के लोग 'देशकालानुरूप' लोकाचार के अनुसार 'शगुन' के तौर पर वर-पक्ष को कुछ अर्पण करना चाहें, तो उस दिन वर के घर पहले बृहद् यज्ञ की ऋत्विग्वरण से लेकर आघारावाज्यभागाहुति पर्यन्त सब क्रिया करें।

मुख्य होम मन्त्राः

तत्पश्चात् घृत-मिश्रित मीठे भात के शाकल्य से चार आहुतियाँ निम्न मन्त्रों से दोनों देवें—

ओम् आस्थापयन्त युवतिं युवानः शुभे निमिश्लां विदथेषु पज्राम् स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥१॥ —ऋ० १।१६७।६

ओम् उप यमेति युवतिः सुदक्षं दोषा वस्तोर्हविष्मती घृताची। उप स्वैनमरमतिर्वसूयुः स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥२॥

—ऋ० ७।१।६

ओं रेवती रमध्वमस्मिन्योनावस्मिन् गोष्ठेऽस्मिँल्लोकेऽस्मिन् क्षये। इहैव स्त मापगात स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥३॥

—यजुः० ३।२१

ओं यो रेवान् योऽअमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्द्धनः। स नः सिषक्तु यस्तुरः स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥४॥

—यजुः० ३।२९

पुरोहित-वचन

तत्पश्चात् वधू को लक्ष्य करके पुरोहित निम्न मन्त्रों का उच्चारण करें—

ओं प्रेतो मुञ्चामि नामुतः सुबद्धाममुतस्करम्।
यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगासति॥१॥

—ऋ० १०।८५।२५

ओं ऋतमग्ने प्रथमं जज्ञ ऋते सत्यं प्रतिष्ठितम्। यदिकुमार्यभिजाता तदियमिह प्रतिपद्यताम्। यत् सत्यं तद् दृश्यताम्॥२॥ —आश्वला० गृ० सू० १।५।५

तत्पश्चात् पुरोहित को चाहिए कि निम्न मन्त्रों का भावार्थ दोनों पक्षों को सुनावे। पहले विवाहेच्छु युवा ब्रह्मचारी कन्या के माता-पिता से प्रस्ताव करता है—

ओं भगमस्या वर्च आदिष्यधि वृक्षादिव स्त्रजम्। महाबुध्नइव पर्वतो ज्योक्पितृष्वास्ताम्॥१॥ —अथर्व० १।१४।१

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों द्वारा कन्या के माता-पिता वर के प्रस्ताव को स्वीकार करते हैं—

ओम् एषा ते राजन्कन्या वधूर्नि धूयतां यम।
सा मातुर्बध्यतां गृहे ऽ थो भ्रातुरथो पितुः॥ २॥
—अथर्व० १।१४।२

ओम् एषा ते कुलपा राजन्तामु ते परि दद्मसि।
ज्योक्पितृष्वासाता आ शीर्ष्णः समोप्यात्॥ ३॥
—अथर्व० १।१४।३

ओम् असितस्य ते ब्रह्मणा कश्यपस्य गयस्य च।
अन्तःकोशमिव जामयो ऽ पि नह्यामि ते भगम्॥ ४॥
—अथर्व० १।१४।४

ओम् आ नो अग्ने सुमतिं संभलो गमेदिमां कुमारीं सह नो भगेन। जुष्टा वरेषु समनेषु वल्गुरोषं पत्या सौभगमस्त्वस्यै॥ ५॥
—अथर्व० २।३६।१

ओं तमस्मेरा युवतयो युवानं मर्मृज्यमानाः परि यन्त्यापः। स शुक्रेभिः शिक्वभी रेवदस्मे दीदायानिध्मो घृतनिर्णिगप्सु॥ ६॥
—ऋ० २।३५।४

यज्ञसमाप्ति, पूर्णाहुति

पश्चात् पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके वामदेव्यगान करें। यह मांगलिक विधि हुई, पश्चात् वधू का पिता या भाई, वर को—

ओम् इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः। एते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिकामाय वेत्तवे॥ —अथर्व० २।२६।७

यह मन्त्र बोल अनामिका और अंगुष्ठ से गन्धाक्षत से तिलक करे; उस पर चावल लगावे; मुख में छुआरा या मोदक देवे, और वर के हाथ में पूगीफल (सुपारी), नारियल, फल-मिष्ठान्न, वस्त्र, अंगूठी आदि द्रव्य यथाशक्ति देवे। वर उन्हें दोनों हाथों से ग्रहण कर श्वशुर आदि को 'नमस्ते' करे।

वाग्दान के पश्चात् वर-पक्षवाले इसी प्रकार कन्या के लिए खजूर-छुआरा-सुपारी उत्तम नवीन वस्त्र, अर्थात् साड़ी-चोली-आभूषणादि भेजें। इसी को **चुन्नी चढ़ाना** कहते हैं।

वाग्दान विधि लोकचारानुसार

कन्या गृह में— जिस कन्या का वाग्दान विधि करना हो उसे अपनी दाहिनी ओर लेकर यज्ञवेदी के पास पूर्वाभिमुख खड़े माता-पिता (पत्नी की बाईं ओर पति खड़ा होकर) उत्तराभिमुख खड़े श्री पुरोहित जी से विनय पूर्वक कहें—**'ओम् आवसों सदने सीद'** फिर श्री पुरोहितजी बोलें—**'ओं सीदामि'** और वे सब वहीं अपने-अपने आसन पर बैठ जावें। उस समय **वाग्दान** (सगाई) करने हेतु आये वर पक्ष के महानुभावों को यज्ञ वेदी के पास उत्तराभिमुख बैठावें। यज्ञवेदी की उत्तरदिशा और पूर्वदिशा में अन्य किन्हीं को आहुतियाँ देने के लिए बैठा देवें।

अब यजमान अपने हाथों में एक नारियल, यज्ञोपवीत एवं श्रद्धानुसार द्रव्य (राशि) लेकर विनम्रभाव से श्री पुरोहित जी को कहें:-**'ओं तत्सत् अहं अद्य स्व कन्यायाः वाग्दान-विधि करणाय भवन्त वृणे'** और श्री पुरोहित जी **'ओं वृतोऽस्मि'** बोलकर यजमान वह भेंट स्वीकारें। तत्पश्चात् वृहद् यज्ञ की समस्त विधि (पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर) करके निम्न पाँच मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ कन्या से दिलावें—

मुख्य होम मन्त्राः

ओं सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तामुभा वरा। सूर्यां यत्पत्ये शंसन्तीं मनसा सवितादात् स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० १४।१।९

ओं वधूरियं पतिमिच्छन्त्येति य ईं वहाते महिषीमिषिराम्। आस्य श्रवस्याद्रथ आ च घोषात्पुरू सहस्रा परि वर्तयाते स्वाहा॥ २॥ —ऋ० ५।३७।३

ओम् इयमग्ने नारी पतिं विदेष्ट सोमो हि राजा सुभगां कृणोति। सुवाना पुत्रान्महिषी भवाति गत्वा पतिं सुभगा वि राजतु स्वाहा॥ ३॥ —अथर्व० २।३६।३

ओं भगस्य नावमा रोह पूर्णामनुपदस्वतीम्। तयोपप्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० २।३६।५

ओम् इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः। एते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिकामाय वेत्तवे स्वाहा॥५॥

—अथर्व० २।३६।७

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ की पूर्णाहुति प्रकरण यथाविधि करके, महावामदेव्यगान कर यज्ञ समाप्त करें।

पश्चात् वरपक्ष की जो सुवासिनी गृह-वधुएँ उपर्युक्त सब सामान लेकर वधू के घर आई हों, वे उपरि-निर्दिष्ट **'इदं हिरण्यं०'** मन्त्र को बोलकर उसे साड़ी-चोली-आभूषण आदि पहिनावें, और उसके मस्तक पर टीका लगावें, और उसकी झोली में 'पाँच फल' भरें। उत्तम शिष्टाचार यही प्रतीत होता है कि पहले वरपक्षवाले, वधू के लिए 'वस्त्र-आभूषण-फल-मिष्ठान्न' भेजें। फिर वधूपक्ष वाले वर के घर जाकर उसका फलदान से सत्कार करें।

—:o:—

वैवाहिक लग्न पत्रिका लेखन-विधि

वधू पक्ष से सम्बन्धित परिवार—कुटुम्ब के सदस्यों एवं समुदाय के प्रमुख (पंच) महानुभावों (स्त्री-पुरुषों) की उपस्थिति में—

ओ३म् स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

यह मन्त्र बोलकर श्री पुरोहित जी निम्नानुसार **'लग्न-पत्रिका'** लिखें; और सबको सुनावें। तत्पश्चात् उस पत्रिका में हल्दी से रंगे चावल देवें। अन्त में शान्तिपाठ एवं प्रसाद वितरण किया जावे।

शुभ विवाह लग्न पत्रिका

(नगर/ ग्राम..........) दिनांक.........

सम्मानीय श्रीमान् (....वर के पितामह, ताऊ, पिता, चाचा, भाई अभिभावकों आदि विद्यमान जनों के नाम....) की सेवा में— हमारी सादर नमस्ते विदित होवे।

निवेदन है कि ईश्वर की असीम अनुकम्पा से सौभाग्यकांक्षिणी (वधू का नाम) का **'पाणिग्रहण-संस्कार'** श्रीयुत् आयुष्मान् (वर का नाम) के साथ शुभ तिथि........वार........पक्ष........माह........

संवत्........तदनुसार, दिनांक........माह........सन्........को गोधूलि-वेला में करना आपके तथा हमारे द्वारा निश्चित हुआ, उसके अनुसार आप श्री वर राजा जी और भद्रजनों सहित हमारे यहाँ यथासमय अवश्य ही पधारने की कृपा कीजिये। आपके शुभागमन की हम उत्सुकता से प्रतीक्षा करेंगे—

निवेदक—

(........वधू पक्ष से सम्बन्धित महानुभावों के नाम........)

वैवाहिक लग्न पत्रिका पठन-विधि

वर पक्ष से सम्बंधित परिवार-कुटुम्ब के सदस्यों एवं समुदाय के प्रमुख पंच महानुभावों (स्त्री-पुरुषों) की उपस्थिति में—

ओ३म् स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

यह मन्त्र बोल कर श्री पुरोहित जी 'लग्न पत्रिका' पढ़कर सुनावें। तत्पश्चात् शान्ति पाठ तथा प्रसाद वितरण किया जावे।

मङ्गल स्नान और मण्डप विधि

पूर्वविधि—वाग्दान के पश्चात्, जो शुभ दिन व समय विवाह-संस्कार का नियत किया हो, उससे पूर्व-दिवस या उससे कुछ समय पूर्व, जैसे सायंकाल विवाह करना हो तो प्रातःकाल या मध्याह्न, दोनों पक्षों के जन अपने-अपने घरों में यज्ञ की सामान्य-विधि करने की तैयारी प्रसन्नता-पूर्वक करें। यज्ञकुण्ड, यज्ञपात्र, स्थालीपाक, समिधा, घृत, शाकल्य आदि सब सामग्री पूर्व ही जोड़ रक्खें।

घर के किसी स्थान पर दरी-गलीचा आदि चारों दिशाओं में आसन बिछा, सब इष्ट-मित्र, बन्धु-बांधव, आचार्य, ऋत्विग् बैठें। संस्कार्य अर्थात् वर या वधू के लिए एक विशेष आसन कुण्ड के पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठने के लिए स्थापित करें। आचार्य या पुरोहित, वर या वधू के दक्षिण में उत्तराभिमुख बैठें।

१. मङ्गलस्नान या उबटन मलना

उस दिन सुगन्धादि औषधयुक्त जल से भरे कलश वेदी के उत्तर भाग में रक्खें। पुनः निम्न मन्त्र बोलकर जितना अभीष्ट हो उतना, या सारा जल ग्रहण कर निम्न मन्त्र उच्चारें—

ओं ये अप्स्वन्तरग्न्यः प्रविष्टा गोह्य उपगोह्यो मयूषो मनोहास्खलो विरुजस्तनूदुषुरिन्द्रियहा तान् विजहामि, यो रोचनस्तमिह गृह्णामि॥ १ ॥ —पार० २।६।१०

पश्चात् निम्न मन्त्रों का भाव मन में भली प्रकार समझ, उन सुगन्धित जल से पूर्ण कलशों को लेकर, पृथक्-पृथक् अपने-अपने घरों में वधू-वर दोनों स्नानार्थ तैयार होवें—

ओं काम वेद ते नाम मदो नामासि समानयामुꣳ सुरा ते अभवत्। परमत्र जन्माग्ने तपसो निर्मितोऽसि स्वाहा॥ १ ॥

ओम् इम त उपस्थं मधुना सꣳसृजामि प्रजापतेर्मुखमेतत् द्वितीयम्। तेन पुꣳसोभिभवासि सर्वानवशान्वशिन्यसि राज्ञि स्वाहा॥ २ ॥

ओम् अग्निं क्रव्यादमकृण्वन् गुहानाः स्त्रीणामुपस्थमृषयः पुराणः। तेनाज्यमकृण्वꣳस्त्रैशृङ्ग त्वाष्ट्रं त्वयि तद्दधातु स्वाहा॥ ३ ॥

—साम० मन्त्रब्रा० प्र० १। खं० १। मं० १-३

पुनः निम्न मन्त्र को बोलते हुए सुगन्धादि द्रव्य शरीर पर मलकर स्नान करें—

ओं तेन मामभिषिञ्चामि श्रियै यशसे सत्याय ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय॥ —गोभिल गृह्य सूत्र २।१।९

अर्थात्—श्री, यश, सत्याचरण, बुद्धि-ज्ञान व ब्रह्मवर्चस के लिए इस जल से अच्छे प्रकार स्नान करता वा करती हूँ।

स्नान से पूर्व वर क्षौरकर्म, लोम-नख आदि वपना करा लेवे। वधू भी नख कटवा लेवे। 'मङ्गल-स्नानविधि' ही 'विवाह से पूर्व वधू-वर को उबटन मलना' विधि है।

तत्पश्चात् शरीर को पोंछकर, अधोवस्त्र अर्थात् धोती व पीताम्बर धारण करके, सुगन्धयुक्त चन्दनादि का अनुलेपन करे, और वधू भी वस्त्र-धारण करे। वधू-वर स्नान कर, पश्चात् अपने-अपने घरों में उत्तम आसन पर यज्ञ के लिए पूर्वाभिमुख बैठें (१५४)।

२. मण्डप-विधि (वधू गृह में)

वधू-गृह में—विवाह-संस्कार से पूर्व जो **'सौभाग्य-पेटिका'** या **'सुहाग-पिटारी'** वधू के घर में वरपक्ष की ओर से भेजी जाती है, जिसमें श्रृंगार-सामग्री होती है, उसे वेदी के पास रक्खें।

सामान्य यज्ञ

तत्पश्चात् बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत ऋत्विग्-वरण से लेकर 'ओं यदस्य०' से स्थालीपाक की एक, और 'ओं प्रजापतये....' से प्राजापत्य की एक आहुति पर्यन्त **सामान्य-प्रकरणोक्त यज्ञविधि दोनों वधू-वर पृथक्-पृथक् अपने-अपने घर में करें।**

तत्पश्चात् वधू-गृह में वधू के मस्तक पर द्विज सौभाग्यवती स्त्रियाँ निम्न मन्त्र से तिलक=सिन्दूर-कुंकुम-चावल लगावें—

ओं स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

—यजुः० २५।१९

उस समय वधू निम्न मन्त्र बोले—

ओं सुचक्षा अहक्षीभ्यां भूयासꣳ सुवर्चा मुखेन। सुश्रुत् कर्णाभ्यां भूयासम्॥ —पा० २।६।१९

तत्पश्चात् **'चूड़ा चढ़ाना'**, मौली-बन्धन या कलीरे बाँधने की विधि करनी हो, तो निम्न प्रकार से कर लें—

१. 'चूड़े' को पहले चावल, यव [या गेहूँ] में रखना चाहिए।

२. पुनः उसे दूध [या लस्सी] में अभिषिञ्चित करें।

३. पुनः पहनाने से पूर्व, कुंकुम-हल्दी लगा, सुहागनों से स्पर्श करावें।

पश्चात् निम्न [अग्रांकित] मन्त्र बोलकर बाँधे, और तभी [देशाचारानुसार] कलीरे भी मौली में बाँध, चूड़े के साथ वधू के मामा से बँधवा दें—

ओं यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यं शतानीकाय सुमनस्यमानाः।
तत्ते बध्नाम्यायुषे वर्चसे बलाय दीर्घायुत्वाय शतशारदाय॥

—अथर्व० १।३५।१

तत्पश्चात् 'वर-पक्ष की ओर से आए वस्त्र' पुरोहित निम्न मन्त्र को पढ़, वधू को दिलावे—

ओं येनेन्द्राय बृहस्पतिर्वासः पर्यदधादमृतम्।
तेन त्वा परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे॥

—पार० गृ० सू० २।२।७

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से वधू साड़ी-चोली आदि एकान्त में जाकर धारण करे—

ओं परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि।
शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये॥ १ ॥

—पार० गृ० सू० २।६।२०

ओं यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पति।
यशो भगश्च माविन्दद्यशो मा प्रतिपद्यताम्॥ २ ॥

—पार० गृ० सू० २।६।२१

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से सुगन्धित माला लेके धारण करे—

ओं या आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय।
ता अहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च॥ ३ ॥

—पार० गृ० सू० २।६।२३

ओं यद्यशोऽप्सरसामिन्द्रश्चकार विपुलं पृथु।
तेन सङ्ग्रथिताः सुमनस आबध्नानि यशो मयि॥ ४॥

—पार० गृ० सू० २।६।२४

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से नानाविध अलङ्कार धारण करे—

ओम् अलङ्कारणमसि भूयोऽलङ्करणं भूयात्॥ ५ ॥

—पार० गृ० सू० २।६।२६

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से स्वयं वा भाभी से काजल डलवावे—

ओं वृत्रस्यासि कनीकश्चक्षुर्दा असि चक्षुर्मे देहि॥ ६ ॥

—पार० गृ० सू० २।६।२७

और निम्न मन्त्र-भाग बोलें—

ओं भद्र कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।

पश्चात् निम्न मन्त्र से दर्पण में मुख देखे—

ओं रोचिष्णुरसि॥ —पार० गृ० सू० २।६।२८

तत्पश्चात् वधू अपने माता-पिता, बड़े-बूढ़ों तथा आचार्य पुरोहित के चरण-स्पर्श-पूर्वक उन्हें 'नमस्ते' कर, उनका आशीर्वाद लेवे। इस प्रकार वधू को उत्तम वस्त्रालङ्कार धारण करा, उसे विवाह-मण्डप की ओर ले-जाने की तैयारी करें।

इस अवसर पर यजमान सब अभ्यागतों का सत्कार करे। जो कोई सेवक-सेविका हों, उन्हें भी द्रव्य-वस्त्र-मिष्ठान्नादि से प्रसन्न करे। आचार्य पुरोहितादि को उत्तम अन्न-पान-वस्त्र-फल-मिष्ठान्नादि से सत्कृत करे।

३. मण्डप विधि (वर गृह में)

वर के गृह में—वधू-पक्ष से वर के लिए आए वस्त्र-आभूषणादि यज्ञवेदी के समीप रक्खें। **पश्चात् यथाविधि बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत प्रजापत्याहुति पर्यन्त यज्ञ कर,** पुरोहित, वर के समक्ष बैठकर उसके मस्तक पर चन्दन लगा, उस पर रोली और चावल लगा निम्न मन्त्र से तिलक करे, और अपने मस्तक पर भी इसी प्रकार तिलक करावे—

ओं स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

—यजुः० २५।१९

पुनः वर निम्न मन्त्र का भाव समझ कर बोले—

ओं सुचक्षा अहमक्षीभ्यां भूयासꣳ सुवर्चा मुखेन।
सुश्रुत् कर्णाभ्यां भूयासम्॥ —पार० गृ० सू० २।६।१९

यदि मौलि-बन्धन करना हो, तो निम्न मन्त्र बोलकर करें—

ओं यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यं शतानीकाय सुमनस्यमानाः।
तत्ते बध्नाम्यायुषे वर्चसे बलाय दीर्घायुत्वाय शतशारदाय॥

—अथर्व० १।३५।१

पश्चात् निम्न मन्त्र से पुरोहित वस्त्र दिलवावे—

ओं येनेन्द्राय बृहस्पतिर्वासः पर्यदधादमृतम्।
तेन त्वा परिधाम्यायुषे दार्घायुत्वाय बलाय वर्चसे॥

—पार० गृ० सू० २।२।७

तत्पश्चात् निम्न [अग्रांकित] मन्त्र से सुन्दर अतिश्रेष्ठ धोती, कमीज या कुर्त्ता धारण करे। [नीचे बनियान, बण्डी, चड्डी, लंगोट आदि स्नानागार से ही पहिनकर आना चाहिए]—

ओं परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदिष्टरस्मि।
शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये॥

—पार० गृ० सू० २।६।२०

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से उपवस्त्र, कोट आदि धारण करे—

ओं यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती।
यशो भगश्च माविन्दद्यशो मा प्रतिपद्यताम्॥

—पार० गृ० सू० २।६।२१

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से शिरोवेष्टन, अर्थात् पगड़ी, दुपट्टा, अथवा टोपी, अथवा मुकुट या कलगी आदि धारण करे—

ओं युवा सुवासाः परिवीत आ गात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः॥

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से सुगन्धित माला हाथ में लेनी—

ओं या आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय।
ता अहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च॥

—पार० गृ० सू० २।६।२३

पुनः निम्न मन्त्र से धारण करनी—

ओं यद्यशोऽप्सरसामिन्द्रश्चकार विपुलं पृथु।
तेन सङ्ग्रथिताः सुमनस आबध्नामि यशो मयि॥

—पार० गृ० सू० २।६।२४

उसके पश्चात् अलङ्कार लेके, वर अँगूठी-कुण्डल आदि निम्न मन्त्र से धारण करे—

ओम् अलङ्करणमसि भूयोऽलङ्करणं भूयात्॥

—पार० गृ० सू० २।६।२६

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से स्वयं या भाभी से आँख में काजल डलवावे—

ओं वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दा असि चक्षुर्मे देहि॥

—पार० गृ० सू० २।६।२७

फिर वर बोले—

ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः॥

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र से दर्पण में मुख देखे [और पगड़ी आदि को वर ठीक कर ले]—

ओं रोचिष्णुरसि॥ —पार० गृ० सू० २।६।२८

तत्पश्चात् यदि छत्र धारण करना हो, तो निम्न मन्त्र से छत्र धारण करे (१३९)—

ओं बृहस्पतेश्छदिरसि पाप्मनो मामन्तर्धेहि, तेजसो यशसो मामन्तर्धेहि॥

और फिर निम्न मन्त्र से उपानह=बूट या जूता, पादवेष्टन (=जुर्राब), पगरखा (=मारवाड़ में प्रयुक्त), और जोड़ा (=मराठी में जूते के लिए प्रयुक्त) धारण करे—

ओं प्रतिष्ठे स्थो विश्वतो मा पातम्॥

और निम्न मन्त्र से [यदि उचित समझे, वा देशाचार हो] बाँस आदि की सुन्दर लकड़ी या बेंत की छड़ी आदि हाथ में धारण करे—

ओं विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यस्परिपाहि सर्वतः॥

और वधू के घर जाने का ढंग करे। तत्पश्चात् वरपक्ष के लोग वर को मोटर, रथ या सवारी पर बैठा, बड़े मान-आदर और उत्साह के साथ विवाह के लिए वधू के गृह की ओर गाजे-बाजे के साथ (यदि प्रबन्ध हो तो) ले जावें। वधूपक्ष के लोग भी स्वगृह में यज्ञोपवीत धारण की हुई उत्तम वस्त्राभूषण से अलंकृत वधू को विवाह-मण्डप की ओर ले-जाने की तैयारी करें।

वर अपने माता-पिता, बड़े-बूढ़ों तथा आचार्य पुरोहित आदि के चरण-स्पर्शपूर्वक उन्हें 'नमस्ते' करे। इस अवसर पर वर के माता-पिता या अभिभावकों का कर्त्तव्य है कि वे सब अभ्यागतों का यथाशक्ति सत्कार करें। जो कोई सेवक-सेविका हों, तो उन्हें भी द्रव्य-वस्त्र-मिष्टान्नादि से प्रसन्न करें। और पुनः इस संस्कार में आए हुए आचार्य पुरोहित आदि को उत्तम अन्न-पानादि से [वस्त्र, फल, मिष्टान्न, दक्षिणा आदि से] सत्कृत करें।

विवाह-संस्कार जिस दिन होता है, उस दिन या उससे पूर्वदिन वर के घर संस्कार के लिए जाने के निमित्त एक क्रिया की जाती है, उसे **'घुड़चढ़ी' 'निकासी'** वा **'सेहराबन्दी'** कहते हैं। यह समावर्त्तन-संस्कार का ही एक रूप है। उष्णीय (पगड़ी) बाँध के या मुकुट लगा के उसे कलियों की झालरों से सजाने पर दुल्हा सबसे अलग भी दिखता है और शोभा एवं आकर्षण का केन्द्र बनता है। यह सर्वथा आर्योचित परम्परा है। घोड़ी को बहनें-भाभियाँ दाना-चारा

खिलाके, मांगलिक गान गाती हुई शुभयात्रा के आशीष देती हैं। घोड़े पर बैठकर जाने का कोई नियम या विधान नहीं है। किसी भी रथ, या सवारी पर बैठकर जाया जा सकता है। पदयात्रा भी की जा सकती है।

वर एवं बारात की स्वागत-विधि

द्वारचार अर्थात् मिलनी करना

उसकी रीति यह है कि जब बरात वधूगृह या विवाह-वेदी=लगन-मण्डप के समीप पहुँचे, तब वधूपक्ष के लोग दो पंक्तियों में खड़े हो, वर तथा बरातियों का वाणी, माला व पेय आदि से स्वागत करें। वर और बराती, वधू-गृह या यज्ञ-मण्डप के द्वार पर वधूपक्ष के लोगों से कुछ अन्तर पर ठहर जावें। उस समय बाजा बन्द करा देना चाहिए।

तत्पश्चात् सब मिलकर निम्न दो मन्त्रों से ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना करें—

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद्भद्रन्तन्नऽआ सुव ॥ १॥ —यजुः० ३०।३

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्युस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम॥२॥
—यजुः० ४०।१६

पश्चात् घराती, बरातियों का पुष्पमालादि से स्वागत करें। यदि उचित समझें, तो दोनों पक्षों की वंशावली भी पढ़ी जावे। दोनों पक्षों के विशिष्ट सम्बन्धियों आदि का परिचय भी कराया जावे। इस अवसर पर पद्य [या गद्य] में स्नेह-श्रद्धा-सद्भावना व्यक्त करना भी समीचीन है। यदि 'मिलनी' जनवासे या किसी धर्ममन्दिर में हो, तो वहाँ बैठकर यह क्रिया कर लेनी चाहिए।

पश्चात् विद्वान् पुरोहित सबको समझाते हुए निम्न मन्त्रों का उच्चारण कर दोनों को उपदेश करे—

ओं सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥ १ ॥ —ऋ० १०।१९१।२

ओं समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः॥ २ ॥
—अथर्व० ३।३०।६

ओं सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या॥ ३ ॥
—अथर्व० ३।३०।१

ओम् उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु। तऽआ गमन्तु तऽइह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्॥४॥
—यजुः० १९।५७

ओम् आ यन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः। अस्मिन् यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्॥५॥ —यजुः० १९।५८

ओं स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
—यजुः० २५।१९

आते हुए [वरपक्ष के] पितर सज्जनों को देखकर घराती खड़े होकर प्रीतिपूर्वक कहें कि—'आइए, बैठिए, कुछ जलपान कीजिए।' ऐसा कह उन्हें आसन देकर स्वागत-सत्कार करें।

तत्पश्चात् वर को लक्ष्य कर, कन्यापक्ष का मुख्य पुरुष कहे—

ओम् आगच्छत आगतस्य नाम गृह्णाम्यायतः। इन्द्रस्य वृत्रघ्नो वन्वे वासवस्य शतक्रतोः॥ १ ॥ —अथर्व० ६।८२।१

ओम् ऋतधीतय आ गत सत्यधर्माणो अध्वरम्। अग्नेः पिबत जिह्वया॥ २ ॥ —ऋ० ५।५१।२

ऐसा कह वर को आगे मण्डप के द्वार पर लावें। उसी समय वधू भी अपनी सखी आदि के सहित आगे आकर वर को 'नमस्ते' करके, उसे गृहागण या लग्नमण्डप के समीप 'वरमाला' पहनावे। वर भी उसी प्रकार वधू के कण्ठ में 'सुन्दर माला' पहनावे। पश्चात् सब अभ्यागत नियत स्थान पर बैठ जावें।

इसके पश्चात् ''विवाह संस्कार'' के लिये संस्कार विधि का उपयोग करें, जिसका वर्णन पृष्ठ १५३ पर है।

विवाह दिवस वा विवाह की रजत/स्वर्ण जयन्ती

जिस दिन अपने विवाह का दिवस मनाना निश्चय किया हो, उससे पूर्व-दिन यज्ञ की सब सामग्री शुद्ध करके रख लें। सर्वप्रथम पति-पत्नी दोनों निम्न वचन से सुगन्धित द्रव्य शरीर पर मल शुद्ध जल से स्नान करें—

ओं तेन मामभिषिञ्चामि श्रियै यशसे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय।

—तु०—पार० २।६।११

स्नान से पूर्व पति क्षौरकर्म, लोम-नख आदि वपन करा लेवे। पत्नी भी नख कटवा लेवे। पश्चात् दोनों अपने-अपने देश की सुन्दर वेश-भूषा में यज्ञवेदी पर पूर्वाभिमुख बैठें। पत्नी पति के दक्षिण बाजू बैठे।

यज्ञ का आरम्भ, परमेश्वर का उपस्थान

तत्पश्चात् ऋत्विग्वरण कर, यज्ञ से पूर्व दोनों यथाविधि नवीन यज्ञोपवीत धारण करें। और फिर परस्पर दोनों एक-दूसरे के कण्ठ में सुगन्धित माला पहनावें।

तत्पश्चात् पति दक्षिण हाथ से पत्नी का दक्षिण हाथ पकड़के निम्न मन्त्र को बोलके परमेश्वर का उपस्थान करे—

ओं समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समु देष्ट्री दधातु नौ॥ १॥

—ऋ० १०।८५।४७

ओं स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि॥ २॥ —ऋ० ५।५१।१५

पश्चात् बृहद् यज्ञ की सम्पूर्ण क्रियाएँ पूर्णाहुति प्रकरण को छोड़कर सम्पन्न करें। उसके पश्चात् निम्न मन्त्रों से घृत व शाकल्य की पाँच आहुति देवें। होम के समय पत्नी अपने दक्षिण हाथ को पति के दक्षिण स्कन्धे पर स्पर्श करे—

मुख्य होम मन्त्राः

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय—इदं न मम॥ १॥ —ऋ० ९।६६।१९

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय—इदं न मम॥ २॥ —ऋ० ९।६६।२०

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय—इदं न मम॥ ३॥ —ऋ० ९।६६।२१

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा॥ इदं प्रजापतये—इदं न मम॥ ४॥ —ऋ० १०।१२१।१०

ओं भूर्भुवः स्वः। त्वमर्यमा भवसि यत्कनीनां नाम स्वधावन्गुह्यं बिभर्षि। अञ्जन्ति मित्रं सुधितं न गोभिर्यद्दम्पती समनसा कृणोषि स्वाहा॥ इदमग्नये—इदं न मम॥ ५॥ —ऋ० ५।३।२

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ पति घृत से, और पत्नी होमद्रव्य से दोनों जने देवें—

ओं ब्रह्म च क्षत्रं च राष्ट्रं च विशश्च त्विषिश्च यशश्च वर्चश्च द्रविणं च स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० १२।५।८

ओं पयश्च रसश्चान्नं चान्नाद्यं चर्तं च सत्यं चेष्टं च पूर्तं च प्रजा च पशवश्च स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० १२।५।१०

ओम् अभि वर्धतां पयसाभि राष्ट्रेण वर्धताम्। रय्या सहस्रवर्चसेमौ स्तामनुपक्षितौ स्वाहा॥ ३॥ —अथर्व० ६।७८।२

दम्पती-मङ्गल-होम

ओं तेन भूतेन हविषायमा प्यायतां पुनः। जायां यामस्मा आवाक्षुस्तां रसेनाभि वर्धतां स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० ६।७८।१

ओं त्वष्टा जायामजनयत्त्वष्टास्यै त्वां पतिम्। त्वष्टा सहस्रमायूंषि दीर्घमायुः कृणोतु वां स्वाहा॥ २॥

—अथर्व० ६।७८।३

ओं सं वः पृच्यन्तां तन्व१ः सं मनांसि समु व्रता। सं वोऽयं ब्रह्मणस्पतिर्भगः सं वो अजीगमत् स्वाहा॥ ३॥

—अथर्व० ६।७४।१

ओं यत्रा सुहार्दः सुकृतो मदन्ति विहाय रोगं तन्व१ः स्वायाः। अश्लोणा अङ्गैरह्रुताः स्वर्गे तत्र पश्येम पितरौ च पुत्रां स्वाहा॥ ४॥

—अथर्व० ६।१२०।३

ओम् इदं हविः प्रजननं मेऽअस्तु दशवीरꣳसर्वगणꣳस्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि। अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतोऽअस्मासु धत्त स्वाहा॥५॥

—यजुः० १९।४८

ओम् अनु त्वा माता मन्यतामनु पिताऽनु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः। सा देवि देवमच्छेहीन्द्राय सोमꣳरुद्रस्त्वावर्त्तयतु स्वस्ति सोमसखा पुनरेहि स्वाहा॥६॥ —यजुः० ४।२०

ओं ये समानाः समनसो जीवा जीवेषु मामकाः। तेषाꣳश्रीर्मयि कल्पतामस्मिँल्लोके शतꣳसमाः स्वाहा॥७॥ —यजुः० १९।४५

पितृमेध-होम

ओं पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः। अक्षन् पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् स्वाहा॥१॥ —यजुः० १९।३६

ओं पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण शतायुषा। पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै स्वाहा॥२॥

—यजुः० १९।३७

ओं सं विशन्त्विह पितरः स्वा नः स्योनं कृण्वन्तः प्रतिरन्त आयुः। तेभ्यः शकेम हविषा नक्षमाणा ज्योग्जीवन्तः शरदः पुरूचीः स्वाहा॥ ३॥ —अथर्व० १८।२।२९

ओं यदीदं मातुर्यदि वा पितुर्नः परि भ्रातुः पुत्राच्चेतस एन आगन्। यावन्तो अस्मान्पितरः सचन्ते तेषां सर्वेषां शिवो अस्तु मन्युः स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० ६।११६।३

ओम् अवन्तु नः पितरः सुप्रवाचना उत देवी देवपुत्रे ऋतावृधा। रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन स्वाहा॥ ५॥ —ऋ० १।१०६।३

विश्व-मङ्गल-होम, कुटुम्ब-कल्याण-प्रार्थना

ओं स्वस्ति मात्र उत पित्रे नो अस्तु स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः। विश्वं सुभूतं सुविदत्रं नो अस्तु ज्योगेव दृशेम सूर्यम् स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० १।३१।४

ओं योऽ३स्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तस्य त्वं प्राणेना प्यायस्व। आ वयं प्यासिषीमहि गोभिरश्वैः प्रजया पशुभिर्गृहैर्धनेन स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० ७।८१।५

ओं सम्पत्तिर्भूमितिर्वृष्टिर्ज्यैष्ठ्यं श्रैष्ठ्यं श्रीः प्रजामिहाववतु स्वाहा॥ ३॥ —पार० २।१७।९

पति-पत्नी द्वारा प्रतिज्ञाहुतियाँ

पति द्वारा—

ओं ममेयमस्तु पोष्या मह्यं त्वादाद् बृहस्पतिः। मया पत्या प्रजावति सं जीव शरदः शतम्॥ १॥ —अथर्व० १४।१।५२

पत्नी द्वारा—

ओम् इयं नार्युप ब्रूते पूल्यान्यावपन्तिका। दीर्घायुरस्तु मे पतिर्जीवाति शरदः शतम्॥ २॥ —अथर्व० १४।२।६३

दम्पति द्वारा—

ओं ये वो देवाः पितरो ये च पुत्राः सचेतसो मे शृणुतेदमुक्तम्। सर्वेभ्यो वः परि ददाम्येतं स्वस्त्ये नं जरसे वहाथ॥ ३॥

—अथर्व० १।३०।२

इसके पश्चात् यज्ञ की पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके महावामदेव्यगान का गायन करें।

तत्पश्चात् यजमान-दम्पति निम्न मन्त्रों से परमेश्वर का उपस्थान कर ऋत्विजों और उपस्थित स्त्री-पुरुषों से आशीर्वाद की कामना करें—

ओम् आ वो देवासऽईमहे वामं प्रयत्यध्वरे। आ वो देवासऽआशिषो यज्ञियासो हवामहे॥ —यजुः० ४।५

ओं सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥ —तै० आर० प्र० ८, अनु० १

यजमान-दम्पति के लिये आशीर्वाद मन्त्राः

ओम् इह गावः प्रजायध्वमिहाश्वा इह पूरुषाः। इहो सहस्रदक्षिणोऽपि पूषा नि षीदति॥ —अथर्व० २०।१२७।१२

ओं सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिः। ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितो जनः॥ —ऋ० ७।५५।५

ओं स्योनाद्योनेरधि बुध्यमानौ हसामुदौ महसा मोदमानौ। सुगू सुपुत्रौ सुगृहौ तराथो जीवावुषसो विभातीः॥ —अथर्व० १४।२।४३

ओम् इहेमाविन्द्र सं नुद चक्रवाकेव दम्पती। प्रजयैनौ स्वस्तकौ विश्वमायुर्व्यऽश्नुताम्॥ —अथर्व० १४।२।६४

ओम् इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यऽश्नुतम्। क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वस्तकौ॥ —अथर्व० १४।१।२२

पति-पत्नी पारस्पारिक अनुकूलता हेतु यज्ञानुष्ठान

वृहद् यज्ञ (पूर्णाहुति प्रकरण को छोड़कर) विधिवत् पूर्ण कर, निम्न विशेष मन्त्रों से आहुतियाँ देवें—

ओम् अव ज्यामिव धन्वनो मन्युं तनोमि ते हृदः। यथा संमनसौ भूत्वा सखायाविव सचावहै स्वाहा॥ १॥ —अथर्व० ६।४२।१

ओं सखायाविव सचावहा अव मन्युं तनोमि ते। अधस्ते अश्मनो मन्युमुपास्यामसि यो गुरुः स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० ६।४२।२

ओम् अभि तिष्ठामि ते मन्युं पाष्ण्या प्रपदेन च। यथावशो न वादिषो मम चित्तमुपायसि स्वाहा॥ ३॥ —अथर्व० ६।४२।३

ओम् अभि त्वा मनुजातेन दधामि मम वाससा। यथासो मम केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० ७।३७।१

ओम् इदं खनामि भेषजं मांपश्यमभिरोरुदम्। परायतो निवर्तनमायतः प्रतिनन्दनं स्वाहा॥ ५॥ —अथर्व० ७।३८।१

ओं येना निचक्र आसुरीन्द्रं देवेभ्यस्परि। तेना नि कुर्वे त्वामहं यथा तेऽसानि सुप्रिया स्वाहा॥ ६॥ —अथर्व० ७।३८।२

ओं प्रतीची सोममसि प्रतीच्युत सूर्यम्। प्रतीची विश्वान्देवान्तां त्वाच्छावदामसि स्वाहा॥ ७॥ —अथर्व० ७।३८।३

ओम् अहं वदामि नेत्त्वं सभायामह त्वं वद। ममेदसस्त्वं केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन स्वाहा॥ ८॥ —अथर्व० ७।३८।४

ओं यदि वासि तिरोजनं यदि वा नद्यऽस्तिरः। इयं ह मह्यं त्वामोषधिर्बद्ध्वेव न्यानयत् स्वाहा॥ ९॥ —अथर्व० ७।३८।५

ओं वाञ्छ मे तन्वं१ पादौ वाञ्छाक्ष्यौ३ वाञ्छ सक्थ्यौऽ। अक्ष्यौऽवृषण्यन्त्याः केशा मां ते कामेन शुष्यन्तु स्वाहा॥ १०॥ —अथर्व० ६।९।१

ओं मम त्वा दोषणिश्रिषं कृणोमि हृदयश्रिषम्। यथा मम क्रतावसो मम चित्तमुपायसि स्वाहा॥ ११॥ —अथर्व० ६।९।२

ओं यासां नाभिरारेहणं हृदि संवननं कृतम्। गावो घृतस्य मातरोऽमूं सं वानयन्तु मे स्वाहा॥ १२॥ —अथर्व० ६।९।३

ओम् उद्भिन्दतीं संजयन्तीमप्सरां साधुदेविनीम्। ग्लहे कृतानि कृण्वानामप्सरां तामिह हुवे स्वाहा॥ १३॥ —अथर्व० ४।३८।१

ओं विचिन्वतीमाकिरन्तीमप्सरां साधुदेविनीम्। ग्लहे कृतानि गृह्णानामप्सरां तामिह हुवे स्वाहा॥ १४॥ —अथर्व० ४।३८।२

ओं यायैः परिनृत्यत्याददाना कृतं ग्लहात्। सा नः कृतानि सीषती प्रहामाप्नोतु मायया। सा नः पयस्वत्यैतु मा नो जैषुरिदं धनं स्वाहा॥ १५॥ —अथर्व० ४।३८।३

ओं या अक्षेषु प्रमोदन्ते शुचं क्रोधं च बिभ्रती। आनन्दिनीं प्रमोदिनीमप्सरां तामिह हुवे स्वाहा॥ १६॥ —अथर्व० ४।३८।४

ओं सूर्यस्य रश्मीननु याः संचरन्ति मरीचीर्वा या अनुसंचरन्ति। यासामृषभो दूरतो वाजिनीवान्त्सद्यः सर्वाँल्लोकान्पर्येति रक्षन्। स न ऐतु होममिमं जुषाणो३ न्तरिक्षेण सह वाजिनीवान् स्वाहा॥ १७॥ —अथर्व० ४।३८।५

ओम् अन्तरिक्षेण सह वाजिनीवन्कर्की वत्सामिह रक्ष वाजिन्। इमे ते स्तोका बहुला एह्यर्वाङियं ते कर्कीह ते मनोऽस्तु स्वाहा॥ १८॥ —अथर्व० ४।३८।६

ओम् अन्तरिक्षेण सह वाजिनीवन्कर्की वत्सामिह रक्ष वाजिन्। अयं घासो अयं व्रज इह वत्सां नि बध्नीमः। यथानाम व ईश्महे स्वाहा॥ १९॥ —अथर्व० ४।३८।७

ओम् उत्तुदस्त्वोत्तुदतु मा धृथाः शयने स्वे। इषुः कामस्य या भीमा तया विध्यामि त्वा हृदि स्वाहा॥ २०॥ —अथर्व० ३।२५।१

ओम् आधीपर्णां कामशल्यामिषुं सङ्कल्पकुल्मलाम्। तां सुसंनतां कृत्वा कामो विध्यतु त्वा हृदि स्वाहा॥ २१॥

—अथर्व० ३।२५।२

ओं या प्लीहानं शोषयति कामस्येषुः सुसंनता। प्राचीनपक्षा व्योषा तया विध्यामि त्वा हृदि स्वाहा॥ २२॥

—अथर्व० ३।२५।३

ओं यथेदं भूम्या अधि तृणं वातो मथायति। एवा मथ्नामि ते मनो यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः स्वाहा॥ २३॥

—अथर्व० २।३०।१

ओं सं चेन्नयाथो अश्विना कामिना सं च वक्षथः। सं वां भगासो अग्मत सं चित्तानि समु व्रता स्वाहा॥ २४॥

—अथर्व० २।३०।२

ओं यत्सुपर्णा विवक्षवो अनमीवा विवक्षवः। तत्र मे गच्छताद्धवं शल्यइव कुल्मलं यथा स्वाहा॥ २५॥

—अथर्व० २।३०।३

ओं यदन्तरं तद्बाह्यं यद्बाह्यं तदन्तरम्। कन्यानां विश्वरूपाणां मनो गृभायौषधे स्वाहा॥ २६॥ —अथर्व० २।३०।४

ओम् एयमगन्पतिकामा जनिकामोऽहमागमम्। अश्वः कनिक्रदद्यथा भगेनाहं सहागमं स्वाहा॥ २७॥

—अथर्व० २।३०।५

ओं यथा वृक्षं लिबुजा समन्तं परिषस्वजे। एवा परि ष्वजस्व मां यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः स्वाहा॥ २८॥

—अथर्व० ६।८।१

ओं यथा सुपर्णः प्रपतन्पक्षौ निहन्ति भूम्याम्। एवा नि हन्मि ते मनो यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः स्वाहा॥ २९॥

—अथर्व० ६।८।२

ओं यथेमे द्यावापृथिवी सद्यः पर्येति सूर्यः। एवा पर्येमि ते मनो यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः स्वाहा॥ ३०॥

—अथर्व० ६।८।३

ओं यथायं वाहो अश्विना समैति सं च वर्तते। एवा मामभि ते मनः समैतु सं च वर्ततां स्वाहा॥ ३१॥—अथर्व० ६।१०२।१

ओम् आहं खिदामि ते मनो राजाश्वः पृष्ट्यामिव। रेष्मच्छिन्नं यथा तृणं मयि ते वेष्टतां मनः स्वाहा॥ ३२॥

—अथर्व० ६।१०२।२

ओम् आञ्जनस्य मदुघस्य कुष्ठस्य नलदस्य च। तुरो भगस्य हस्ताभ्यामनुरोधनमुद्भरे स्वाहा॥ ३३॥ —अथर्व० ६।१०२।३

ओम् अक्ष्यौ नौ मधुसंकाशे अनीकं नौ समञ्जनम्। अन्तः कृणुष्व मां हृदि मन इन्नौ सहासति स्वाहा॥ ३४॥

—अथर्व० ७।३६।१

तत्पश्चात पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करें, शुद्ध और पवित्र आचरण की प्रतिज्ञा करें।

नोट—*यह अनुष्ठान निश्चित रूप से दाम्पत्य जीवन को सुखी बनानेवाला है। पति-पत्नी मिलकर करें, तो मनोमालिन्य तुरन्त दूर होकर परस्पर प्रेम में वृद्धि निश्चित है। विशेष स्थितियों में उपेक्षित वा दुःखी पति या पत्नी अकेले भी इस अनुष्ठान को निरन्तर कुछ दिनों तक श्रद्धापूर्वक करें, और मन्त्रों के अनुसार अपना आचरण करके आशातीत सफ़लता प्राप्त करें।*

दान-संकल्प विधि

वैदिक संस्कृति में 'यज्ञ', 'तप' और 'दान' की बड़ी महिमा है। दान के अनेक रूप और प्रकार हैं जैसे 'ब्रह्म विद्या' का ज्ञान दान, शुभ और श्रेष्ठ विचार दान, परमार्थ अर्थात् परहित में अर्थदान, श्रमदान, भूमि दान, अन्न दान, गौ दान आदि। धार्मिक और सामाजिक संस्थाये प्रायः दान-आश्रित ही होती हैं।

जिस दिन दाता दानकर्म सम्पन्न करना चाहे, उससे पूर्व दिन दाता यज्ञ की सामग्री, दान-पत्र तथा दान द्रव्य राशि (चैक, ड्राफ्ट आदि) तैयार कर रखे।

पश्चात् यजमान [अपनी पत्नी सहित] और ऋत्विग्गण, अपने-अपने आसनों पर यथोपदिष्ट दिशाओं में स्थित हों। पत्नी, पति के दक्षिण बाजू रहे। 'प्रतिग्रहीता' अर्थात् जिसके नाम दान संकल्पित

है, वह व्यक्ति अथवा संस्थाविशेष के प्रामाणिक अधिकृत संचालक-विशेष [=मन्त्री, प्रधान, अधिकारी व्यक्ति], यज्ञकुण्ड के उत्तरभाग में दक्षिणाभिमुख स्थित हों।

ऋत्विग्वरण, सामान्य होम

पश्चात् यजमान ब्रह्मादि [ऋत्विजों] के मस्तक पर तिलक कर, गन्ध-फल, पुष्पमाला, वस्त्रादि से उनका सत्कार कर 'ऋत्विग्-वरण' यथाविधि करे। और निम्न मन्त्र बोल—

ओम् इमं वाचमभि विश्वे गृणन्तः।
आसद्याऽस्मिन् बर्हिषि मादयध्वम्॥

सब ऋत्विजों व अन्य उपस्थित सज्जनों को आसन ग्रहण करने की प्रार्थना करे।

पश्चात् सब लोग बृहद् यज्ञ के अन्तर्गत आघारावाज्यभागाहुति-पर्यन्त सब क्रिया करें।

दान-संकल्प

पश्चात् पुरोहित दाता-प्रतिग्रहीता दोनों से—

ओं शन्नो॑ दे॒वीर॒भिष्ट॑य॒ऽआपो॑ भवन्तु पी॒तये॑।
शँयोर॒भि स्र॑वन्तु नः॥ —यजुः० ३६।१२

उपरोक्त मन्त्र से तीन आचमन करावे, और दाता द्वारा दान का संकल्प करावे—

ओं तत्सत् परब्रह्मणे सच्चिदानन्दाय नमो नमस्ते। अद्य.... सर्गाब्दे, ...बैक्रमाब्दे, ...दयानन्दाब्दे, ...नाम संवत्सरे, ...अयने, ...ऋतौ, ...मासे, ...पक्षे, ...नक्षत्रे, ...लग्ने, ...तिथौ [....दिनाङ्के], ...वासरे, ...प्रदेशस्य, ...आख्ये नगरे, ...स्थाने, ...प्राङ्गणे, ...पुण्यावसरे, ...गोत्रोत्पन्नः, सपत्नीकः, ...नाम्नः पुत्रः, ...नाम्नः पौत्रः, ...नामाऽहं, स्वपितृ [-पुत्रभार्यादिस्मृत्यर्थं] स्मृतौ, ...शालानिर्माणार्थं, धर्मग्रन्थप्रकाशननिमित्तं वा.......... आख्याऽर्यसमाजाय [नाम्ना प्रसिद्धाय वेदविदुषे महात्मने वा],

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति ध्यायन्नोमितिसंज्ञितम्॥

वेदविद्भिरार्यजनैरभ्यनुज्ञातः, इदं.......रूपं.......प्रतिददामि। प्रीयतदामनेन देवः सविता परमात्मा प्रीतिभावनः॥

दान व प्रतिग्रहण

संकल्प पढ़कर यजमान 'दानपत्र या दान राशि' या वसीयतनामा आदि जो भी हो, उसे हाथ में लेकर निम्न मन्त्र से त्याग करे—

ओं भूः स्वाहा॑॥

''मैं इस 'भौतिक पदार्थ' के स्वत्व को पूर्णतः त्यागता हूँ।''

और प्रतिग्रहीता को अभिमुख होकर कहे—

प्रतिगृह्यताम्॥

और प्रतिग्रहीता '**प्रतिगृह्णामि**' वाक्य बोल, निम्न मन्त्र से दाता को आत्मीय दृष्टि से देख, माला पहिना उसका सम्मान करे—

ओं मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे।

पश्चात् निम्न मन्त्रों को बोल, दाता को 'नमस्ते' कर, दोनों हाथों से 'दान-पत्र' को स्वीकार करे—

ओं दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्या॑म् पू॒ष्णो हस्ता॑भ्यामाद॑दे॥ १॥ —यजुः० १।२४

ओम् आ मागन् यशसा संसृज वर्चसा॥ २॥

मुख्य होम मन्त्राः

पश्चात् वृहदयज्ञ की समस्त क्रियायें आघारावाज्याहुति तक करके स्थालीपाक से पाँच आहुतियाँ दानदाता यजमान दे—

ओं को॑ऽदा॒त्कस्मा॑ऽअदा॒त्कामो॑ऽदा॒त्कामा॑यादात्। कामो॑ दा॒ता काम॑ः प्रतिग्र॒ही॒ता काम॒ैतत्ते॑ स्वाहा॑॥ इदमीश्वराय—इदं न मम॥ १॥ —यजुः० ७।४८

ओं कस्त्वा॒ विमु॑ञ्चति॒ स त्वा॒ विमु॑ञ्चति॒ कस्मै॑ त्वा॒ विमु॑ञ्चति॒ तस्मै॑ त्वा विमु॑ञ्चति। पोषा॑य॒ रक्ष॑सां भा॒गो॒ऽसि स्वाहा॑। इदमीश्वराय—इदं न मम॥ २॥ —यजुः० २।२३

ओम् एमं पन्था॑मरुक्षाम सुगं स्व॑स्ति॒वाह॑नम्। यस्मि॑न्वी॒रो न रिष्य॑त्य॒न्येषा॑ं वि॒न्दते॒ वसु॑ स्वाहा॑॥ इदमाश्वरीम—इदं न मम॥ ३॥ —अथर्व० १४।२।८

ओं दि॒वो वा॑ विष्णऽउ॒त वा॑ पृथि॒व्या म॒हो वा॑ विष्णऽ उ॒रोर॒न्तरि॑क्षात्। उ॒भा हि हस्ता॒ वसु॑ना पृ॒णस्वा प्रय॑च्छ॒ दक्षि॑णा॒दोत स॒व्याद्विष्ण॑वे त्वा स्वाहा॑॥ इदंमीश्वराय—इदं न मम॥ ४॥ —यजुः० ५।१९

ओं शतहस्त समाहर सहस्रहस्त सं किर। कृतस्य कार्यस्य चेह स्फातिं समावह स्वाहा॥ इदमीश्वराय—इदं न मम॥ ५॥

यज्ञ-समाप्ति

पश्चात् बृहद्यज्ञ का शेष भाग पूर्णाहुति तक पूरा करके यज्ञ समाप्त करें।

आशीर्वाद

पश्चात् कार्यार्थ आए सज्जनों की ओर दाता-प्रतिग्रहीता दोनों अवलोकन करें। जाते समय सब जने निम्न मन्त्रों से दाता यजमान के लिए मंगलकामना करें—

ओम् इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे। पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्॥ १॥

—ऋ० २।२१।६

ओम् आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजां त्वष्टरधिनिधेह्यस्मै। रायस्पोषं सवितरा सुवास्मै शतं जीवाति शरदस्तवायम्॥ २॥

—अथर्व० २।२९।२

इति दानसंकल्प-विधिः

अन्त्येष्टि संस्कार के पश्चात् श्रद्धांजलि (अन्तिम शोक) दिवस वा पगड़ी की रस्म आदि

यद्यपि दाहकर्म और अस्थिचयन के पश्चात् मृतक के लिये कोई अन्य संस्कार या कर्म शेष नहीं रह जाता, परन्तु लोकाचार के अनुरूप प्रायः सभी गृहों में कुछ न कुछ क्रिया की जाती है। तीसरे, चौथे, सातवें, दसवें या तेरहवें दिन अन्तिम शोक दिवस (उठाला) या पगड़ी की रस्म अर्थात् उत्तराधिकार ग्रहण की रीति निभाई जाती है।

जिस स्थान पर मृतक का देहावसान हुआ हो उसे औषध मिले पानी से धो देना चाहिये। फिर अन्तिम शोक दिवस तक प्रायः सायं उसे कमरे में अग्निहोत्र करना चाहिये। विशेष आहुतियों में यजुर्वेद का ४०वाँ अध्याय लिया जा सकता है। अन्तिम शोक दिवस वाले दिन उत्तराधिकारी यजमान बन कर वृहद यज्ञ की समस्त क्रियायें ऋत्विग्-वरण से लेकर किन्तु पूर्णाहुति प्रकरण छोड़कर, विधिवत कर निम्न मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ दें—

मुख्य होम मन्त्राः

ओं वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तꣳशरीरम्। ओ३म् क्रतो स्मर। क्लिबे स्मर। कृतꣳस्मर स्वाहा॥ १॥ —यजुः० ४०।१५

ओं मृत्युरीशे द्विपदां मृत्युरीशे चतुष्पदाम्। तस्मात्त्वां मृत्योर्गोपतेरुद्भरामि स मा बिभेः स्वाहा॥ २॥ —अथर्व० ८।२।२३

ओं समुद्रं गच्छ स्वाहाऽन्तरिक्षं गच्छ स्वाहा। देवꣳसवितारं गच्छ स्वाहा ....यज्ञं गच्छ स्वाहा। ....दिवं ते धूमो गच्छतु स्वर्ज्योतिः पृथिवीं भस्मनापृण स्वाहा॥ ३॥ —यजुः० ६।२१

ओम् अनृणा अस्मिन्ननृणाः परस्मिन्तृतीये लोके अनृणाः स्याम। ये देवयानाः पितृयाणाश्च लोकाः सर्वान्पथो अनृणा आ क्षियेम स्वाहा॥ ४॥ —अथर्व० ६।११७।३

ओम् अन्तकाय मृत्यवे नमः प्राणा अपाना इह ते रमन्ताम्। इहायमस्तु पुरुषः सहासुना सूर्यस्य भागे अमृतस्य लोके स्वाहा॥ ५॥ —अथर्व० ८।१।१

ओम् अस्मै मृत्यो अधि ब्रूहीमं दयस्वोदितो३यमेतु। अरिष्टः सर्वाङ्गः सुश्रुज्जरसा शतहायन आत्मना भुजमश्नुताम् स्वाहा॥ ६॥

—अथर्व० ८।२।८

ओं मा ते मनस्तत्र गान्मा तिरो भून्मा जीवेभ्यः प्र मदो मानु गाः पितॄन्। विश्वेदेवा अभि रक्षन्तु त्वेह स्वाहा॥ ७॥

—अथर्व० ८।१।७

ओं मा गतानामा दीधीथा ये नयन्ति परावतम्। आ रोह तमसो ज्योतिरेह्या ते हस्तौ रभामहे स्वाहा॥ ८॥ —अथर्व० ८।१।८

ओम् उदीर्ध्वं जीवो असुर्न आगादप प्रागात्तम आ ज्योतिरेति। आरैक्पन्थां यातवे सूर्यायागन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः स्वाहा॥ १०॥

—ऋ० १।११३।१६

ओं नि गावो गोष्ठे असदन्नि मृगासो अविक्षत। नि केतवो जनानां न्य१दृष्टा अलिप्सत स्वाहा॥ ११॥ —ऋ० १।१९१।४

ओं मो षु वरुण मृन्मयं गृहं राजन्नहं गमम्। मृळा सुक्षत्र मृळय स्वाहा॥ १२॥ —ऋ० ७।८९।१

ओं विभक्तारं॑ हवामहे वसो॑श्चित्रस्य राध॑सः। सवितारं॑ नृचक्ष॑सम् स्वाहा॑॥ १३॥ —यजुः० ३०।४

यज्ञ समाप्ति

इसके पश्चात् बृहद् यज्ञ का पूर्णाहुति प्रकरण पूरा करके तथा यदि चाहें तो शान्तिकरण के मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ देकर पूर्णाहुति कर मृतक के प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित की जावें और मृतक की आत्मा की शान्ति व सद्गति के लिये परमेश्वर से प्रार्थना की जावे।

ओ३म् ईशा वास्यमिदꣳसर्वं यत्किञ्च जग॑त्यां जग॑त्। तेन॑ त्यक्तेन॑ भुञ्जीथा मा गृ॑धः कस्य॑ स्विद्धन॑म्॥ —यजुः० ४०।१

इस मन्त्र के पाठ से एक या दो मिनट का मौन भी शोक सभा में रखा जा सकता है।

२. उत्तराधिकार-ग्रहण-विधि

तत्पश्चात् पुरोहित उस वंश के सब सगे-सम्बन्धियों को सम्बोधित करके निम्न मन्त्र पढ़े और इसका भाव भी समझा दे—

ओं सं ग॑च्छध्वं सं व॑दध्वं सं वो मनां॑सि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे॑ संजानाना उपास॑ते॥ १॥ —ऋक् १०।१९१।२

उत्तराधिकार-प्रदान

तत्पश्चात् पुरोहित निम्न मन्त्र से उसके ज्येष्ठ पुत्र को उत्तराधिकारी घोषित करे—

तेन त्वाऽभिषिञ्चामि श्रियै यशसे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय॥ २॥

तत्पश्चात् जो सगे-सम्बन्धी आदि, पगड़ी आदि वस्त्र लाए हों, उनको पुरोहित निम्न मन्त्र से दिलवावे—

ओं येनेन्द्राय बृहस्पतिर्वासः पर्यदधादमृतम्।
तेन त्वा परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे॥

—पार०गृ०सू० २।२।७

ज्येष्ठ पुत्र निम्न मन्त्र से इनको ग्रहण करे—

ओं या आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय।
ता अहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च॥

फिर निम्न मन्त्र से अधोवस्त्र धोती [पायजामा, कमीज-कुर्ता] तथा उत्तरीय वस्त्र धारण करे—

ओं परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि।
शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये॥

और निम्न मन्त्र से उष्णीष अर्थात् पगड़ी-टोपी धारण करे—

ओं बृहस्पतेश्छदिरसि पाप्मनो मामन्तर्धेहि।
तेजसो यशसो मामन्तर्धेहि॥ १॥

उत्तराधिकारग्रहीता द्वारा परमेश्वर का उपस्थान

पश्चात् ज्येष्ठ पुत्र कहे, और पुरोहित कहलावे—

ओं यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती।
यशो भगश्च मा विन्दद्यशो मा प्रतिपद्यताम्॥ १॥

—पार०गृ०सू० २।२।२०

ओं सुनावमा रु॑हेयमस्र॑वन्तीमना॑गसम्।
शतारि॑त्राꣳस्वस्तये॑॥२॥ —यजुः० २१।७

ओम् एमं पन्था॑मरुक्षाम सुगं स्व॑स्तिवाह॑नम्।
यस्मि॑न्वीरो न रिष्य॑त्यन्येषां॑ विन्दते वसु॥ ३॥

—अथर्व० १४।२।८

ओम् अग्ने॑ गृहपते सुगृहपतिस्त्वया॑ऽग्नेऽहं गृहप॑तिना भूयासꣳसुगृहपतिस्त्वं मया॑ऽग्ने गृहप॑तिना भूयाः। अस्थूरि णौ गार्ह॑पत्यानि सन्तु शतꣳहिमाः सूर्य॑स्यावृतमन्वाव॑र्ते॥ ४॥

—यजुः० २।२७

ओम् अग्ने॑ व्रतपते व्रतम॑चारिषं तद॑शकं तन्मे॑ऽराधीदमहं यऽएवाऽस्मि सोऽस्मि॥ ५॥ —यजुः० २।२८

फिर शान्तिपाठ कर सब लोग यजमान को निम्न मन्त्र से सांत्वना देकर अपने-अपने घरों को जावें—

ओं कुर्वन्नेवेह कर्मा॑णि जिजीविषेच्छतꣳसमाः॑।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म॑ लिप्यते नरे॑॥ १॥

—यजुः० ४०।२

—:०:—

XIII. सत्सङ्गों में पठनीय कुछ प्रार्थनाएँ

प्रार्थना-१

हे सर्वाधार, सर्वान्तर्यामिन् परमेश्वर! तुम अनन्त काल से अपने उपकारों की वर्षा किये जाते हो। प्राणिमात्र की सम्पूर्ण कामनाओं को तुम्हीं प्रतिक्षण पूर्ण करते हो। हमारे लिए जो कुछ शुभ है तथा हितकर है उसे तुम बिना माँगे ही स्वयं हमारी झोली में डालते जाते हो। तुम्हारे आँचल में अविचल शान्ति तथा आनन्द का वास है। तुम्हारी चरण-शरण की शीतल छाया में परम तृप्ति है, शाश्वत सुख की उपलब्धि है तथा सब अभिलषित पदार्थों की प्राप्ति है।

हे जगत्पिता परमेश्वर! हम में सच्ची श्रद्धा तथा विश्वास हो। हम तुम्हारी अमृतमयी गोद में बैठने के अधिकारी बनें। अन्तःकरण को मलिन बनानेवाली स्वार्थ तथा संकीर्णता की सब क्षुद्र भावनाओं से हम ऊँचे उठें। काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष इत्यादि कुटिल भावनाओं तथा सब मलिन वासनाओं को हम दूर करें। अपने हृदय की आसुरी प्रवृत्तियों के साथ युद्ध में विजय पाने के लिए हे प्रभो! हम तुम्हें पुकारते हैं और तुम्हारा आँचल पकड़ते हैं।

हे परम पावन प्रभो! हम में सात्त्विक प्रवृत्तियाँ जागृत हों। क्षमा, सरलता, स्थिरता, निर्भयता, अहङ्कारशून्यता इत्यादि शुभ भावनाएँ हमारी सम्पत्ति हों। हमारा शरीर स्वस्थ तथा परिपुष्ट हो, मन सूक्ष्म तथा उन्नत हो, आत्मा पवित्र तथा सुन्दर हो, तुम्हारे संस्पर्श से हमारी सारी शक्तियाँ विकसित हों। हृदय दया तथा सहानुभूति से भरा हो। हमारी वाणी में मिठास हो तथा दृष्टि में प्यार हो। विद्या और ज्ञान से हम परिपूर्ण हों। हमारा व्यक्तित्व महान् तथा विशाल हो।

हे प्रभो! अपने आशीर्वादों की वर्षा करो। दीनातिदीनों के मध्य में विचरनेवाले तुम्हारे चरणारविन्दों में हमारा जीवन अर्पित हो। इसे अपनी सेवा में लेकर हमें कृतार्थ करें।

ओ३म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

प्रार्थना-२

हे परमश्रेयस्! तुम ही तो परमश्रेयस् हो। मुझमें जो श्रेय है वह सब आपका ही है। इसलिए तो मनुष्य जाति सबसे श्रेय है, और यही ही श्रीमान् है। आपके महायज्ञ से मेरा शरीर बना है और बन रहा है। क्षण-क्षण पल रहा है। आप ही सच्चे याज्ञिक हो। मेरी नाड़ियों के अन्दर जो रक्त बह रहा है वह (रक्त) आप ही के यज्ञ का फल है। मेरी हड्डियाँ, मेरा मांस, मेरी त्वचा, बाल, खाल, सब चर्बी और मज्जा, मेधा, वीर्य और रस तेरे ही यज्ञ से बने हैं। तेरे अमृत यज्ञ के प्रसाद, यज्ञ के शेष से जुड़ रहे हैं। फिर नाथ! यदि मेरा यह शरीर यज्ञ के लिए न बना तो राक्षस कहलाएगा।

मेरा जीवन, मेरा विचार यज्ञरूप हो। प्रभो! मेरा आहार, मेरा विचार और आचार स्वयं यज्ञ बन जाएँ, जब शरीर में बिन्दु बिन्दु तेरे यज्ञ के भाग की है, यज्ञ के शेष की है। भगवन्! मेरी इन्द्रियों पर आपका ही अधिकार हो। मेरे प्राण और प्राणबल आपके वश में हों। मेरा श्वास-श्वास तेरे नाम की माला बन जाए। मेरा अंग-अंग तेरी ज्योति का झरोखा बन जावे और मैं, मेरी आत्मा यज्ञ स्वरूप हो और मेरी ''मैं'' का बाकी जो कुछ भी है, शरीर और शरीर के सम्पूर्ण कार्य जो स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर से हों वह संसार के हृदयों के लिए यज्ञशेष बनकर व्यय हों। हे भगवन्! मैं बड़ा ही सौभाग्यशाली होऊँगा, यदि मेरी इस प्रार्थना को स्वीकार कर लो और मुझे ऐसा बना दो। मैं स्वयं ऐसा नहीं बन सकता, जैसा मेरा यह विचार है। यदि यह विचार तेरी कृपा, तेरी अमृत वर्षा से भीग जाए तो संसार को सींच सकता है, अन्यथा नहीं। इसलिए प्रभो! मेरी सफलता पूर्णतया आपके आधीन है। मैं तेरे ही आधीन, तेरा आश्रित, 'प्रभु आश्रित' हूँ। अब अपने आश्रित को अपने नाम के नाते, आप नाम की लाज पालने के लिए उबारो, निहारो।

दया करो, कृपा करो, और मेरा बेड़ा पार करो।

—महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज

प्रार्थना-३

हे नाथ, सर्वाधार, सर्वोपरि, सत्-चित्-आनन्द-स्वरूप, निराकार, निर्भय, अनूप, अजर, अमर, सृष्टि के कर्त्ता, दयालु, कृपालु, प्रतिपालक मेरे प्रभो! धन्य हो, हे दयामय! यह सब कुछ तेरी ही दया से हुआ है, तेरी ही कृपा से हुआ है। इसमें मेरा कुछ भी नहीं, तुच्छ भी नहीं। मैं स्वयं कुछ भी नहीं, तुच्छ भी नहीं। यह सब तेरे अर्पण है, तेरे अर्पण है। मुझे सदैव काल इस शुभ मार्ग के ऊपर लगाये रखो। मैं तेरी हरेक वस्तु को तेरी देन समझूँ और तेरी देन को तेरे अर्पण करने में कभी सङ्कोच न करूँ। हे प्रभो! तू उदार है, मेरी आत्मा को उदार बनाओ। मुझ गरीब निराश्रय के आप ही आश्रय हो, मुझ निमाने (मानहीन) के आप ही मान हो, मुझ निताने (तान हीन) की आप ही तान हो, मुझ नियौटे (ओट-हीन) की आप ही ओट हो। मुझ निरवलम्ब के आप ही अवलम्ब हो। मुझ निर्धन के धन आप ही हो। मैं अनपढ़ हूँ, आपके नाम रूपी धन को चाहता हूँ, मुझे भरपूर करो।

आप ही मेरे सब कुछ हो। आश्रयदाता हो, पतित-पावन हो, विश्वम्भर हो, रक्षक हो, सर्वरक्षक हो, सेवकों के तुम गुप्त रक्षक हो। व्रतपति हो, भक्त वत्सल हो। मैं गरीब असमर्थ तेरी शरणागत हूँ। खरा हूँ तो तेरा, खोटा हूँ तो तेरा। असली हूँ तो तेरा, नकली हूँ तो तेरा। खरा हूँ तो स्वीकार करो। खोटा हूँ तो खरा बनाकर स्वीकार करो, नकली हूँ तो असली बनाकर स्वीकार करो। परन्तु पिता! अवश्यमेव स्वीकार करो। मेरा बेड़ा पार करो।

मुझे असत् से सत की ओर ले जाओ, अन्धकार से अपने प्रकाश में पहुँचाओ। मुझे मृत्यु के दुःख संताप से बचाओ और अपनी अमृतमयी गोद में बिठाओ! मुझे मृत्यु के दुःखसंताप से बचाओ और अपनी अमृतगोद में बिठाओ!! मुझे मृत्यु के दुःखसंताप से बचाओ और अपनी अमृतगोद में बिठाओ!!! नाथ! यही एक याचना है, स्वीकार करो और हमारा बेड़ा पार करो। इति शम्।

—महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज

प्रार्थना-४

हे ज्ञानस्वरूप प्रभो! मेरे मन, मेरी वाणी और मेरे कर्म के अन्दर एकता प्रदान करो! एकता प्रदान करो!! एकता प्रदान करो!

मुझ गरीब निराश्रय से तूने अपना आश्रय देकर, मुझ निर्बल को तूने अपने बल देकर जन्म से अद्यपर्यन्त (आज तक) पथ-प्रदर्शन करके, नाना प्रकार की प्रतिज्ञायें ली हैं। मैं असमर्थ हूँ, तेरी चरण-शरण में आता हूँ, शीश झुकाता हूँ, तू व्रतपति है, मैं अपूर्ण हूँ। तू परिपूर्ण है, मेरे व्रतों की रक्षा करो। मेरी प्रतिज्ञाओं को पूर्ण करो। मुझे अपना पूर्ण विश्वास दो—अटल विश्वास दो। मेरी आत्मा को पूर्ण संतुष्टि दो। मैं तुझे जानूँ, तुझे मानूँ। तुझ से माँगू, तुझ से पाऊँ। तेरे सिवाय किसी और को अपना उपास्य देव न ठहराऊँ। जब जब भी मेरी शुभकामना हो, तुझ से ही पूर्ण कराऊँ। किसी और के आगे हाथ न फैलाऊँ। एक मात्र तुझ से ही पूर्ण कराऊँ। किसी और के आगे हाथ न फैलाऊँ। एक मात्र तुझे ही अपना आश्रय बनाऊँ। मेरा आप पर कोई ज़ोर नहीं। कोई मेरा पुण्य नहीं, प्रताप नहीं, कोई दान नहीं, कोई अधिकार नहीं। केवल तेरी करुणा! तेरी करुणा!! तेरी दया! तेरी दया!!! मैं माँगता हूँ पिता! तुझ से तेरी कृपा, तेरी कृपा। मैं छोड़ता हूँ अपने आपको तेरी दया के ऊपर। तेरी दया! तेरी दया!! तेरी दया!!! मेरे जीवन को आदर्श बनाओ, निष्कलंक जीवन बनाओ पाप कमज़ोरियों से रहित करो। कुचेष्टा, कुसंस्कार दूर बसें। दुर्वासनाओं को दग्ध करो। अपने नाम का ध्यान दो, अपनी भक्ति का दान दो, अपनी पूजा का अधिकार दो। अपनी जन-सेवा का अधिकार दो, मुझे संसार के हर प्रकार के ऋण से उऋण करो। मुझे सद्बुद्धि और सुमति प्रदान करो जिससे मैं शुद्ध अन्त:करण से कह सकूँ—तेरी इच्छा पूर्ण हो!! मैं अपने आपको तेरी इच्छा के अधीन कर दूँ। मेरी इच्छा, इच्छा न रहे। तेरी दिव्य इच्छा को बरतूँ। अपनी इच्छा को, इच्छा न समझूँ। तू ही मेरा सच्चा गुरु और आचार्य है। 'जो तुद भावे सोई भलीकार, तू सदा सलामत निरंकार'। मुझे तेरी कृपा दरकार।

—महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज

प्रार्थना-५

हे तेजस्वरूप बलों के भण्डार! परम पिता! आप अकेले ही अपनी सामर्थ्य से जगत् के रचने वाले, पालन पोषण करने वाले और रक्षा करने वाले हैं। हम आपको छोड़कर किसी और की पूजा न करें। जो मान और अधिकार आपके लिए है, वह मान और अधिकार और किसी के अर्पण न करें। हे अपार दयामय दातार! आप सब से ऊँचे हैं। आपकी महिमा अकथ है। आपका न वार है, न पार। भगवन्! आप का दिया हुआ धन, ऐश्वर्य हमारे लिए सुखकारी हो। आप का दिया हुआ मान हमारे लिए सदैव सुखकारी हो। संसार को धारण करने वाली शक्ति, आकाश, प्राण, पृथिवी, अग्नि, जल ये सब आनन्ददायक हों। सत्य, धर्म कल्याणकारी नियम, प्रशंसा के योग्य गुण कर्म, सब ही शान्ति के देने वाले हों। आप का दया रूपी हाथ सदैव हमारे सिरों पर रहे। विद्वानों की संगति से हम सुखी रहें। आप कल्याणकारी साधनों से हमारी रक्षा करते रहें। हमारी बुद्धि, हमारा मन, आयु और प्राण, ज्ञान और कर्मेन्द्रियाँ सब जगत्-हितकारी कामों के अर्पण हों।

हे सुप्रकाश और अनन्त तेज वाले प्रभो! आप तेजस्वरूप हैं। अपनी कृपा से हम में भी तेज धारण करो। हमें तेजस्वी बनाओ। हम अपने आप को कभी भी दीन हीन और क्षीण न समझें। किसी और के आगे हाथ न फैलायें। हे अनन्तवीर्य परमात्मन्! आप वीर्यवान हो। वही सर्वोत्तम बल हममें स्थिर कीजिए। हम भी पराक्रमी, शक्तिशाली और वीर बनें। आप दुष्टों पर क्रोध करने वाले हैं उनको ताड़ना करने वाले और पापियों को तपाने वाले हैं। हमें भी उन के प्रति मन्यु धारण कराओ। हे सहनशील परमदेव! आप मित्र शत्रु सज्जन और दुष्ट स्वभाव जनों की प्रत्येक प्रकार की बुरी चेष्टाओं को सहन करते हैं। हमें भी आप सहन करने की सामर्थ्य दें। हे पिता! हम पुत्रों को भी तेजस्वी, वर्चस्वी, ओजस्वी, पराक्रमी, बलवान्, वीर्यवान् और सहनशील बनाइये। हमारी यही कामना है। इस को पूर्ण करो। पूर्ण करो। पूर्ण करो। ओ३म् शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

—महात्मा ताराचन्द आर्य

प्रार्थना-६

हे सर्वरक्षक! प्राण स्वरूप। दुख विनाशक! सुख स्वरूप प्रभो! आप हमें प्राणों से प्यारे हैं। हमारे प्राणाधार और प्राणनाथ हैं। आप दुर्गुणनाशक, सुखदाता और आनन्दप्रदाता हैं। हे दीनबन्धो! दीनदयाल! दयामय परमात्मन्! आप अपनी असीम कृपा से हर समय और हर प्रकार से हमारी रक्षा करते हैं। जब हम सो जाते हैं, तो आप ही हमारे प्राणों के सहायक और रक्षक होते हैं। जागृत अवस्था में भी आप हर प्रकार से हमारी सहायता करते हैं। चलते फिरते, उठते बैठते, हर अवस्था में आपकी दया का हाथ हमारे सिरों पर रहता है। आप ही हमारे जीवनाधार हैं। आप सर्वत्र अपने सेवकों के दुखों को दूर करते और सुख प्रदान करते हैं। आपके भक्तों को न दुख सताता है, और न क्लेश होता है। वह न कंगाल होते हैं और न पीड़ा सहन करते हैं। वह न दुखों से घबराते और न सुखों पर इतराते हैं। क्योंकि वे प्रत्येक दशा में और प्रत्येक अवस्था में अपने आपको आपके कृपाधन से मालामाल पाते हैं। आप प्रत्येक स्थान में और प्रत्येक समय में विद्यमान हैं। आप मान वाले और ज्ञान वाले हैं। आप हमारे हृदय के भावों को जानते हैं। हमारा कोई भी भेद आप से छिपा नहीं है। आप सर्वोत्तम शुद्ध और पवित्र हैं। इसलिए हमारे जीवनों को शुद्ध निष्पाप और पवित्र बनाइये। आप सकल शुभ गुणों की खान हैं। हमें भी शुभ गुण प्रदान कीजिये। भगवन्! ऐसी कृपा करो कि हम सर्वदा प्रतिदिन आपके गुणों का ध्यान करें। उनसे प्रीति लगायें और अपने जीवन में धारण करें। हम दोनों काल, दिल खोलकर आपसे वार्तालाप करें।

दयालु पिता! हमारी बुद्धि सर्वदा स्वच्छ और पवित्र रहे। असत्य, अविद्या, अन्धकार, और अज्ञान से बच कर, हम सत्य विद्या, प्रकाश और ज्ञान की ओर निरन्तर बढ़ते चलें। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के अपने जीवन लक्ष्य को कभी न भूलें और आपके सच्चे अमृत आर्य-पुत्र बन कर के, इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये यत्नवान रहें। यही आपकी पवित्र सेवा में हमारी प्रार्थना है, स्वीकार करो॥ ३ ॥

ओ३म शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

—महात्मा ताराचन्द आर्य

प्रार्थना-७

हे अग्निस्वरूप परमेश्वर! आपने संसार को बना कर मनुष्यों को सन्मार्ग दिखलाने के लिये वेदों का प्रकाश किया। वेद आप का सुन्दर काव्य है। वह मानो आपका जीवन चरित्र है। आपके गुणों का प्रकाश है। इसीलिये हम मनुष्यों के जीवन चरित्र को छोड़ कर आपके जीवन चरित्र वेद का नित्य स्वाध्याय करें। इस जीवनदायक अमृत का प्रतिदिन पूर्ण प्रीति और श्रद्धा से सेवन करते रहें। स्वाध्याय के बिना आपकी उपासना अधूरी है। स्वाध्याय से ही ज्ञान चक्षु खुलते हैं। इसी से आत्मा का अन्धकार नाश होता है और स्वाध्याय से ही पाप और पुण्य का यथार्थ ज्ञान मिलता है। स्वाध्याय ही परम तप है।

प्रभो! बल दो कि हम इस परम तप का आदर सम्मान करें। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना-सुनाना तथा तदनुकूल आचरण करना अपना धर्म समझें।

हे ज्ञानी पिता! हमारे ज्ञान नेत्र खोल दीजिए। जिससे आपके प्रेम मय स्वरूप को देख कर हृदय प्रसन्न हो जाय, आपकी भक्ति का रस पान करके तृप्त हो जाय। हे सर्वान्तर्यामी! आप हमारे पापों को, बुरी कामनाओं को और दुष्ट सङ्कल्पों को जानते हैं! आप हमारे हृदय की मैल को, इन्द्रियों की निर्बलताओं और त्रुटियों को जानते हैं परन्तु इतना जानते हुए भी, हे पतित पावन! आप हमारा परित्याग नहीं करते। पूर्ववत् भोग पदार्थ दिये जाते हैं। धन्य-धन्य हे दयामय भगवान्! आप धन्य हो।

हे दयासिन्धो! हम आपकी पवित्र-शरण में आ गये हैं। हमें पाप के राक्षस से बचाओ, पुण्य का मार्ग बतलाओ। हमें पुण्यात्मा बनाओ। बलवान हृदय और निर्मल चरित्र बनाओ। दुखी हृदय को शान्त करो। हमारा जीवन मिठास भरा हो। मन पापों की मैल से साफ़ हो। शुद्ध और निर्मल हो। हमारे हृदय में आप का वास हो। इसमें आपकी ज्योति का प्रकाश हो। हम आपके मंगल स्वरूप को देख कर अपना जीवन सफल करें। विषय-विकारों को त्याग कर आपके सच्चे भक्त और दास बनें। आपके अपार प्यार और कृपा के भागी बनें। यही आज आपकी सेवा में प्रार्थना करते हैं। आप इसको स्वीकार करें।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

—महात्मा ताराचन्द आर्य

प्रार्थना-८

हे परमसुन्दर, परम-मनोहर, परम-कल्याणकारी, परमानन्द, परमपिता परमेश्वर! आप मुझ अणुरूप, अल्पज्ञ, चेतन आत्मा के भीतर-बाहर सर्वत्र सबमें अनादिकाल से विद्यमान हो। हे सच्चिदानन्द! आप विराट-अग्नि-विश्व-हिरण्यगर्भ-वायु-तैजस-ईश्वर-आदित्य, प्राज्ञ और मेरे सच्चे पिता-माता-भाई-बन्धु-सखा-गुरू-आचार्य-राजा न्यायाधीश और विधाता हो। आप अनन्त ज्ञान- विज्ञान-बल-पराक्रम-आनन्द व दया से युक्त हो। आपने ही अरबों-खरबों सौर मण्डलों की बड़ी बुद्धिमत्ता से रचना की है। अनादि काल से आप सृष्टि की उत्पत्ति-स्थित-प्रलय करते आ रहे हो। नाना प्रकार के अन्न-दूध-फल-फूल वनस्पति व औषधियों को आप ने ही रचा है। समस्त प्राणियों के कर्मों का ठीक-ठाक फल आप ही प्रदान करते हो। प्रतिक्षण असंख्य क्रियाएं करते और असंख्य जीवों का विभिन्न योनियों में आना जाना आपके निर्देशानुसार ही होता है। हे परमदयालु परमेश्वर! मैं आपकी शरण में आया हूँ, कृपा करके मेरी समस्त चिन्ताएँ-भय-शोक, दुख-दुर्गुण-दुर्व्यसन-विघ्न-बाधाएँ-बन्धनों को दूर कर अपनी शरण में में ले लीजिए। हे सर्वाधार, सर्वेश्वर-सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी प्रभो! मैं करोड़ों वर्षो से नाना प्रकार की योनियों में भटकता हुआ व नाना प्रकार के क्लेशों कष्टों में पिसता हुआ आ रहा हूँ, हे ममतामयी माँ! मुझे इस आवागमन के चक्कर से छुड़वा कर अपनी आनन्दमयी गोद में लेकर आनन्दित कर दीजिए। हे प्रकृति, सृष्टि व जीवों के अधिष्ठाता प्रभो! आप ने ही ये अमूल्य अंग-प्रत्यंग, ज्ञानेन्द्रियां, कर्मेन्द्रियां प्रदान की है। मुझे ऐसी शक्ति व मेधा, बुद्धि प्रदान कीजिए जिससे मैं अपने समस्त अंगो व इन्द्रियों को अधर्माचरण से रोककर यशस्वी बलवान व पवित्र बना सकूँ, चित्त को राग द्वेष से पृथक् कर सकूँ, चित्त को एकाग्र अवस्था में ला सकूँ। चित्त में पड़ें कुसंस्कारों को नष्ट कर इसी जन्म में जीवनमुक्त अवस्था को प्राप्त कर अपना व अन्यों का कल्याण कर सकूँ। हे सर्वशक्तिमान् पापनाशक प्रभो! संसार के प्रत्येक पदार्थ से आपकी सत्ता का आभास होता है। मुझ पर ऐसी कृपा कीजिए कि आप पर मेरा दृढ़ विश्वास व प्रेम हो और मैं आपकी भक्ति एवं यज्ञादि शुभकर्मों में निरन्तर निमग्न रहूँ।

—डॉ० मुमुक्षु आर्य

जन्मदिवस तालिका

क्रम	नाम	सम्बन्ध	तिथि/नक्षत्र	तदनुसार ई० तिथि
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)

बृहद् यज्ञ (सामान्य प्रकरण) के लिए आवश्यक पदार्थ

१. गोमय से लिपी यज्ञ वेदी अथवा लोहे या ताँबे की चादर से बना यज्ञ कुण्ड।
२. आटा, पिसी हल्दी, कुंकुम वेदी सज्जा (रंगोली) के लिए।
३. पर्याप्त आसन/पाटला कुण्ड के चारों ओर बैठने के लिए।
४. पर्याप्त मात्रा में उपयुक्त समिधा।
५. पर्याप्त घृत (तपाया हुआ)।
६. ऋतुनुकूल शुद्ध हवन सामग्री।
७. स्थालीपाक (मीठा भात, खिचड़ी, खीर, लड्डू, मोहनभोग आदि)।
८. दीपक तथा बाती के लिए रुई, माचिस आदि।
९. यज्ञपात्र यथा आचमन पात्र आचमनी सहित, घृत-पात्र, हविपात्र, स्थालीपाक (चरु) पात्र, जल-पात्र (लोटा), जल-प्रोक्षण पात्र, स्रुवा, अगरबत्ती पात्र, धूपबत्ती पात्र, बड़े हत्थेवाली चम्मच, थाली, कटोरी, आदि।
१०. कपूर, धूपबत्ती, अगरबत्ती।
११. मिट्टी या धातु के जल से भरे चार कलश, आम्र पल्लव तथा नारियल सहित।
१२. यज्ञोपवीत, चार अंगोछे।
१३. संस्कार वा लोकाचार में काम आनेवाले विशेष द्रव्य तथा पदार्थ।
१४. पुरोहित/ऋत्विज/ब्रह्मा के लिए दक्षिणा, द्रव्य, वस्त्र, नारियल, सुगन्धित मालाएँ आदि।

वेदमाता की स्तुति

ओं स्तुता मया वरदा वेदमाता प्र चोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्। आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्॥ १ ॥

—¥ÍßüÔ 19.71.1

Âýöé ·ëÂæâÚ (×æ) ×ðÚUè ÃæÚUæ (ßÚUÎæ) ßÚUÎæÙè (ßðÎ×æÌæ) ßðÎ-×æÌæ, ÁôÂýöé ·¤ê ·¤ËØæâÙè ßæÌæè ãñU, ©Uâ·¤ÕØãU (SÌéÌæ) SÌéçÌ ·¤ê »§üãñUÐ ØãU ßðÎßæÌæÂýýÙØ·¤×æÚUß ·¤Ô (Âý¿ôÎØ-Ìæ×÷) Âý»çÌ ·¤ê ¥õÚUâæÂýôçÚUÌ ·¤ÚUÙðßæÜè, ¥õÚU (ÂæßÙæÙè) ÂçßæÙè ·¤ôÂçß ·¤ÚUÙðßæÜèãñUÐ ØãU âÕ·¤Ô (¥æØé¼ñ) ©U•æ× ¥æØé, (ÂýæÌæ×÷) àæç¢ÌÂ, (ÂýÁæ×÷) ©U•æ× â‹ÌæÙ/ÂýÁæ (Âàæé×÷) Âàæé¥ô (·¤èç̇Ü×÷) ØàæÂ, (¼ýçßæ×÷) ÏÙ-ÏæØ, °ðEØüçÎ, (ÕýræßÚ¿üâ×÷) ÕýrÌðÁâðØæÂ ·¤ÚUð, ÌÍæ (×sØ×÷) ×éÛæð (ÕýræÜô·¤×÷) ÕýrÜô·¤/¥æÙ‹Î ÏæÌ (Ì•ßæ) Îð·¤ÚU (ßýÁÌ) çSÍÚU ·¤ÚUðÐ

—×ãUæ^×æ »ôÂæÜU SßæÙè âÚUSßÌè

ओ३म्

मातुश्री धनदेवी केशवराम धर्मार्थ वैदिक ट्रस्ट बरेली (उत्तर प्रदेश) द्वारा आंशिक अनुदान-सहयोग से प्रकाशित साहित्य—

		मूल्य *
1.	Daily Prayer	Rs. 35/-
2.	Human Rights & The Vedas	Rs. 40/-
3.	वेद स्वाध्याय प्रदीपिका (प्रथम खण्ड)	Rs. 100/-
4.	वेद स्वाध्याय प्रदीपिका (द्वितीय खण्ड)	प्रकाशनाधीन
5.	वेदोक्त कर्मकाण्ड दर्पण	Rs. 80/-
6.	The Eternal Religion of the Mankind—Vedic Dharma (Tract)	For Free Distribution

* डाक व्यय अतिरिक्त

वेदोक्त कर्मकाण्ड दर्पण

म० गोपाल स्वामी सरस्वती

वेदोक्त कर्मकाण्ड दर्पण

HANDBOOK OF VEDIC CEREMONIES

आदित्य प्रकाशन

गुड़गाँव/नई दिल्ली